CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

8·1

श्री

# एकावली-परिणय

## महाकाव्य

रचयिता

पण्डितश्रीबदरीनाथझा

धर्मसमाजसंस्कृतकालेज

मुजफ्फरपुर

प्रकाशक

मैथिली-साहित्य-पत्र कार्यालय

दड़िभङ्गा

सन १३४६ साल

मूल्य डेढ़ टाका।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# प्राक्कथन

हिन्दीमे कहबी छैक—"हाथ कंगन को आरसी क्या"? प्राक्कथन, भूमिका, दू शब्द, इत्यादिक प्रथाक प्रयोजन की? पुस्तक पाठकक हाथमे अछि, पुस्तकक भाग्य पाठकक ऊपर निर्भर अछि, विवेकी विद्वान् गुण-दोषक विवेचना स्वयं करताह। बहुतो भूमिका-लेखक पुस्तक-प्रणेताक प्रशंसामे अतिशयोक्तिक दोषी होइत छथि—जाहि अतिशयोक्तिसँ पढ़निहारक मनमे भूमिका-लेखकक नीरक्षीरविवेकक योग्यताक प्रति सन्देह उत्पन्न भए जाइत छैक। प्रस्तुत पुस्तकक प्रशंसा करब अनावश्यक—कारण जे पढ़निहार स्वयं गुणामुग्ध हएताह ताहिमे सन्देह नहि। पण्डित श्रीबदरीनाथझा लब्ध-प्रतिष्ठ विद्वान् छथि। अध्यापनमे प्रचुर यश लाभ कएलैन्हि अछि। संस्कृत आओर मैथिली काव्यरचनामे सिद्धहस्त छथि। एहन मान्य व्यक्तिक कृति प्रस्तुत अछि—एकर प्रशंसामे अतिशयोक्तिक सम्भावना नहि।

मैथिली-साहित्य-भांडारमे विविध प्रकारक रत्न संचित अछि; नाटक, गीत, आख्यायिका, महाकाव्य, इत्यादि। वर्तमान कालमे वँ साहित्यक बहुत अंशक पूर्ति भए रहल अछि। ई युग जल्दीक युग थिक, व्योमयानमे उड़बाक, मोटरकारमे चलबाक, डाकगाड़ीमे पड़एबाक, तार पठएबाक, टेलीफोनसँ गप्प करबाक। एही प्रकारेँ पठन-पाठनोमे आब पहिने जकाँ समय व्यतीत करबामे केओ तत्पर नहि। दश बारह वर्षक अध्ययनक पश्चात् जीविकोपार्जनक चिन्तासँ ग्रस्त भए युवकक अध्ययन समाप्त-प्राय भए जाइत छैक। एहन युगमे महाकाव्य पढ़बाक अवकाश कम्मे लोककेँ भेटइत छैक। संसारक आओरो भाषा सभमे आब महाकाव्य-प्रणेताक संख्या कम। तथापि साहित्यक एकप्रधान अङ्ग महाकाव्य थीक। श्रीबदरीबाबू एहि महाकाव्यक रचना कए मैथिली-भाषा-भाषीक बड़ उपकार कएलन्हि अछि। छन्दक विलक्षणता, भाषाक चमत्कार, भावक सरसता, कल्पनाक सौन्दर्य—इत्यादि गुण एहि काव्यमे भेटत। सहृदय पाठक स्वयं देखि लेथु। अलमति विस्तरेण।

१३-३-४२ श्रीअमरनाथझा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# भूमिका

प्रिय मैथिलीविज्ञवृन्द !

हमरा पूर्वंहुसँ अपन मातृभाषामे कोनो काव्य लिखवाक इच्छा छले, तावत् एहिठाम सन १३४४ सालक आश्विन वदि तृतीया शनिमे मैथिलीसाहित्य-परिषदक वार्षिक अधिवेशन भेल, ताहिमे सुहृद्वर्गक अनुरोध ओ प्रोत्साहनसँ मैथिलीमे एक महाकाव्यरचनाक प्रतिज्ञा कएलहुँ। आइ ताही अपन मातृभाषाक पहिल रचनाकेँ अपने लोकनिक समक्ष उपस्थित कए देलहुँ अछि।

आव एहि रचनाक गुण-दोषविवेचनाक भार सर्वथा सहृदय समालोचक-समुदायपर निर्भर अछि, तेँ ताहि प्रसङ्ग हमर किछुओ कहव अनधिकारचर्चा होएत, से जानि ग्रन्थमे अनुक्त ओ अवश्य-ज्ञातव्य ग्रन्थसम्वन्धी-विषयमात्रक एतए उल्लेख करैतछी।

एहि काव्यमे श्रीदेवीभागवत-(षष्ठस्कन्ध, २० मसँ २३म अध्याय पर्यन्त) प्रसिद्ध कथाभाग, शृङ्गाररस अङ्गी, प्रायः आन सभ रस अङ्ग, पन्द्रह सर्ग, १६२६ पद्य, धीरोदात्त चन्द्रवंशीय राजा एकवीर नायक, स्वीया धीरा रैभ्यराजतनुजा एकावली नायिका, तथा वृत्तान्तानुसारी एकावलीपरिणय ग्रन्थक नाम स्थापित भेल अछि। एवं इतिहाससँ अतिरिक्त सूर्य. चन्द्रमा, प्रदोष, रजनी, अन्धकार, चन्द्रिका, प्रभात, मध्याह्न, आतप, छवो ऋतु, तपोवन, नदी, राजधानी, नीति, युद्धयात्रा, सैन्यव्यूह, समर, स्त्री, ब्रह्मचारी ओ गृहस्थक कर्तव्य, शैशव, कैशोर, यौवन, जरा, तथा नायक–नायिकाक विप्रलम्भ तदुत्तर सम्भोग आदि कतोक विषय प्रोचनार्थ वर्णित अछि।

संस्कृत काव्यक छायायोगक व्यतिरेकेँ भाषाकाव्यमे चमत्कारिताक सम्भावना नहि बूझि, एहिमे बहुत ठाम तकर योजना भेल अछि, ओ मैथिली-साहित्य-पत्र विद्वन्मण्डलद्वारा जकर निर्धारण करओलक मैथिली भाषाक ताही शैलीकेँ आदर्श मानल गेल अछि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूर्ण सावधान रहलहु पर एहि काव्यक भाषामे संस्कृतातिरिक्त भाषान्तरक पूर्व—प्रचलित दुइ चारि गोट शब्द पड़िए गेल, जकर वास्तविक परिमार्जनक आब दोसरहि संस्करणमे सम्भव । सम्प्रति एतबए कहि सन्तोष करैत छी, जे जाहिभाषामे भाषान्तरहुक शब्दराशि मिश्रित हो सएह जीवित भाषा कहबैत अछि ।

आशा अछि जे हमर शारीरिक तथा पारिवारिक अस्वास्थ्य, पराधीनताक कारणेँ उचित अवकाशक अभाव, ओ प्राथमिक-प्रवृत्तिमूलक अनभिज्ञताकेँ विचारि सहृदय समालोचकजन सदयता-पूर्वक अत्रत्य त्रुटिक क्षमा अवश्य करताह ।

अन्तमे हम 'मैथिली-साहित्य-पत्र'—सञ्चालक—समितिकेँ, विशेषतः ओकर सम्पादक प० श्रीरमानाथझा, एम्. ए., बी. एल्. काव्यतीर्थकेँ अनेकानेक धन्यवाद दैत छिऐन्हि, जनिक सदुद्योगसँ एहि ग्रन्थक निर्माण तथा मुद्रण भेल अछि । इति शुभम् ।

संस्कृत कालेज,
मुजफ्फरपुर ।
चैत्र वदि द्वितीया सोम,
सन १३४७ साल ।
(२५-३-४०)

विनीत निवेदक
**श्रीबदरीनाथझा**

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# एकावली[1]–परिणय,

## मैथिली-महाकाव्य,

### प्रथमसर्ग,

राधा–पद–पङ्कज–नख-मिश्रङ्क[2]-
प्रतिविम्बित जनिकर अलक-अङ्क।
से विघ्न हरथु हरि एक-बेरि,
हमरहु दिसि करुणा-कटाक्ष फेरि ॥१॥

कवि-कोविद की नहि वाणि ! देवि !
फल पाओल[3] चरण अहाँक सेवि।
मनमे पसारि प्रतिभा–प्रसाद,
करु दूर हमर रचना-प्रमाद ॥२॥

स्त्री-जातिक नैहर पक्षपात,
स्वाभाविक जग नहि कतए ख्यात ?
तेँ नियत अनुग्रह, बन्धु जानि,
करतीह मैथिली दया-खानि ॥३॥

गुरु-जननी-जनक-पदारविन्द-
सन्निधि कए निज-मानस-मिलिन्द।
'एकावलि-परिणय' रसिक-श्राव्य,
बनबथि कवि 'बदरीनाथ' काव्य ॥४॥

---

1 ई कथा श्रीदेवीभागवत षष्ठस्कन्धमे अछि।

2 मृगाङ्क। रूपकानुप्राणित–विप्रलम्भशृङ्गारसँ पोषित भावध्वनि। एहीरूपेँ अगहुँ ऊह करब उचित। ग्रन्थविस्तरभयसँ प्रत्येकक उल्लेख नहि करब।

3 एहि काव्यमे ए तथा ओ कतहु एकमात्रिको बुझबाक थीक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पूर्ण सावधान रहलहु पर एहि काव्यक भाषामे संस्कृतातिरिक्त भाषान्तरक पूर्व-प्रचलित दुइ चारि गोट शब्द पड़िए गेल, जकर वास्तविक परिमार्जनक आब दोसरहि संस्करणमे सम्भव। सम्प्रति एतबए कहि सन्तोष करैत छी, जे जाहिभाषामे भाषान्तरहुक शब्दराशि मिश्रित हो सएह जीवित भाषा कहबैत अछि।

आशा अछि जे हमर शारीरिक तथा पारिवारिक अस्वास्थ्य, पराधीनताक कारणेँ उचित अवकाशक अभाव, ओ प्राथमिक-प्रवृत्तिमूलक अनभिज्ञताकेँ विचारि सहृदय समालोचकजन सदयता-पूर्वक अत्रत्य त्रुटिक क्षमा अवश्य करताह।

अन्तमे हम 'मैथिली-साहित्य-पत्र'-सञ्चालक-समितिकेँ, विशेषतः ओकर सम्पादक प० श्रीरमानाथझा, एम्. ए., बी. एल्. काव्यतीर्थकेँ अनेकानेक धन्यवाद दैत छिऐन्हि, जनिक सदुद्योगसँ एहि ग्रन्थक निर्माण तथा मुद्रण भेल अछि। इति शुभम्।

संस्कृत कालेज,
मुजफ्फरपुर।
चैत्र वदि द्वितीया सोम,
सन १३४७ साल।
(२५-३-४०)

विनीत निवेदक
श्रीबदरीनाथझा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# एकावली[1]–परिणय,

## मैथिली-महाकाव्य,

### प्रथमसर्ग,

राधा–पद–पङ्कज–नख-मिश्रङ्क[2]-
प्रतिविम्बित जनिकर अलक-अङ्क।
से विघ्न हरथु हरि एक-बेरि,
हमरहु दिसि करुण-कटाक्ष फेरि ॥१॥

कवि-कोविद की नहि वाणि ! देवि !
फल पाओल[3] चरण अहाँक सेवि।
मनमे पसारि प्रतिभा–प्रसाद,
करु दूरि हमर रचना-प्रमाद ॥२॥

स्त्री-जातिक नैहर पक्षपात,
स्वाभाविक जग नहि कतए ख्यात ?
तेँ नियत अनुग्रह, बन्धु जानि,
करतीह मैथिली दया-खानि ॥३॥

गुरु-जननी-जनक-पदारविन्द-
सन्निधि कए निज-मानस-मिलिन्द।
'एकावलि-परिणय' रसिक-श्राव्य,
बनबथि कवि 'बदरीनाथ' काव्य ॥४॥

---

1 ई कथा श्रीदेवीभागवत षष्ठस्कन्धमे अछि।

2 मृगाङ्क। रूपकानुप्राणित–विप्रलम्भश्रृङ्गारसँ पोषित भावध्वनि। एहीरूपेँ अगहुँ ऊह करब उचित। ग्रन्थविस्तरभयसँ प्रत्येकक उल्लेख नहि करब।

3 एहि काव्यमे ए तथा ओ कतहु एकमात्रिको बुझबाक थीक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जत 'विद्यापति' 'गोविन्ददास'
'मनबोध' 'उमापति'-कृति-विकास।
अछि 'राम'-'रमापति'-सुकवि-'लाल'-
'नन्दीपति'-आदिक गीत रसाल ॥५॥

बुध 'हर्षनाथ', कवि 'भानु'-'चन्द्र'-
प्रतिभासँ जे अछि अति अतन्द्र।
तत विफल हमर रचना-प्रयास,
रवि-रहितहुँ की खद्योत [1]भास ? ॥६॥

उपहास-मात्र फल रहत हाथ,
होएब कदापि न यश-सनाथ।
ई सोचि छलहुँ उत्साह-हीन,
सुर-भारतीक परिचरण-लीन ॥७॥

सुनि[2] सामाजिक-उलहन अनेक,
कएलहुँ तथापि साहस कनेक।
धएलहुँ अछि अभिनव-पथ सशङ्क,
जेँ कठिन पखारब दोष-पङ्क ॥८॥

भाषाक हमर ई काव्य आद्य,
होएत कोन परि रसिक-स्वाद्य।
देखिअ न आन कोनो उपाय,
केवल सहृदयक दया सहाय ॥९॥

परदोष निरखबामे अबाध्य,
दुर्जन परितोखब ककर साध्य।
अथवा हुनकहु होएत तोष
जेँ रहते पुनि दुर्वार दोष ॥१०॥

---

1 दृष्टान्त। 2 वस्तुध्वनि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



ई मार्ग विषम अछि निराधार,
छी हमहुँ अपरिचित चलनिहार।
हो आवश्यक अति गतिक वेग,
तेँ खसब उचित प्रत्येक डेग ॥११॥
जँ जाइन्हि भावक साम्य सूझि,
संस्कृत-काव्यक प्रतिबिम्ब बूझि।
तँ करथु सुधीजन समाधान,
भाषा-सौन्दर्यक गति न आन ॥१२॥

❀ ❀ ❀

अछि तीर्थ-राज लग[1] अतिविचित्र,
तमसा[2]-यमुना-सङ्गम पवित्र।
दर्शनहुँ हरए जे त्रिविध-ताप,
प्राणीक दूरि कए सकल पाप ॥१३॥
छल योगी-यति-युत जत ललाम,
कानन धर्म्मक विश्राम-धाम।
सभ ऋतुसँ सेवित विटपिपुञ्ज,
जत अलि-कुल-गुञ्जित-लता-कुञ्ज ॥१४॥
तापस-सहवासेँ भए विरागि,
सभ जीव बसए जत वैर त्यागि।
मुनि-होम-धूमसँ बनि विशाल,
वारिद बरिसए जत सतत-काल[3] ॥१५॥
जत निग्रह मानसमे यमीक,
मालिन्य कलेवरमे तमीक।
व्याकरणहिँ विग्रह-सन्धि-काज,
कवितहिमे दुर्घट-बन्ध राज[4] ॥१६॥

---

1 प्रयागसँ उत्तर। 2 प्रसिद्ध-नदी।
3 उत्प्रेक्षा प्रतीयमाना। 4 परिसङ्ख्या।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



विरहेँ व्याकुल जत चक्रवाक,
जड़मात्र जीव सदिखन अवाक।
एकान्त अधोगति पानिहीक,
द्विजराज-विमुखता पद्मिनीक ॥१७॥
सपनहुँ नहि सञ्चर जतए राग,
अवलम्ब-हीन नहि रोष जाग।
मद-मोह गलल जनि पानि नोन,
ईर्ष्या-लोभक पुनि कथा कोन[1] ॥१८॥
जत तृण-पर्णोटज रम्य हर्म्य,
व्यवसाय तपस्या परम-धर्म्य।
भोजन-पदार्थ फल, मूल, कन्द,
आराधनीय आनन्द-कन्द[2] ॥१९॥
बह[3] मन्द सुरभि शीतल समीर,
बह सरिता दुहु दिसि विमल-नीर।
जत करए वटुक नित साम-गान,
नन्दन-वनहुक जे हर गुमान ॥२०॥
कखनहु नारायण ताहिठाम,
कारणवश तजि वैकुण्ठधाम।
विरही शङ्करक कथाऽनुसार,[4]
कमलाक सङ्ग कएलन्हि विहार ॥२१॥
तहिखन सिरजल सुत 'एकवीर'[5]
रुचिमे मनोज, बलमे समीर[6]।
त्रिभुवन-पालन-ओजस-अमेय,
जनि शम्भु उमामे कार्त्तिकेय ॥२२॥

---

1 उपमा-अर्थापत्ति-सङ्कर ओ काव्यलिङ्गसँ संसृष्टि। 2 भगवान्। 3 क्रमशः बहब गमन ओ स्पन्दन थीक तेँ यमक। 4 ई कथा अनुपयुक्त जानि छोड़ल। 5 कथानायक। 6 अतिशयोक्ति-उपमा-संसृष्टि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



ओ उदितमात्र शिशु-पूर्ण-चन्द,
कमला-प्राची-दुख-तम अमन्द
हरि, हरि-चकोर-दृग दए प्रमोद,
रचलन्हि अवनी-रजनी-विनोद[1] ॥२३॥

अंशांश जनिक त्रैलोक्य जीव,
पावथि महिमा अद्भुत अतीव।
गुण-गौरव तनि तनयक अपार,
बरनैत सकथि के पावि पार ॥२४॥

❀ ❀ ❀

शिशु छाड़ि चलए वैकुण्ठ-लोक,
कहलैन्हि जखन उत्तम-श्लोक[2]।
वात्सल्य-विवश-हृदया नितान्त,
कर जोड़ि रमा बजलीह "कान्त ! ॥२५॥

"अपनेक तनय ई कतए जाए,
ककरा लग बनमे रहत, हाए !
सन्तान कुरूपो हो, तथापि,
तेजथि न पिता माता कदापि ॥२६॥

"[3]ई तँ अछि मदनहुसँ अनूप,
प्रियतम ! अहीँक सुषमानुरूप।
तेँ करु करुणा करुणानिधान !
शिशु-सहित चलू चढ़ि गरुड़-यान" ॥२७॥

सुनि वचन रमाक रमा-निवास,
कहलन्हि "प्रेयसि ! मन जनु उदास
करु, धरु धैरज, भवितव्य-बात
बुझि, कातरताकाँ करिअ कात ॥२८॥

---

1 साङ्गरूपक। 2 विष्णु। 3 अर्थापत्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



"पूजा न देव, पितरो न पानि,
नहि अतिथि अपुत्रक अन्न, जानि
स्वीकार करथि[1], नहि होअ स्वर्ग,
उत्साह-रहित रह प्रजा-वर्ग ॥२९॥

"घर लाग सून, गुनि पिण्ड-बाध,
दम्पतिक आधि मन हो अगाध।
तनयक बिनु निष्फल सकल राज्य,
जनि हुतवह-बिनु हुत बहुत आज्य ॥३०॥

"अयि प्रिये! तेजि तेँ कार्य-भार,
सुत-सुख बिनु जीवन बुझि असार,
सहि विविध 'ययाति'[2]क तनय क्लेश,
तप उग्र करथि 'तुर्वसु'[3] नरेश ॥३१॥

"अछि तनिक मनोरथ-पूर्ति काज,
एही शिशुकाँ देबाक आज।
कए धीर हृदय देखू यथार्थ,
की नहि सज्जन त्यागथि परार्थ[4]? ॥३२॥

"बलि राज्य, मांस शिवि, कर्ण चाम,
जीवन दधीचि, भूलोक राम
तेजल जत पर-उपकार काज,
तत हमरा की नहि स्वार्थ लाज? ॥३३॥

भूलोक शब्द अर्थान्तर क उपस्थापक न जाइत अछि। अतः आयेहुल साम्राज्य' आदि दोसर शब्द चाही

"प्रेयसि! हमरा पालक कहाए,
लोकक विपत्ति नहि सहल जाए।
जनितहिँ छी जेँ तनु धए अनेक,
कएलहुँ महिमे लीला कतेक ॥३४॥

---

1 दीपक। 2 नहुषक द्वितीय पुत्र। 3 यदुक छोट भाए, शुक्रक दौहित्र।
4 अर्थान्तरन्यास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



"त्रैलोक्य हमर भ्रूभङ्ग देखि,
काँपय भयसँ मन प्रलय लेखि।
पालिअ हमही जग-जीव-जाल,
हमरे सुतकेँ की करत काल ? ॥३५॥

"जँ नहि पूरब हम भक्त-काम,
तँ हमर सुयश की शशि-ललाम" ?
ई कहि रहस्य नव-नीरदाभ,
पद्मँहि परिबोधल पद्मनाभ ॥३६॥

सुत छोड़ि ततहि करुणा-निकेत,
भएगेल विदा कमला-समेत।
अति वेग खगेशक पीठलग्न
पहुँचल, छल जत नृप ध्यान-मग्न ॥३७॥

घनश्याम, चतुर्भुज, दानवारि,
बाहर भीतर तुर्वसु निहारि।
कर जोड़ि प्रणाम करैत घूमि,
झट काटल तरुसम पड़ल भूमि ॥३८॥

हरि-दर्शनसँ तप सफल मानि,
तनु पुलकित, लोचन बहल पानि।
आनन्देँ नहि रहि सकल चूप,
गद्गदस्वर लागल कहए भूप ॥३९॥

"हे देव ! दयासागर ! रमेश !
दर्शन दए कएलहुँ दूरि क्लेश।
कत[1] तुच्छ हमर तप अणु-समान,
ओ ई फल कत पर्वत-महान !! ॥४०॥

---

1 विषम।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



"अपने छी निर्गुण,[1] गुणाधार
निष्क्रिय, जगपालन-करणिहार।
निर्लेप, भक्तजनतानुरक्त,
नीरूप, विविध-अवतार-सक्त ॥४१॥

"निर्भय, पद्मा-भ्रू-भङ्ग-भीत,
सम-दृष्टि, असुर-रिपु, देव-मीत।
जग-आदि, अनादि, अनन्त, अन्त,
अज्ञेय, बुद्धि-गोचर तुरन्त ॥४२॥

"अपनहिँ विधि, हरि, हर भए, समस्त
जग सिरजिअ, पालिअ, करिअ अस्त।
स्थावर जङ्गम अछि जत पदार्थ,
छी विश्वरूप तन्मय यथार्थ ॥४३॥

"गुण, महिमा, लीला, रूप, भेद,
अपनेक सकथि नहि बरनि वेद।
धए रहथि मौन, दुर्वचविशेष,
बुझि अओर शारदा-सहित-शेष ॥४३॥

"संसार-निरत सहजहिँ अजान,
के जानि बरनि वा सकए आन ?
तेँ ई साहस अनुचरक एक,
की छमब न करुणा कए कनेक ? ॥४५॥

"अपवर्गहुसँ मन कए निवृत्त,
छी सुतक हेतु हम तपप्रवृत्त।
गोविन्द[2] ! जीव जड़ विषय-अन्ध
नहि देखथि माया-विषम-बन्ध" ॥४६॥

---

1 विरोधाभास। 2 अर्थान्तरन्यास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



ई स्तुति सुनि हरि तनिकाँ उठाए,
दुहु करसँ लेलन्हि उर लगाए।
छथि[1] के एहन कारुणिक आन,
जे भावहुँ जन कृतकृत्य जान ॥४७॥

कर-कमल परसि अवनीश-माथ,
मृदु-वचन उचारल लोक-नाथ।
"नरपाल! कठिन तप तेजु आब,
हमरहु लखि जन की दुःख पाब? ॥४८॥

"देवालए ईप्सित वर अहीँक,
आएल छी देखू सङ्ग श्रीक।
विधिहुक कर-कल्पित-अचलसेतु[2]
हम तोड़ल आइ अहाँक हेतु ॥४९॥

"कमलहिँ सिरजल जे सुत, महीप!
अछि से तमसा-सङ्गम- समीप।
एकाकी राखल विपिन माँझ,
लिअ जाए न यावत होए साँझ ॥५०॥

"होएत शम्भुसन[3] ओ उदार,
विद्याक प्रजापति-सम अगार।
सुरगुरुकाँ बुद्धिक बलेँ जीति,
शुक्रहुकेँ देत सिखाए नीति ॥५१॥

"इन्द्रक सन पाबि महा-विभूति,
कए रहत जगतमे एक जूति।
हैहय[4] क्षत्रियवंशक निदान,
होएत भानुसम भासमान ॥५२॥

---

1 काव्यलिङ्ग। 2 अदृष्टलेख। 3 उपमा। 4 एकवीरक नामान्तर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



"केओ रिपु रहत न समर थीर,
तनि नाम धरब तेँ 'एकवीर'।
परिहरि प्रजाक ओ दुःख-पाँक,
निर्मल बिस्तारत यश अहाँक ॥५३॥

"अनुभवि सुत-सम्पति-सुख रसाल,
पहुँचब अनन्तपद अन्तकाल"।
ई कहि अन्तर्हित विष्णु भेल,
भूपालक विषम विषाद गेल ॥५४॥

'तुर्वसु'क मोद से कहए पार[1],
जे नापि सकए जल जलधिधार।
करबामे वा क्षम हो विशेष,
जे तारागण-गणना अशेष ॥५५॥

जे[2] पाँतर-पथिकक तरु विशाल,
जे नाव महोदधि डुबक काल।
जे मरु-मण्डलमे अमृतवृष्टि,
से ओहि नरेशक तनय-सृष्टि ॥५६॥

तत्कालहिँ शिशु तकबाक हेतु,
चढ़ि यान चलल नरपाल-केतु।
रथ-पथ छल विषम,[3] तथापि गेल
सानन्द, मनोरथ-मग्न भेल ॥५७॥

❀ ❀ ❀

बीचहिँ एकाकी शिशु निहारि,
गन्धर्व 'चम्प' रथ महि उतारि।
दुहु करसँ त्वरित उठाए लेल,
दयिताक अङ्कमे मुदित देल ॥५८॥

1 आक्षेप। 2 निदर्शना। 3 विभावना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



गन्धर्व-बधू 'मदनालसा'क,
आह्लाद- शिथिल छल चित्त-चाक[1]।
पति-पुत्र-सहित सुर-गज-समान,
ओ चढ़लि शची-सनि[2] जाए यान ॥५६॥

उड़ि गेल गगन वेगेँ विमान,
जे निरखि भेल गरुड़ो विमान[3]।
जनि तरणि सिन्धु, नभ-सरणि[4]-पार,
पलमे पहुँचल अमरेन्द्र-द्वार ॥६०॥

सुर-राज-सभामे कए प्रवेश,
वैसल नमाए शिर लए निदेश।
नेनाकाँ इन्द्रक आगु राखि,
उपलब्धि-कथा गन्धर्व भाखि ॥६१॥

पूछल महेन्द्रसँ हाथ जोड़ि,
"दिअ, देव ! हमर सन्देह तोड़ि।
ई शिशुकाँ राखी सुत बनाए
की नहि ? से अपने कहलजाए ॥६२॥

"हम छी अपुत्र तेँ लोभ भेल,
शिशु छल असहाय उठाए लेल।
अपनेकाँ नाथ ! त्रिकाल सूझ,
के दोसर एहन विषय बूझ" ? ॥६३॥

किछु ध्यान-लीन भए तखन शक्र,
अवलोकि सकल वृत्तान्त-चक्र।
आश्चर्य-चकित-लोचन यथार्थ,
कहलन्हि गन्धर्व-निवारणार्थ ॥६४॥

---

1 चक्र। 2 उपमा। 3 विगतगर्व। 4 मार्ग।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



"सुनु चम्पक ! शिशुक रहस्य बात,
तुर्वसु नृप-विपति-तमी-प्रभात[1]
करबाक हेतु ई सिरजि बाल,
राखल बनमे श्रीपति कृपाल ॥६५॥

"ओ जाए रहल छथि ततए भूप,
शिशु राखि आउ झट अहाँ चूप ।
नहि तँ जानू निश्चय अनर्थ,
साहसक कठिन फल-भोग व्यर्थ" ॥६६॥

से सुनितहिँ उपजल हृदय-कम्प,
तेँ विकल बाल लए चलल चम्प ! ।
राखल ओही थल त्वरित जाए
भय-योगहिँ लोलुपता पड़ाए[2] ॥६७॥

❀ ❀ ❀

भुज, जाँघ, नयन, पुनि पुनि अवाम[3]
राजाक फड़कि कह सफल काम ।
बाटहिँ भेटल घट भरल-वारि[4],
पाकल फलसँ तरु नमल-डारि ॥६८॥

जागल दावानल दहिन भाग,
रिपु-वंशहिँ जनि निज तेज लाग ।
अनुकूल वायु, खग-मृग-प्रचार,
मग भेल सगुन सभ बारबार ॥६९॥

छन नरनाथक बीतल जतेक
पथ, उत्कण्ठासँ युग ततेक[5] ।
उत्सुक-लोचन-खञ्जन घुमैत,
सभ ठाम गेल शिशुकाँ तकैत ॥७०॥

1 वैधर्म्य-रूपक । 2 अर्थान्तरन्यास । 3 दहिन । 4 समुच्चय । 5 निदर्शना ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



खन हो मनमे, "वनमे बहूत,
सञ्चर श्वापद जत मृत्युदूत।
तत सम्भव शिशु वचवाक कोन ?
की बाट पड़ल रह कतहु सोन[1] ? ॥७१॥

"पच्छिमहुँ रवि उग, हो शिशिर आगि
कर्कशता गिरि बरु सकथि त्यागि।
भए जाए उष्ण हिम, अचल वात,
हो किन्तु हरिक नहि मृषा वात[2] ॥७२॥

"ईश्वरक वचन जँ हो असत्य,
तँ मानि सकत के वेद सत्य ?
अघटित-घटना की भक्त-हेतु,
नहि करथि दयामय गरुड़-केतु[3]" ॥७३॥

ई यावत अवधारथि नरेश,
रथ तावत पहुँचल तट-प्रदेश।
झट उतरल नारायण मनाए,
शिशुकाँ ताकल कानन समाए ॥७४॥

सरिता-सङ्गम-तट विपिन-मध्य,
कालहुक कल्प भरि जनु अवध्य[4]।
निश्शङ्क खेलि-संलग्न बाल,
दूरहिसँ देखल भूमिपाल ॥७५॥

सौन्दर्यक निधि[5], सुषमाक खानि,
तेजक आश्रय, प्रतिभाक मानि।
अवलम्ब प्रसादक एकमात्र,
ओ छल कुमार सुकुमार-गात्र ॥७६॥

---

1. दृष्टान्त। 2 निदर्शना। 3 विष्णु। 4 उत्प्रेक्षा। 5 रूपक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जन्मक आन्हर[1] जनि अरजि आँखि,
उत्सुक-गन्ता जनि पाबि पाँखि।
अति निर्धन जनि निधि-कुम्भ देखि,
उन्मद मयूर जनि जलद पेखि ॥७७॥

तहिना महिपति आनन्द-बौड़ि[2],
लेलन्हि उठाए शिशु अङ्क दौड़ि।
विकसित-मुख-पङ्कज चूमि चूमि,
नाचल चारु दिसि घूमि घूमि ॥७८॥

बहि गेल नयन दुहु सलिल-धार,
सन्तप्त हृदय कएलक तुषार[3]।
चतुरो जन के तहिकाल आन,
तनि मनक उमङ्ग-तरङ्ग जान? ॥७९॥

जहिना कुसुमाकरसँ रसाल[4],
इन्द्रायुधसँ अम्भोद-जाल।
रवि-मण्डलसँ प्राची-विभाग,
नव-यौवनसँ ललनानुराग ॥८०॥

नूतन-पयोद-धुनिसँ मयूर,
जल-खग-कलरवसँ नदी-पूर।
चन्द्रातपसँ कैरव-समूह,
रण-धीर-अधिपसँ सैन्य-व्यूह ॥८१॥

पञ्चम-स्वरसँ कोकिल-कदम्ब,
पावस-प्रवेशसँ तरु-कदम्ब[5]।
चन्दन-वनसँ गिरि-मलय राज,
तहिना सुतसँ ओ महाराज ॥८२॥

1 उपमा। 2 उन्मत्त भए। 3 शीतल। 4 मालोपमा। 5 यमक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तखनहिँ नभ-दुन्दुभि उठल बाजि[1],
ऊपरसँ बरिसल कुसुम-राजि ।
सुर-ललना मङ्गल-गीत गाबि,
नाचलि अपूर्व आमोद पाबि ॥८३॥

सङ्गहिँ[2] दिग्वृन्दक तन्निमित्त
जीवक भए गेल प्रसन्न चित्त ।
ओ अनिल-सहित नीरज विकास,
पुनि उज्ज्वल अनल-समेत भास ॥८४॥

तनय गोद लए मोद-विवश नृप चढ़ल जाए रथ,
सोचल मनसे भेल वचन भगवानक अवितथ ।
चलल नगरदिसि अश्व पाबि सारथिक इसारा,
वायु-वेगसँ लाँघि शैल कानन जल-धारा ॥८५॥

इति प्रथम सर्ग[3]

1 समुच्चय । 2 सहोक्ति । 3 यद्यपि संस्कृतेतर महाकाव्यमे विश्रामक नामान्तर कहल अछि, किन्तु स्पष्ट बुझबाक हेतु हम सर्गहीक उल्लेख कएल ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# द्वितीयसर्ग

[1]तावत पश्चिम–जलधि-तट, नभसँ उतरल श्रान्त ।
सन्ध्यावन्दन करए जनु, कर्मठ नलिनी-कान्त ॥१॥
दिनभरि दौड़ल रौदमे, व्याकुल वाजी जानि ।
मिहिर वारि-निधि-तीर जनु, आनल पिअवए पानि ॥२॥
किंवा भए [2]ब्रह्मर्षिसुत, साक्षी कर्मक जानु ।
प्रतिदिन सेबल [3]वारुणी, पतित भेल तेँ भानु ॥३॥
जांनक जनक [4]कश्यप स्वयं, लोकवेदमे ख्यात ।
से यदि सेबथि वारुणी, तँ की अद्भुत बात ? ॥४॥
स्वच्छो रवि रागी बनल, परसि प्रतीची[5]-अङ्ग ।
होथि विरक्तो की न जन, विषयी वनिता-सङ्ग[6] ? ॥५॥
अनुरागी लखि सूर्यकेँ, तेजल किरण-कलाप ।
जनि[7]व्यसनी-भूपालकेँ छाड़ए शौर्य-प्रताप ॥६॥
गलित-तेज भए गेल रवि, लोक-विलोचन-कम्र ।
अधिकार-च्युत होथि जनि, राज-पुरुष-जन नम्र ॥७॥
वैरि तिमिर-मण्डल मिहिर, बढ़इत लखि तत्काल ।
प्रतीकार-असमर्थ [8]जनि, भेल क्रोधसँ लाल ॥८॥
जे अति तपबथि जीवकेँ, क्षणिक पाबि अधिकार ।
तनिक अन्तगति [9]बुझबइत, भानु डुबल जलधार ॥९॥
डुबितहिँ रविक विशालतम, भेल तमक साम्राज्य ।
धर्मक लोपहिँ होए जनि, जग पाखण्डक राज्य ॥ १०॥

---

1 उत्प्रेक्षा । 2 कश्यप । 3 पश्चिम दिशा । 4 मुनि ओ मद्यप । 5 पश्चिम दिशा । 6 समासोक्तिभित्तिक अर्थान्तरन्यास । 7 उपमा । 8 उत्प्रेक्षा । 9 निदर्शना ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कमलिनीक पति-विपति लखि, भेल कमलमुख म्लान ।
ते ँ अशरण-मधुकर-निकर, धुनि-छलसँ जनि कान ॥११॥

मधु-भण्डार-सरोरुहक[1] दल-कवाड़ मुनि गेल ।
बाहर भिक्षुक-अलि-कुलक, कोलाहल ते ँ भेल ॥१२॥

खग अकुलाए कुलायसे[2], कनइत गेल समाए ।
असुर-राज्यमे जनि अमर, गिरि-गह्वरहिँ नुकाए ॥१३॥

अवसर उचित उलूक लखि, हर्षित बाहर भेल ।
अभिमानी आक्रमण कए, काकक बदला लेल ॥१४॥

विरह आधि चलवाक श्रम, दुखद छले मगमाँझ ।
व्याकुल कएलक पथिककेँ, आबि रतौन्ही साँझ[3] ॥१५॥

वचन-अमृत दूतीक पिबि, सहचर-मदन-समेत ।
चललि मुदित अभिसारिका, प्रिय-सङ्केत-निकेत ॥१६॥

वासकसज्जा दिवसभरि, ताकल दयितक बाट ।
भए निराश साँझहिँ मही, मुरुछि पड़लि तजि खाट ॥१७॥

विकसित पति-आगमन सुनि, मन प्रोषितपतिकाक ।
जनि वसन्त-आरम्भ गुनि, कुसुम लवङ्गलताक[4] ॥१८॥

घर घर चतुर विलासिनी, लेसल मङ्गल-दीप ।
आढ़ति कए अरिआति जनु[5], आनल मदन महीप ॥१९॥

विप्र[6] पाठ तप कएल पुन, क्षत्रिय नीति-विचार ।
क्रय-विक्रय-लेखा वणिक, वृषल द्विजक परिचार ॥२०॥

रहितहुँ नयनक तिमिर बढ़ि, जग आन्हर कए देल ।
अहङ्कार ममकार ओ इन्द्रजाल जनु खेल ॥२१॥

---

1 रूपक। 2 खोँतामे। 3 समाधि वा समुच्चय। 4 उपमा।
5 उत्प्रेक्षा। 6 तुल्ययोगिता। 7 विशेषोक्ति-विभावना-उपमा-सङ्कर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



वरुण-दिशा-मुखमे[1] कएल, रजनी निकट विचारि।
नवल राग सिन्दूर जनि, सन्ध्यासखी सम्हारि ॥२२॥

अन्धकार-योगेँ बनल, विमलो गगन मलान।
जनि माया-सम्बन्धसँ, ब्रह्म जीव-अभिधान[2] ॥२३॥

रविक अस्त गेलेँ गगन, उडुक बढ़ल अतिभास।
जनि कंसारि-परोक्षमे, भूतल कलिक विकास ॥२४॥

घोर तिमिर आक्रमणसँ, तेजल दिशा विभाग।
महामोह उद्रेकसँ, देही यथा विराग ॥२५॥

व्योम भूमि वन गिरि नदी, आदि पदार्थ जतेक।
देल छनहिमे तरुण तम, नील रंग कए एक[3] ॥२६॥

नव-नागरि प्रिय-दोष लखि, सखी-वचन दए कान।
महि-सम्मुख मुख-कमल कए तानल भौँह कमान[4] ॥२७॥

साजि सेज घर दीप दए, कए सोड़ह शृङ्गार।
सखी-सङ्ग बैसलि बधू, पतिक प्रतीक्षेँ द्वार ॥२८॥

केलि-कुञ्जमे कामिनी, दूतिक सङ्गहिँ जाए।
कान्त विलम्बहुँ पावि नहि, घूरलि घर पछताए[5] । २६॥

सखी-सङ्ग तरुणी-गणक, व्यङ्ग्य वचन सविलास।
तखन परस्पर भेल कत, मृदुल मधुर परिहास ॥३०॥

तिमिरक अत्याचार जनि, सुनितहिँ लोहित भेल[6]।
जाच करक इच्छेँ शशी, उदय-शैल चढ़ि गेल ॥३१॥

उगितहिँ चन्द्रक रहल नहि, तिमिरक ओ घन-भाव।
एके रङ्ग सदा रहए, जगमे ककर प्रभाव[7] ? ॥३२॥

---

1 रूपक-श्लेष-उत्प्रेक्षा-सङ्कर। 2 नाम। एतएसँ उपमा। 3 तद्गुण। 4 धनुष। 5 विप्रलब्धा नायिका। 6 उत्प्रेक्षा। 7 अर्थान्तरन्यास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कएलन्हि भूतल विमल विधु, सुधाधारसँ धोए।
शुचि-शासनसँ नीति-रत, जनि नव-राजा होए[1] ॥३३॥

कुमुद-समेत दशो दिशा[2], विकसित शशिक इजोर।
जन-लोचन-सङ्गहिँ तथा, प्रमुदित भेल चकोर ॥३४॥

कोक शोक-सागर डुबल, कामुक विरहक ताप।
लोक रोक बिनु जनु नरक, पड़ल कुकर्म-प्रताप[3] ॥३५॥

कुमुद-कोश[4]-कारा-निलय-बान्हल रविक निदेश।
अलिकुलकाँ सानन्द झट, कएलन्हि खोलि निशेश[5] ॥३६॥

तुहिन-शीतलो चन्द्र-रुचि, देल विरहिकेँ दाह।
दैव विमुख भेलेँ जनक, नीको कर अधलाह[6] ॥३७॥

प्राची-मुख-चन्दन-तिलक, रजनी-रति-रस-कन्द।
तृषित-चकोरी-दृग-अमृत[7], गेल गगनमे चन्द ॥३८॥

तखनुक के कवि कहि सकए, युव-जन-हृदयाह्लाद।
अनुभव-गोचर जनिक नहि, सपनहुँ ब्रह्मास्वाद[8] ॥३९॥

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

तखनहि तुर्वसु-नरपतिक, दूत आबि वृत्तान्त।
कहल, मचल हलचल सगर-नगर उछाह नितान्त ॥४०॥

तीव्र-तपस्यासँ तनय, पावि हमर भूपाल!
अबइत छथि ई बूझि के, दौड़ल नहि तत्काल? ॥४१॥

जत आन्हर नाङर-सहित चलल मार्ग अगुआए।
तत आनक चलबाक पुनि, कथा कहल की जाए[9] ॥४२॥

नेना दौड़ल कूदि कए, ठेङा धएने बूढ़।
केओ रहल न घर युवा, भए उत्साह-विमूढ़ ॥४३॥

---

1 उपमा। 2 माला-सहोक्ति। 3 तुल्ययोगिता ओ उपमा। 4 रूपक। 5 समासोक्ति। 6 विभावना-अर्थान्तरन्यास। 7 रूपक। 8 आक्षेप। 9 अर्थापत्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



त्यागि चलल जपतप यती, बनिआँ सभ दोकान ।
बिथरल पोथी छात्र-गण, गूढ़-मन्त्र मतिमान[1] ।।४४।।

बटगवनी मल्लार मिलि, गबइत सुधि बिसरैत ।
चललि सकल कुलकामिनी, मानस मोद भरैत ।।४५।।

कुच-नितम्ब-भारेँ बिकलि रहितहुँ झटकारैत[2] ।
वारवधूजन चललि मग, युव-जन-हृदय हरैत ।।४६।।

बिदा भेल सेना सकल, जे छल नृपपुर आन ।
सचिव-पुरोहित-गुरु-सहित, सेनापति परधान ।।४७।।

सखी-सङ्ग दासी-सहित, गुरुजनकाँ अगुआए ।
चललि मनोरथ-रथ चढ़लि, रानी देव मनाए ।।४८।।

आबि नगर बाहर सबहुँ भेल क्रमहिँ पुनि ठाढ़ ।
अनुखन तकइत मार्गदिसि, मन उत्कण्ठा गाढ़ ।।४९।।

रथक शब्द सुनि दूरसँ, सागर-रव-गम्भीर ।
जनले छल तेँ भेल नहि, ककरो हृदय अधीर ।।५०।।

देखल दूरहिँ सबहुँ जन, भूपति-यान अबैत ।
खसल पलो नहि बीचमे, हयके निकट लबैत ।।५१।।

देखि भूमि पति-पूर्ण-विधु, तत शिशु-शशकक सङ्ग ।
उमड़ल लोक-समुद्र ओ, बढ़ल उमङ्ग-तरङ्ग[3] ।।५२।।

उठल बाजि सङ्गहिँ सकल-बाजन विविध-प्रकार ।
पुरवासी सभ मिलि कएल, जय-जयकार-उचार ।।५३।।

जनसमूह प्रमुदित-नयन-विकसित-कमलक ढेरि ।
नृपतिक पूजा हेतु जनि, अरपल एकहि बेरि[4] ।।५४।।

---

1 तुल्ययोगिता। 2 विभावना। 3 साङ्गरूपक। 4 रूपकोत्प्रेक्षा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



बहुत दिवसपर नृप निरखि, कृश-तनु तेज-निधान।
सभक मोद मन नोर दृग, भरल तुमुल-धुनि कान[1] ॥५५॥

उतरि ततहि रथसँ नृपति, उत्सुकतावश भेल।
जनि मुमूर्षुकेँ अमृत-घट, रानीकेँ शिशु देल ॥५६॥

रानी अनुभाव जन्समे, प्रथमहिँ ई आनन्द।
पुनि पुनि चूसल तृषित-मन, सुत-मुख-शारद-चन्द ॥५७॥

पूछल पतिसँ, 'नाथ ! कत, पाओल की कए यत्न।
अतुल अलौकिक गुणक निधि, सब-विधि ई शिशुरत्न'? ॥५८॥

कहल भूप, 'भगवान प्रभु, करुणासिन्धु उदार।
देलन्हि अपनहिँ ई प्रिये ! तनुज सिरजि निज-दार' ॥५९॥

कहइत वनवृत्तान्त पुनि, रानी-तनय-समेत।
कए प्रणाम गुरुजनक लए आशिष चलल निकेत ॥६०॥

जाति-अवस्था-कार्य-गुण-सम्बन्धक अनुसार।
कए भूपक सत्कार सभ, पाओल प्रतिसत्कार ॥६१॥

चिरविरहेँ अवनीपतिक, जे छल शोभाहीन।
सएह पुरी अमरावती—सुषमा कएलक छीन ॥६२॥

कोठापरसँ भूपतिक, ऊपर लावा फूल।
वरिसाओल पुरबालिका, सुरबाला—समतूल ॥६३॥

छल यद्यपि ओ राजपथ, पुरक बहुत विस्तीर्ण।
किन्तु तखन जनसङ्घसँ, भेल परम सङ्कीर्ण ॥६४॥

कोनहुना जे लखि सकल, पथ चलइत महिनाथ।
सफल-नयन निजजन्म से, मानल भाग्यसनाथ ॥६५॥

---

1 तुल्ययोगिता।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



मन्द मन्द नरपति क्रमहिँ, पहुँचल सिंहद्वार।
पथ तकइत छल भवन जत, लोचन खोलि कबाड़[1] ॥६६॥

सुयश पराक्रम भाग्य तप, भूपालक भरि-बाट।
उच्च-मधुर-सुरसँ सकल, गावि सुनाओल भाट ॥६७॥

पूर्ण-कलश दधि मीन द्विज, गणिका निरखि नरेश।
वनिता-सुत-अनुचर-सहित, कएलन्हि भवन प्रवेश ॥६८॥

गुरु-पत्नी बान्धववधू, कुल-वृद्धा द्विज-नारि।
परिछि गेल लए हरषि घर मङ्गल-गीत उचारि ॥६९॥

सजल-नयन कुलदेवता–निकट राखि उपहार।
नृप-दम्पति सुत लए कएल, स्तुति नमि[2] वारंवार ॥७०॥

"जय गिरिपतिनन्दिनि ! शिवे ! करुणा-खानि भवानि !
करिअ शिशुक रक्षा अपन-शरणागत-जन जानि ॥७१॥

"कएलक ककर न जगत हित, तुअ अनुकम्पा अम्ब !।
अछि अवसर सम्प्रति हमर, की तत उचित विलम्ब ? ॥७२॥

"देल दयामय देखि दुख, जे ई सुत श्रीनाथ।
तकर पालनक भार सभ, अपनहीँक अछि हाथ" ॥७३॥

अओरो जत छल जाति-कुल-समुचित शुभ-व्यवहार।
कएल सकल सम्पन्न तत, दम्पति प्रमद-अपार ॥७४॥

कए प्रणाम आशिष बितरि, कुशल पूछि अनुरूप।
सभकाँ तत सम्मानि पुनि, गेल सभागृह भूप ॥७५॥

रहितहुँ बहुदासी-जनक, अपनहिँ शिशु लए अङ्क।
सखीसङ्ग रानी चललि, वास-भवन निश्शङ्क ॥७६॥

---

1 रूपकोत्प्रेक्षा। 2 नमस्कार कए।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



स्नेहेँ दुहु कुच-कलशसँ, वहइत दूधक धार।
मुदित पिआओल नृप-वधू, सुतकाँ वारंवार ॥७७॥

प्रसव-वेदना बिनहिँ सुत, पाबि देव-समतूल।
भूपति-वनिता दैवकाँ, मानल अति-अनुकूल ॥७८॥

हर्षेँ तखनुक तनि मनक, दशा कहल नहि जाए।
चित्तवृत्ति यतिजनक जनि, ब्रह्मानन्द समाए[1] ॥७९॥

जय जयशब्द सुनैत नृप, सभाभवनमे पैसि।
राज्य-भार गहि लेल पुनि, सिंहासनपर बैसि ॥८०॥

नीति-निपुण मन्त्री नृपक, दोगुन कोश प्रताप।
कएल वढ़ाए, सुनाए से, पाओल कीर्ति-कलाप ॥८१॥

वारवधू नाचए मधुर-स्वरसँ बाजन बाज।
श्वेतछत्र-चामर-प्रभृति, राज-चिन्ह सभ राज ॥८२॥

सखा सचिव सभ्यक सभक, लखि औत्सुक्य नितान्त।
कहल महीपति मुदितमन, क्रमहिँ विपिन-वृत्तान्त ॥८३॥

समाचार आद्यन्त सुनि, आनन्दित सभ भेल।
हरि-औदार्य विचारि मन, अचरजकाँ दए देल ॥८४॥

तपसाहस अवनीपतिक, सबहुँ सराहल फेरि।
कएल मनहिमन माधवक, नमस्कार कए बेर ॥८५॥

तनयलाभसँ सफल-श्रम, सकल नृपक भए दूरि।
मन आनन्द उछाहसँ जेँ देने छल पूरि[2] ॥८६॥
तेँ मिलि सकल सदस्यगए, कएल मुदित प्रस्ताव।
"महाराज! हो उचित सुत-जन्म-महोत्सव आव" ॥८७॥

---

1 उपमा 2 दुहू पद्यमे अन्वय छैक तेँ युग्मक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



त्वरित विभव औदार्य ओ, उत्साहक अनुरूप ।
प्रातहिसँ उत्सव करक, आज्ञा देलन्हि भूप ।।८८।।

छल सभ शुभ आलापमे, मग्न निरन्तर भेल ।
ककरहु नहि बुझि पड़ल जे, राति बहुत बिति गेल ।।८९।।

पहरुकाँ बदलए तखन, बाजल डङ्का जोर ।
शयन-गीत गाओल नृपक, कए वैतालिक सोर ।।९०।।

अतुल-कौतुक-तरल रजनिकर आगु बढ़ि,
भुवन जनि[1] देख नभ-तुङ्ग–प्रासाद चढ़ि ।।
श्रम-शिथिल-अङ्ग दृग-निन्दवश मन्द-गति,
पहुँचल निशीथ बुझि शयनगृह भूमिपति ।।९१।।

।। इति द्वितीय सर्ग ।।

1 रूपकानुप्राणितोत्प्रेक्षा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

## तृतीयसर्ग

पुरजनक परस्पर-बातहिँ, ओ राति अतर्कित बीतल ।
किछु[1] बूझि पड़ए न समय-गति, जँ हृदय रहए सुखशीतल ॥१॥

छल ओहि राति-भरि जागल, नृपपुरमे सब नरनारी ।
उत्कण्ठासँ जे प्रातहिँ, होएत महोत्सव भारी ॥२॥

जनि प्रतीचीक सङ्गमसँ, लखि पतित सुधानिधि-मण्डल ।
तावत प्रकाश-छलसँ छल[2], सम्मुख प्राचीमुख बिहँसल ॥३॥

जनबैत शशी युवजनकाँ, फल कामुकताक, कलङ्कित ।
जीवन-निस्पृह जनि[3] सागर-जलमे डुबि भेल तिरोहित ॥४॥

रजनी विचारि पति-दुर्गति, पहिनहि विषाद-अनुरागल ।
कए धीर अधीर हृदयकेँ, जनि मर्त्यभुवनकाँ त्यागल ॥५॥

छल अचल पतिव्रत जनिकर, से तारा सभ शशि-सङ्गहिँ ।
डूबलि वैधव्य-विपतिकाँ, जे सकलि छनो भरि नहि सहि ॥६॥

तत्कालहिँ सौतिनि-निकरक, पति-अनुगतिसँ जनु लज्जित ।
दुख-मलिन कुसुम-मुखकेँ झट,[4] कए देल कुमुदिनी मज्जित ॥७॥

चिन्तामणि चतुर-चकोरक, विरही-तरुणक वड़वानल[5] ।
भए गेल लीन वारिधिमे, अति-प्रभाहीन शशि-मण्डल ॥८॥

दए कमल कुमुदमे राजा,[6] दुइ दृष्टि खसल निज-पदसँ ।
कए पक्षपात जग अधिपति, नहि बाँचि सकथि आपदसँ ॥९॥

छल कामुक तस्कर आदिक, जत जीव भुवनमे रतिचर ।
से डरहिँ कतहु भए सटकल, जनि हारल नृपतिक अनुचर ॥१०॥

---

1 अर्थान्तरन्यास । 2 उत्प्रेक्षा-अपह्नुतिसङ्कर । 3 निदर्शनोत्प्रेक्षासङ्कर ।
4 रूपकोत्प्रेक्षासङ्कर । 5 मालारूपक । 6 चन्द्र । अर्थान्तरन्यास ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



उच्च-स्वरसँ कुकरूकू-ध्वनि करइत कुक्कुट[1] जागल ।
जे बाहु-पाशसँ बान्हल युवजनकेँ दुस्सह लागल ॥११॥
शशि अमृत-किरणसँ जनिकाँ, सीँचल छल से द्रुम-मण्डल ।
बहबैत ओस-अश्रुक कण[2], खग-कलकल-छलसँ कानल ॥१२॥
भोरहिँ बाला सखि-निकरक परिहासक भयसँ कँपइत ।
लालागृहसँ बहराइलि[3] नव-सुरत-चिन्हकाँ झँपइत ॥१३॥
श्रम-शिथिल-वसन-तनु-भूषन, आलस-वश-लोचन-खञ्जन ।
कामुक क्रीड़ा-मन्दिरसँ, कत निकसलि वारवधू-जन ॥१४॥
गणिका निचिन्त भए सूतलि, जे रहलि राति-भरि जागलि ।
गुण अवगुण देखि न पुरुषक, केवल धनमे अनुरागलि ॥१५॥
वल्लभ-विदेश-यात्रा गुनि, तरुणी प्रभात लखि कानलि[1] ।
छुटि हर्षित भेलि नवोढ़ा, पति-बाहु-पाशसँ बान्हलि ॥१६॥
भरि रैनि केलिसँ विकलित, तरुणी-तरुणक कामानल ।
प्रातक वातक लगितहिँ पुनि, प्रज्वलित द्विगुण भए जागल ॥१७॥
मधु पीबि सङ्ग अलिनी लए, अलि कुसुम-सेज पर सूतल[5] :
उपवनमे पवन सबेरहिँ, झिकझोरि मचाओल हलचल ॥१८॥
बहि रसिक-समीर सिखाओल, उद्यान-लताकाँ नाचब ।
लखि मानिनीक अभिमानक, भए गेल असम्भव बाँचब ॥१९॥
विरहीक विपक्षो पक्षी[6], कोकिल रक्ताक्षो अकुपित ।
आदेश रतीश-नरेशक, सुनबैत कएल दुख अर्पित ॥२०॥
प्रातहिँ लतिकालग पहुँचल, मधुकर उपवासल रातुक ।
झट पीबि कुसुम-मद उन्मद, कएलक कत कलरव कौतुक ॥२१॥
विधि-रजक अरुण-अम्बरकाँ, छबि-छार लगाए पखारल ।
भए गेल स्वच्छ ओ लगले, तेँ तेजि समस्त-तिमिर-मल[7] ॥२२॥

---

1 मुरगा। 2 काव्यलिङ्ग-अपह्नुति। 3 स्वभावोक्ति। ध्वनि। 4 समुच्चय।
5 शृङ्गाराभास। 6 विरोधाभास। 7 साङ्गरूपक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



यावत निस्तेज गगनपर, अंधकार करए चाहल तम ।
तावत समूल संहारल, चढ़ि उदयशैल रवि दुर्दम ॥२३॥
पट-तिमिर हटाए पथिक झट, उदयाचल-कुच पर दए कर ।
अनुरागें विकसित कएलन्हि, प्राचीक रुचिर मुख दिनकर[1] ॥२४॥
भास्करक प्रभा लखि भीषण, भए गेल मलिन-मुख कैरव ।
जनि देखि विजेता नृपतिक, खल-जन प्रताप अतिभैरव ॥२५॥
रवि राति बिताए कतएदन, भोरहिँ नलिनीलग पहुँचल ।
तनि नयन-नलिनमे करसँ, हिम-नोर-विन्दु झट पोँछल ॥२६॥
हरि-केहरि शैल-शिखर चढ़ि, संहारल वैरि-तिमिर-करि ।
तनि-रुधिर-धारसँ लोहित, जनि पूव-दिशा छल छनभरि ॥२७॥
वल्लभ-आगमन निरखितहिँ, बाढ़ल आमोद कमलिनिक ।
भए गेल पड़ोसिनि-सुख लखि, मुख-कैरव मलिन कुमुदिनिक ॥२८॥
रवि-उदयेँ सँकुचल कैरव, षट्पद वन्धनसँ छूटल ।
भए गेल उलूक विकल-मन, पुनि चक्रवाक सुख लूटल ॥२९॥
तरु सौध-शिखर मानिक-रुचि, अरुणक किरणेँ जे पाओल ।
पड़ितहिँ दिनकर-कर-निकरक, से कनक-प्रभा अपनाओल[2] ॥३०॥
दिन-लक्ष्मी-परिणय-उत्सुक, झट धोए पुराने अम्बर ।
अपनहिं करसँ रङ्गि टाङ्गल, ऊपरकेँ निस्व दिवसकर[3] ॥३१॥
लखितहुँ रवि रुचिर प्रकृति-छवि, नहि कतहु पलोभरि अँटकल ।
परतन्त्र जनक रचनामे, विधिहुक उदारता सटकल ॥३२॥
दुर्दैवक वश किछु पहिने, जाही तमसँ रवि हारल ।
सौभाग्य पाबि पुनि सम्प्रति, तकरहि की नहि संहारल ? ॥३३॥
लहि उदय, दिशाक मलिनता हरि, लोकक सुकृत बढ़ाओल ।
वसुपूर्ण विभावसु तेँ ध्रुव, नीतिज्ञ-नृपति-यश पाओल ॥३४॥

❀ ❀ ❀ ❀ ❀

---

1 समासोक्ति । 2 तद्गुण । 3 समासोक्ति ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



प्रातहिँ नरपतिक भवनमे, बाजल नानाविध बाजन ।
होबए लागल सुरमन्दिर-सभमे मङ्गल नीराजन[1] ॥३५॥
घण्टाक नाद शङ्खक स्वर, वीणा-मृदङ्ग-रव झाँपल ।
गोमुख-डङ्का-ढोलक धुनि, सुनि हृदय अधर्मक काँपल ॥३६॥
वंशी-सितार-मानर[2]-डफ-खजुरी-ढोलक ओ काहल[3] ।
करतालक सङ्गहिँ वजइत, कत कएल तुमुल कोलाहल ॥३७॥
सभ बाजन बाजि बजओलक, नृप-द्वार नागरिक-जनकाँ ।
घर-काज लाज तजि दौड़ल, केओओ पूछल नहि अनकाँ ॥३८॥
घर ककरहु सासु ससुर पति, ओ माए बाप नहि रोकल ।
पथमे पद पद छल रक्षक, पुनि कतहु न किछुओ टोकल ॥३९॥
पहुँचल सभ भीतर, पहिनहिँ चारू खोलल छल फाटक ।
शिशु-युवती-जनक सकथि के, कहि तखनुक कौतुक बाटक? ॥४०॥
अँटि गेल सकल पुरवासी, सुखसँ नृपतिक आलयमे ।
जनि उदरमध्य भगबानक, जग-जीव-कदम्ब प्रलयमे ॥४१॥
स्थल यथायोग्य सभ जनकेँ, मन्त्रिक प्रवन्धसँ भेटल ।
सुत-जन्म-महोत्सव भूपक, लखितहिँ विषाद मन मेटल ॥४२॥
जे तनयहीन नरपति-गृह, पहिने निमित्त छल शोकक ।
भए गेल सएह तनयान्वित, हर्षक कारण सभ-लोकक ॥४३॥
तरुणी प्रमोद-मद-मातलि, स्वर एक मिलाए मनोहर ।
सब अपन अपन मण्डल मिलि, गावए लागलि शुभ-सोहर ॥४४॥
चढ़ि व्योमयानपर उत्सव, देखैत किन्नरी जे छलि ।
से लौकिक-गान अलौकिक, हृदयङ्गम सुनितहिँ सँकुचलि ॥४५॥
अगणित गणिका-गण-अभिनय, अवलोकि चतुर्विध[4] नभसँ ।
हटि गेल दूर पुनि नाचक अभिमान अप्सरा-सभसँ ॥४६॥

---

1 प्रातःकालक आरती । 2 मृदङ्ग-विशेष । 3 वाद्यविशेष ।
4 आङ्गिक, वाचिक, सात्त्विक, ओ आहार्य ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



प्रतिपदमे नाचल नटुआ, विपटा भल ताल लगाओल ।
बीचहिमे कूदि पमरिआ, उच्चस्वर सोहर गाओल ॥४७॥

स्वर-राग-तान-लय-पण्डित गाथकजन गीत अलापल ।
गन्धर्व-यक्ष-विद्याधर-किन्नरहुक जे यश झाँपल ॥४८॥

मङ्गलमय-तुमुल-निनादेँ, नरनाथक निद्रा टूटल ।
झट नित्य-कृत्य-सम्पादन, कएलन्हि किछुओ नहि छूटल ॥४९॥

मागध वन्दी चारण ओ सूतक विरुदावलि-धुनि सुनि ।
नृप मुदित सभामे पैसल, निश्चल समाधिमे जनि मुनि ॥५०॥

भूपक अबितहिँ सब लोकक, हर्षध्वनि भरल गगनकेँ ।
तत रोकि सकल नहि ककरो, गाम्भीर्य तरङ्गित-मनकेँ ॥५१॥

आनन्द-मत्त-मन राजा, मणि भूषण वसन लुटाओल ।
सुर-तरु-वरहुक तेँ निश्चय चिर-सञ्चित सुयश घटाओल ॥५२॥

धन अधिक पाबि इच्छहुसँ, याचक-जन मन दृढ़ मानल ।
बौड़ल विधि बूढ़, वृथा जेँ, चिन्तामणि-महिमा ठानल ॥५३॥

जँ एको बेरि नृपति ई, पुनि जइतथि देव-भुवनमे ।
तँ दानक मान न रखितथि, ध्रुव कामधेनुओ मनमे ॥५४॥

जड़ कल्पद्रुम चिन्तामणि, पशु कामधेनु वा कीदहुँ ।
कए सकथि विज्ञ-नर-पालक, तुलना यथार्थ पुनि सपनहुँ[1] ॥५५॥

सुनितहिँ अभिनव उत्सव सब, कए अपन अपन तैआरी ।
धएलक नृप आगू डाली, छल नगर जतेक पसारी ॥५६॥

आमक पल्लव दए राखल, पहिर्नाह कुम्हार मङ्गल-घट ।
गोआर दही आनल पुनि, लए माछ गोँढ़ि पहुँचल झट ॥५७॥

अनलक समान-द्युति सोनक, सोनार विभूषण अनलक ।
चटनी आदिक खेलओना, लाएल कमार जे जनलक ॥५८॥

1 काव्यलिङ्ग ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



लए मालि फूल माला ओ, अरपल चोआभरि फाहा।
घर हेरि लहेरि निवेदल, लट्टोपट्टो[1] बगलाहा ॥५९॥

लोहार कड़ामट्ठा ओ, कजरौटी लोहक आनल।
अङ्गा टोपी तूरओड़ा दरजी आगाँ धए फानल ॥६०॥

अनलक हलुआइ कतेको भरिथार मधुर दोकनिआँ।
मधु पीपरि सूँठि जमाइनि-मरिचादिक औषध बनिआँ ॥६१॥

केरा कटहर प्रभृतिक कत खट्टी टटका फल पाकल।
पुनि पानगुआ डालीभरि, उछलैत बरइओ राखल ॥६२॥

ओ वस्तु सकल अपनहि नृप, सादर स्वीकृत कए लेलन्हि।
आँजुरि लए कनक रतनसँ, सभको बासन भरि देलन्हि ॥६३॥

नृप भवन पूर्ण छल लोकेँ, सभलोक हर्षसँ मनमे।
पुनि हर्ष विलक्षणतासँ, सुतजन्म-महोत्सव-छनमे[2] ॥६४॥

बहुरूपा रूप बदलि कए, शिशुमन आश्चर्य फँसाओल।
पढ़ि गारि भाँड़ मधुरस्वर, युवजनकाँ बहुत हँसाओल ॥६५॥

आचार्य-पुरोहित-पण्डित-गणकादि सकल ब्राह्मणसँ।
नृपसभा भेल भल शोभित, जनि नभपटली उडुगणसँ ॥६६।

शिशु लखि गणना करइत जे, रहलाह रातिभरि जगले।
टीपनि बनाए से शुभफल, दैवज्ञ[3] सुनाओल लगले ॥६७॥

बुझि सुतक ग्रहस्थिति उत्तम, नृप गणक-गणहिँ परितोखल।
वितरण-प्रभावसँ मानू, कल्पद्रुमहुक मद सोखल ॥६८॥

गो-भूमि-कनक-गज-वाजी-गृह-अन्न-वसन आदिक जत।
सङ्कल्पित छल से सभटा, ओ नरपति देलन्हि विधिवत ॥६९॥
पहिने अपनहि नृप लूटल, आनन्द जहाँधरि पाओल।
पाछाँ आजन्मक सञ्चित-सम्पतिकाँ सुखहिँ लुटाओल ॥७०॥

1 एक प्रकारक लाहक खेलओना। 2 एकावली। 3 ज्यौतिषी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



हर्षातिरेकसँ मातल, पहिनहि सभ मिलिकए छीनल ।
पट अलङ्कार जे भूपक, छल बहुत दाममे कीनल ॥७१॥

दोसाला साल विभूषण, आनन्दमत्त तनि-अनुचर ।
कत उछलि कूदि कए लूटल, अपनहुमे सबहु परस्पर ॥७२॥

पाटल[1]-पट-पटलेँ पाटल[2], ओ लाल नृपालक आङ्गन ।
जनि किंशुक-कुसुम-विकासेँ, ऋतुराजक आलय कानन ॥७३॥

स्त्री पुरुष बालिका बालक, सभकेँ दिव्याम्बर बाँटल ।
निजभवन-उपस्थित जनमे, नरपति ककरहु नहि छाँटल ॥७४॥

पाओल गुणीगण अगणित-हाथी घोड़ा दोसाला ।
पुनि रजत-कनक-आभूषण, मुक्ता-मानिक-मणि-माला ॥७५॥

तत अन्न वसन भूषणहुक, जन्महिसँ दुखमे जे छल ।
सेहओ सभ पाबि मनीषित, पाछाँ किछुओ नहि पूछल ॥७६॥

भूपतिक दान-वैभवसँ, भए गेल याचको दाता ।
निज लेख देखि जनु निष्फल, पछताओल विकल विधाता ॥७७॥

पितृ-ऋण-बन्धनसँ अपने, छुटि वन्दी-जनकाँ छोड़ल ।
अति हरखि बरखि तुवँसु वसु, याचन-परिपाटी तोड़ल ॥७८॥

जे जे अदेय बुझि माङ्गल, पाओल सकल से याचक ।
अवसर भल भेटल सभकाँ, नृपदानवीरता जाचक[3] ॥७९॥

अतिदान-सलिलसँ भीजल, नृपकुञ्जरकर तत अविरत ।
याचक-द्विज-मधुकर-निकरक, सन्तोखल मन तृष्णा[4]रत ॥८०॥

आनन्द-पयोधर उमड़ल, उत्साह-सिन्धु अति उछिलल ।
बहि चलल दान-जल-धारा, याचक-मयूर मुद-मातल ॥८१॥

---

1 लाल । 2 व्याहभेल । 3 परीक्षाक । 4 पिआस ओ लालसा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



प्रज्वलित दरिद्रक तृष्णा, नृप हरल दान-जलसेकेँ ।
जनि शिष्यक विषम अविद्या,[1] गुरु शिक्षा-जनित-विवेकेँ ॥८२॥

अन्तःपुरमे पुर-नारीसभसँ रानी सुनि सोहर ।
सानन्द निरन्तर बाँटल, नूआ गहना ओ मोहर ॥८३॥

दासी सहचरी सखी मिलि, अद्भुत-कौतुक-रस-पागलि ।
रानीक लूटि धन नचइत, अपनहु सभ लुटबए लागलि ॥८४॥

पण्डित बिदाइ, ओ पुरहित, दक्षिणा विलक्षण पबितहिँ ।
सन्तुष्ट चलल अपना घर, भूमीपालक गुण गबितहिँ ॥८५॥

आनो गुणिगुण नरपतिसँ, आदर बिदाइ बहुविध लए ।
अचरज-आह्लाद-मगन-मन, सभ विदा भेल आशिष दए ॥८६॥

बुझि पड़इत छल तत सभकाँ, महिपति अपूर्व यश लेलन्हि ।
सुत-जन्मोत्सव-यज्ञक जनु, सर्वस्व दक्षिणा देलन्हि ॥८७॥

नृप कोश रहल भरले सभ, कएलन्हि अनन्त यद्यपि व्यय ।
जेँ छल कुवेरसँ छीनल, निधि ततए कतेको अक्षय ॥८८॥

एहि विधि तुर्वसुनरेशक गृह महोत्सव भेल,
विमल कीर्ति गबैत मगमे मुदित गुणिगण गेल ।
समय बितल कतेक, ककरहु पड़ल से नहि बूझि,
खल विकल त्रुटि ताकि हारल, सकल किछु नहि सूझि ॥८९॥

इति तृतीयसर्ग

1 अज्ञान ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# चतुर्थ-सर्ग

तखनहि पुनि नृप ब्राह्मणगणकाँ, विनती देल सुनाए।
"एहि शिशुक दिअ जातकर्मविधि, अपने सबहु कराए ॥१॥
'होइछ द्विगुण द्विजातिक प्रतिभा, संस्कारेँ निर्णीत।
'सान-चाक चढ़लेँ बढ़इत अछि, रत्नक प्रभा पुनीत ॥२॥
'छल सुझबइत तुच्छ सम्पतिकेँ, सतत जागि वैराग्य।
की सम्भव छल एहि जन्ममे, होएत ई सौभाग्य? ॥३॥
'सञ्चित अछि द्विजदेवदयासँ, जे धन मेरुसमान।
ई तकरो अवसर उपयोगक, अछि सम्प्राप्त महान ॥४॥
'तेँ समुचित विस्तार जहाँ धरि, ततबा लए धन आज।
सबहु कृपा कए जानि दास निज, हमर सम्हारिअ काज!" ॥५॥
नृपक विनीत वचन सुनि द्विजजन, कएल वस्तुनिर्देश।
लएबामे अधिकारीकाँ नहि, भेल विलम्बक लेश ॥६॥
प्रथमहि कुलदेवीक पूजि पद, देल विविध उपहार।
कएलन्हि मातृगणक अर्चन[1] पुनि, आभ्युदयिक-विस्तार ॥७॥
ऊपरसँ नीचाँ दिसि भित्तिक, चलल घृतक वसुधार।
हो अधित्यका[2]सँ जहिना भू-तल झरनाक प्रचार ॥८॥
कर्मकाण्ड-पण्डित कुशण्डिका[3], पुरहित देल कराए।
अनल आहुतिक पड़ितहिँ उज्ज्वल, गेल गगन लगिचाए ॥९॥
मेधा[4]-आयु-तेज-बलवर्धक, घृत मधु त्वरित मिलाए।
वेद मन्त्र पढ़इत अवनीपति, शिशुकाँ देल चटाए ॥१०॥

---

1 मातृकापूजा। 2 पर्वतक ऊपरक प्रदेश। 3 वेदिसम्मार्जनादि।
4 धारणावती बुद्धि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



पूर्णाहुति दए भश्म ठोप लए, कएल दक्षिणादान।
भेल प्रसन्न पाबि ब्राह्मणगण, अशन वसन सम्मान ॥११॥

पुनि नरपाल गुनाए दिवस शुभ, सञ्चित कए सम्भार[1]।
निज तनुजक लगलाह करए ओ, नाम–करण संस्कार ॥१२॥

नयन आँजि सभ साजि विभूषण,पीअर पहिरि पटोर।
बैसलि वामभाग सन्निधि भए, रानी शिशु लए कोर ॥१३॥

नृपनितम्बिनी–ललितकमलिनी–मृदुल अङ्कमे भास[2]।
कज्जलविन्दु-मिलिन्द-विजृम्भित-बाल-कमल सुविकास ॥१४॥

ललनाजनक चपल दृगखञ्जन, गृह–गवाक्ष भरि देल।
से गुनि नृपरमणीक कमलमुख, अधिक सङ्कुचित भेल ॥१५॥

कर्मकुशल यजमान पाबि, सामग्री विपुल तुरन्त।
पुरहित देल कराए भूपकेँ, पूर्णाहुतिपर्यन्त ॥१६॥

ज्वालाजाल विशाल देखि शिशु, कौतुक-विहसित भेल।
जननी-जनक-हृदय-नवदलकाँ, सीँचि सुधेँ जनु देल ॥१७॥

लए सोड़ह उपचार नवग्रह–विष्णु महेश गणेश।
पूजल मन्त्र उचारि भक्तिसँ, मङ्गलकाम नरेश ॥१८॥

हरि-निदेश गुनि दहिन कानमे, नृप सुनाए अभिराम।
शिशुक जीहमे मधुसँ लिखलन्हि, 'एकवीर' ई नाम ॥१९॥

कर्मदक्षिणा देल भूयसी, ऐश्वर्यक अनुसार।
विप्रवृन्दकाँ षटरस भोजन, भेटल अतिसत्कार ॥२०॥

पुरजन–परिजन-बान्धव-याचक प्रजा–सहित सामन्त।
तुर्वसु वसुवसुधादिक[3] दएकेँ, परितोखल अत्यन्त ॥२१॥

---

1 सामग्री।   2 साङ्गरूपक।   3 धन-पृथ्वी प्रभृति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अगणित गाए धाए छल राखल, रानीकाँ बुझि बाँझ।
हरिक कृपेँ पुनि माए पिआओल, अपन दूध दुहु साँझ ॥२२॥

दुस्सह-दीठि-दोष हरबालए, माता देव मनाए।
राइ जमाइनि देल बघनहा हैँठा सुइ पहिराए ॥२३॥

जानल अपन, बुझल अनकहुसँ, जत टोनापरकार।
रक्षाहेतु सुतक से सभटा, कएलन्हि वारंवार ॥२४॥

पहिले पहिल जन्ममे पाओल, ई अवसर नृपदार[1]।
तेँ असङ्ख्य दासीक अछइतहुँ, अपनहि कर परिचार[2] ॥२५॥

चाउर सोन निहुछि ढाकनभरि, रानी देथि लुटाए।
साँझहिँ चौमुख दीप प्रदक्षिण, करबथि मुखक घुमाए ॥२६॥

आङ उङारि, नयन कए काजर, देथि पलङ्ग सुताए।
निरखि हसित शिशुमुख नित मानथि, सफल जन्म निज माए ॥२७

टाङल देखि फुलहरा[3] उठबथि, शिशु कर-पद मुसुकाए।
निरखि नयन जनि अमृतसेकसँ, नृपरमणीक जुड़ाए ॥२८॥

नृपदम्पतिक हृदय रहइत छल तनय-अनिष्ट-सशङ्क।
तेँ दए अति-अवधान शान्ति-विधि, करथि राखि सुत अङ्क ॥२९॥

पथिक-मनक औत्सुक्यजकाँ ओ, छन छन वढ़इत बाल।
बितलेँ किछुए दिनक बाँहि-बल, ससरि लगाओल ताल ॥३०॥

कखनहु आगि पानि दिसि पहुँचए, नीच ऊँच नहि बूझ।
सावधानता बिनु रानीकाँ, आन उपाय न सूझ ॥३१॥

तपक परिश्रम बिसरथि नृप लखि, तनय-वदन-राजीव[4]।
लोचन-युगल-चकोर पिआसल, शशिक सुधा जनु पीव ॥३२॥

---

1 रानी। 2 परिचर्या। 3 कोढ़िलाक झाड़। 4 कमल।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



छठमा-मासहिँ फेरि हकारल, सब बान्धवकाँ भूप ।
अन्नप्राशन शिशुक करक छल, सम्पत्तिक अनुरूप ॥३३॥

सुनितहिँ आबि तुलाएल सभ जन, नृपक सुखद संवाद ।
पुरुषहुसँ नारीमे दोगुन, उत्कण्ठा आह्लाद ॥३४॥

रानिक आङन कुलललना ओ, मन उछाह भरि गेल[1] ।
अपनहि आदरपूर्वक सभकाँ, समुचित बैसक देल ॥३५

मिलि मिलि गाबए लागलि प्रमुदित-प्रमदा मङ्गल-गीत ।
वृद्धाजनि पुनि सकल सम्हारल, विविध विधान पुनीत ॥३६॥

श्रद्धाभक्तिभावसँ पुरहित-सङ्ग नरेन्द्र सुधर्म ।
तावत त्वरित मातृकापूजा-प्रभृति कएल शुभकर्म ॥३७॥

सुरस सुपच सौरभमय मञ्जुल, भोज्य[2] अनेक प्रकार ।
रान्हि चतुर वनिताजन शिशु लए, परसल सोनक थार ॥३८॥

घृत हुतशेष चटाए बालकेँ, बैसाओल तत आनि ।
गीत-प्रवीणा वीणास्वरसँ, गाओल अवसर जानि ॥३९॥

भोजनलीला शिशुक मनोहर, नारीनिकर निहारि ।
रानिक भाग्य धन्यकेँ मानल, नयन बहल मुदवारि[3] ॥४०॥

तेजल जन्मक सखी दरिद्रा, विप्र दक्षिणा-पुष्ट ।
अशन-वसन-भूषण-आदरसँ, सभक हृदय सन्तुष्ट ॥४१॥

दिन दिन दोगुन शिशुक बढ़ल पुन, शशिमण्डलसम देह ।
परिजन पुरजन बन्धुवर्गसँ, परिचय प्रचुर सिनेह ॥४२॥

कहुखन दैत ठेहुनिआँ बालक, ओ माइक लग जाथि ।
जहिना खूजल वत्स तृषा[4]सँ, गाइक निकट पड़ाथि ॥४३॥

---

1 तुल्ययोगिता । 2 भोजनक वस्तु । 3 आनन्दक नोर । 4 दूध पीबाक इच्छा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जननिक कोर पैसि झट हठसँ, अञ्चल वाल उघारि ।
पीउल दूध कमलदृग मुखविधु, हँसइत तनिक निहारि ॥४४

शिशु-करयुगल-गृहीत मुखस्थित, राज उरज माताक ।
दुहुभुज-धृत जनि पाञ्चजन्य[1] श्रित-वदन जगत्त्राताक[2] ॥४५॥

पावए विकच सरोज मध्य जँ, कुन्दक कलिका सङ्ग ।
तँ शिशु-विहसित-मुखमे दाँतक, हो उपमाक प्रसङ्ग[3] ॥४६॥

लीला-दर्शन-लोलुप लोचन, देखि न जनिक अघाए ।
रानी से घर काज तेजि सुत, राखल हृदय लगाए ॥४७॥

धाइक आङुर पकड़ि पकड़िकेँ, चलइत सुतकाँ माए ।
निरखि चलओना गाड़ी देलन्हि, अतिसुन्दर वनवाए ॥४८॥

जाए देथि नहि माता कखनहु, तनिकाँ आँखिक ओट ।
छल शङ्का, छथि चञ्चल, जाएत, लागि कदाचित चोट ॥४९॥

नेना मान कहाँ धरि वरजव, कुदइत रहथि खसैत ।
दौड़लि देखि माएकेँ ओ पुन, अपनहि उठथि हँसैत ॥५०॥

कहुखन व्यर्थ कानि कैतुकसँ, करथि स्वजन-आतङ्क ।
सावधान जेँ शिशुक विषयमे, जननी रहथि सशङ्क ॥५१॥

देखवैत प्रतिदिन ओ लीला, बहुरूपक कएगोट ।
पूरि देल जननीक मनोरथ, किछु नहि रहल कचोट ॥५२॥

सेवक-शिशु-समुदायक सङ्गहिँ, सदिखन खेलि पसारि ।
बढ़बथि हैहय प्रीति परस्पर, करथि न कखनहु मारि ॥५३॥

तिमिरछन्न-गृहदीप जकाँ ओ, शिशु नृपघर उजिआर ।
करइत सतत जनक जननीसँ, पावथि अधिक दुलार ॥५४॥

---

1 शङ्ख । उपमा । 2 विष्णुक । 3 अतिशयोक्ति ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



राजतनूजक विहसित मुखपर,[1] लटकल लखि कचपालि।
के नहि मानल विकच कमलपर, लुबुधल भल मधुपालि[2] ।।५५।।

राजकाज करितहुँ उत्कण्ठित, सुतदर्शनक निमित्त।
तनि मुखचन्द्र-चकोर भूपदृग, हो नित हर्षित चित्त ।।५६।।

पूजासमयमध्य भूपतिकाँ, लखिकें ध्यान धरैत।
मेधावी अनुकरण ठीक ओ, बालक रहथि करैत ।।५७।।

कखनहु आबि कोरमे बैसथि, लटकि पीठपर जाथि[3]।
कखनहु पुनि सस्नेह बजओनहु, हैहय दूर पड़ाथि ।।५८।।

कान नाक मुख आँखि दाँत ओ, पुछने वारंवार।
उनटे देखबैत उपजाबथि, कौतुक पारावार ।।५९।।

धनुष बाण दूरहुँ जँ देखथि, दौड़ल लेथि उठाए।
मारथि खैँचि गगनसँ पक्षी, सहजहिँ देथि खसाए ।।६०।।

हँसइत माएबापलग कखनहु, बाजथि शिशु अधबोल।
नेनासभक सङ्ग मिलि कखनहु, चिकरि मचाबथि घोल ।।६१।।

अनुचरशिक्षें माएबापकें, ओ नित करथि प्रणाम।
तथा प्रजाप्रभृतिक शिशु प्रत्यभि-वादन[4] विनयललाम ।।६२।।

सङ्ग सखानिकरक खेलहुमे, सेवकजन मतिमान।
अस्त्रशस्त्र-आवेश तनिक लखि, करथि शौर्य-अनुमान ।।६३।।

अन्यमनस्क देखि जननीकें, अकचकाए ओ देथि।
चुप्पहिँ पहुँचि पीठिदिसिसँ जँ, दुहु करसँ धए लेथि ।।६४।।

अङ्गा पाग पहिरि लाठी लए, मोँछ बनाए विशाल।
बूढ़ कञ्चुकी जकाँ लोककाँ, हँसबथि नरपतिबाल ।।६५।।

1 भ्रान्तिमान्। 2 भ्रमरपंक्ति। 3 स्वभावोक्ति। 4 प्रतिप्रणाम।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तेसरवर्ष वयस तनयक लखि, सुसमय भूप विचारि ।
चूड़ाकरण-कर्णवेधोत्सव, घरमे देल पसारि ॥६६॥

ब्राह्मणगणकाँ न्योति अनाओल, बान्धवजनहुँ हकारि ।
धरणीपति सम्पतिक सुगति ओ, दान भोग अवधारि ॥६७॥

कुलगुरु वृत भए साँझहिँ देलन्हि, शिशुक जूटिका[1] बान्हि ।
जननी देवीपूजा[2] कएलन्हि, बड़ी भात पुनि रान्हि ॥६८॥

नित्यकृत्य सभ सम्पादित कए, प्रात आबि आचार्य्य ।
कएलन्हि सकल मातृकापूजा-प्रभृति अपेक्षित कार्य ॥६९॥

आङ्गनमध्य हवन विधिवत् ओ, कएल जूटिकाछेद ।
मुण्डनकरक निदेश शिशुक पुनि, देल विप्र पढ़ि वेद ॥७०॥

नौआ पाबि वसन धन, मुण्डन, कएलक मण्डितवेश ।
आँचर बीच पुरैनिपात धए, परिछल माता केश ॥७१॥

राजसुतक दुइ उपर कपारक, काक-पक्ष सम होए ।
जँ पिक पाँखि पसारि पर्वविधु-पर वपु वैसए गोए[3] ॥७२॥

आयत अञ्जननील शिखा नृप-तनुजक शिरपर राज ।
कनक-कमल ऊपर जनि मरकत-हरित-नाल छवि छाज ॥७३॥

नौआ सावधान भए काटल, राखि हाथ सुकुमार ।
खुर छल बनल विलक्षण किछुओ, तेँ नहि बुझल कुमार ॥७४॥

ललनानिकर पञ्चमस्वरसँ, घरमे गवइत गीत ।
पिकविलासिनीकाँ कए देलन्हि, जनु लज्जित ओ भीत ॥७५॥

नृपसुतकेँ नहवाए दक्षिणा, देल जानि श्रुतिमर्म ।
गुरु-सन्तोष[4] पाबि गुरु कएलन्हि, अवसित[5] चूड़ाकर्म ॥७६॥

---

1 शिखा। 2 कल्याणदेवीक पूजा। 3 नुकाए। 4सम्भावितोपमा।
5 दक्षिणाद्रव्य। 6 पूर्ण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तदनन्तर गुरु फेरि नरेश्वर-सुतक कान मन्त्राए।
स्वर्णकारकें वेधकरक ओ, देल निदेश सुनाए ॥७७॥

हर्षित जीवन-निर्वाहक धन, पाबि विनहि आसेध।
कए देलक सोनार कनौसी, लए नृपसुतश्रुतिवेध[1] ॥७८॥

०००००००

पचमा-वर्ष निरखि शुभ अवसर, ज्ञान हेतु नरराए।
देल अक्षरारम्भ कुमारक, गुरुकाँ आनि कराए ॥७९॥

करइत नरपतिसूनु प्रकाशित, अपन सुकृत-परिपाक।
सिखि दुइ चारि दिनहिमे अक्षर, परिचय देल प्रभाक[2] ॥८०॥

०००००००

नृप गुरु-शुद्धि[3] सुतक लखि शुभ-दिन-तिथि-नक्षत्रक योग।
हरखि हकारि बन्धु बुध कएलन्हि उपनयनक उद्योग ॥८१॥

गुरुजन अनुमति पाबि पुरोहित, मङ्गल मन्त्र पढ़ैत।
स्मारकपत्र लिखल अतिविस्तर, मन अभिलाष गढ़ैत ॥८२॥

धन अनन्त, सुत एक वृद्ध भए, पाओल जें नरनाह।
कएल महोत्सव-समारोहमे, तें विशेष उत्साह ॥८३॥

उपनयनक किछु दिन पहिनहिसँ, न्योतल देश विदेश।
सुनतहिँ अबइत भेल प्रजा द्विज गुणिगण सकल नरेश ॥८४॥

छल मङ्गल मङ्गलदिन भूपति-सुतक माटिमाङ्गल्य।
राजभवनमे सभजनमनमे, तें छल मुदचाञ्चल्य ॥८५॥

अइहब-विप्रवधू-लोकनिकाँ, रानी भवन बजाए।
पट भूषण दए खोँइछ भरलन्हि शिर सिन्दूर लगाए ॥८६॥

गबइत गीत चलाओल चरखा, सभजनि काटल सूत।
त्रिगुण त्रिगुण कए बाँटि देल झट, रानीकाँ अजगूत ॥८७॥

---

1 कर्णवेध। 2 प्रतिभाक। 3 वृहस्पतिक शुद्धि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



पीउसि माउसि प्रभृति सुवासिनि, तनु बडुआक उबारि ।
भूषण धन बहु नृपदम्पतिसँ, पाओल ओड़ि[1] पसारि ॥८८॥

बाँटि तेल सिन्दूर वसन, चढि, शिविका[2] पोखरि जाए ।
रानी सुतक कराओल कुमरम, परम प्रमोद मनाए ॥८९॥

०००००००

धोती–डाँड़ाडोरि–पवित्री–जनउ–फलादि कुमार ।
अपनहि दए आचार्यक कएलन्हि, वरण कुलक अनुसार ॥९०॥

गृहक मध्य पूर्वाङ्ग-कृत्य[3]सभ, कए गुरु बडुआसङ्ग ।
माँड़व चढ़ि आरम्भ देल कए, शुभ उपनयन-प्रसङ्ग ॥९१॥

सम्मार्जन-उपलेप-प्रभृति कए, संशोधन वेदीक ।
अग्निस्थापन गुरुवर कएलन्हि, काँसपात्र लए नीक ॥९२॥

कछटा, ज्या[4]क मेखला, वेलक–दण्ड ललाट-प्रमाण ।
पावि अजिन उपवीत भूपसुत, भासित अनलसमान ॥९३॥

ब्रह्माकाँ वरि सविधि हवन कए, दए सावित्री मन्त्र ।
कुलगुरु राजकुमार बनाओल द्विज, करुणा–परतन्त्र ॥९४॥

हैहय पूर्णाहुति कए भिक्षा, पहिने माइक लेल ।
ब्रह्मचर्यव्रत गहि गुरुपदमे, ग्रामदक्षिणा देल ॥९५॥

ब्राह्मण–बन्धु–आदि जन भोजन,दए यशभाग नृपाल ।
परसनमन[5] परसन[6] नहि लेलन्हि, केओ परसक काल ॥९६॥

केअओजन भोजन सामग्री, ततए न गनि सकलाह ।
एकओ गोट प्रकार जाहिमे, छल नहि पुनि अधलाह ॥९७॥

---

1 अ'ग्रहविशेष । 2 पालकी । 3 मातृकापूजादि । 4 धनुषक डोरी ।
5 प्रसन्न-चित्त । 6 दोहराएकेँ लेल भोजन-वस्तु ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



राजतनय गुरुवर–अनुचर भए, आश्रम जाए अदम्भ[1] ।
भिक्षा अशन वसन वल्कल लए, कएल पढ़ब आरम्भ ॥९८॥

ऋक् यजु साम साङ्ग प्रतिभाऽद्भुत, नृपसुत झट पढ़ि लेल ।
वनसँ तोड़ि समिध दुहु सन्ध्या, नित अनलाहुति देल ॥९९॥

कर्म वचन मनसँ परिपालित, करइत नित्य गुरुक आदेश ।
धनुर्वेद तदनन्तर पढ़लन्हि, क्षत्रिय-जाति-उचित-आवेश ।
स्मृति इतिहास पुराण नीति पुनि, अर्थशास्त्रकेँ मति आरोपि,
ब्रह्मचर्य सम्पन्न कएल ओ, गुरुकाँ पूर्ण दक्षिणा सोपि ॥१००॥

वैजयन्त[2] सन राज-भवन कत, कत आश्रम तृण-पर्ण–कुटीर,
सुरदुर्लभ कौशेय वसन[3] कत, कत कौपीन मृगाजिन चीर ।
भक्ष्य चतुर्विध[4] अमृतोपम कत, कत नीवार[5] मूल फल कन्द,
किन्तु गनल किछु दुख नहि हैहय, विद्यालाभ परम-आनन्द[6] ॥१०१॥

आशीर्वाद गुरुक लए सादर एकवीर निज घर चललाह[7],
जनिकर बिनुदर्शन जननी–मन, दुःख–पर्योनिधि पड़ल अथाह ।
तातक निकट पठाओल अनुचर, बाटहिसँ सूचनानिमित्त,
दुस्सह भेल विलम्ब पलोभरि, जेँ अतिशय उत्सुक छल चित्त ॥१०२॥

॥ इति चतुर्थ-सर्ग ॥

---

1 निश्छल । 2 इन्द्रक कोठा । 3 पाटक वस्त्र । 4 भक्ष्य भातआदि । भोज्य लाबाआदि । लेह्य चटनीआदि । चोष्य आमआदि । 5 ओड़ी । 6 विषम-काव्यलिङ्ग-सङ्कर । 7 गुरुक आश्रमसँ समावर्तनक उत्तर बिदा भेलाह ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# पञ्चम सर्ग

तनय समावर्तन कए मन्दिर आज ।
अवइत छथि ई सुनितहिँ तुर्वसुराज ॥१॥

त्वरित चलल अरिआतए सेनासङ्ग ।
रानीसहित चढ़ल रथ चपलतुरङ्ग ॥२॥

नृपक जीर्ण तनु नव जनु पुलकेँ भास ।
जनि किसलये पुरानो तरु मधुमास ॥३॥

शुष्कहृदयकाँ पूरल प्रमद-प्रवाह ।
जलधिधार जनि मरुकाँ अगम अथाह ॥४॥

एक वृद्धता, दोसर तनुजवियोग[1] ।
तेसर छल जेँ शासन अधिक योग ॥५॥

तेँ भूपालक तखनुक दशा विचित्र ।
जनि विषादतम नासल उगि मुदमित्र[2] ॥६॥

आनन्दाश्रु नयनकाँ देलक झाँपि ।
उठल समस्त शरीरो थरथर काँपि ॥७॥

चित्त गेल उड़ि पहिनहि पाछाँ देह ।
पाबि महान सहायक तनय-सिनेह ॥८॥

लेलन्हि ओढ़ि त्वरासँ तौनीमात्र ।
भेल परम आनन्देँ विह्वल-गात्र ॥९॥

सुधि न रहल किछु मुकुटक छूटल छत्र ।
बिसरल कतहु झषाकृति दुहु श्रुतिपत्र[3] ॥१०॥

---

1 समुच्चय । 2 सूर्य । 3 कर्णभूषण ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कण्ठहार सम्बदिआकाँ दए देल ।
पूर्ण तोष भूपतिकें तदपि न भेल ॥११॥
पाओल सलिल-सेक महि, मग संस्कार ।
भवन पताका तोरण बन्दनवार[1] ॥१२॥
अष्टगन्धसँ हुतवह गेल अघाए ।
सुरभिधूमसँ नभकाँ देल छपाए ॥१३॥
भेल परिष्कृत सबतरि[2] हाट बजार ।
पूर्ण-कुम्भ पथ राखल गेल हजार ॥१४॥
अओरो जत छल समुचित स्वागत-कृत्य ।
बिनु कहनहु से भूपक कएलक भृत्य ॥१५॥
गरुड़वेगसँ वाजी पथमे गेल ।
पछुआएल नृपमनसँ तदपि अलेल[3] ॥१६॥
चलल बन्धु परिजन मिलि उत्सुक-चित्त ।
बहुत दिवसपर हैहय-मिलन निमित्त ॥१७॥
एकवीर अबइत छथि घर कृतकृत्य ।
ई सुनि दौड़ल पुरजन करइत नृत्य ॥१८॥
तुर्वसुअहुसँ बेसी हुनके आस ।
रहइत छल जें सभकाँ लहि सहवास ॥१९॥
कौतुक-विवश सबहु तें नगरक लोक ।
बिदा भेल नहि मानल ककरो रोक ॥२०॥
करइत सकल परस्पर वार्तालाप ।
भूपक भाग्य-विषयमे मनुज-कलाप ॥२१॥
एक कहल, "नृप पओलन्हि अभिमुख दैव ।
देखिअ नव नव मङ्गल जनिक सदैव ॥२२॥

1 तुल्ययोगिता । 2 सर्वत्र । 3 बहुत ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



सन्ततिहीन दुखी छल नरपति जएह ।
विद्यानिधि-सुत-सम्युँत प्रमुदित सएह ॥२३॥

स्थिति परिवर्तन छनमे करथि महान ।
लोकक नयन-अगोचर विधि बलवान[1] ॥२४॥

एहि जगतमे के पुनि जीव कहाए ।
नियम-पाशसँ तनिकर बाँचल हाए ! ॥२५।

तनिके रुचिसँ चलइछ सब व्यवहार ।
केओ सक न अनिच्छेँ कए सञ्चार ॥२६॥

बूझि पड़ए नहि पहिने जनिकर कृत्य ।
बनल रहथि अनुगामी सभ जनि भृत्य ॥२७।

सएह हमर नरनाथक दिसि अनुकूल ।
सम्प्रति छथि तेँ मङ्गल सभ समतूल" ।.२८॥

दोसर कहल, "जगतकेँ केवल, मित्र ![2] ।
ईश्वर चलबथि लीला तनिक विचित्र ॥२९॥

दीनवन्धु जँ चाहथि करुणा-सिन्धु ।
सागरकेँ मरु बनबथि, मरुकेँ सिन्धु ॥३०॥

करथि आदिमे जे प्रभु इच्छहिँ सृष्टि ।
पालथि सदय सुधामय दए निज-दृष्टि ॥३१॥

देखि अधर्मक महिमा पाबथि कोप ।
अपनहि करथि निमिषमे विश्वक लोप ॥३२॥

राखथु ओ आनन्दित अथवा दीन ।
जगत समस्त चराचर तनिक अधीन ॥३३॥

जनिकर निकट जाए नहि पावए राग ।
तनिकहु वशीभूत पुनि कर अनुराग ॥३४॥

1 काव्यलिङ्ग । 2 भावध्वनि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



साक्षी प्रकृति-कृतिक जे घन-चैतन्य ।
अलख निरञ्जन सब थल बसथि अनन्य[1] ॥३५॥

उदासीन जे समतानिष्ठ विरक्त ।
तनिकहु भक्तक ममता कर व्यासक्त ॥३६॥

जेहन कएल हुनक तप सुतलए भूप ।
देलन्हि तकरे ई प्रभु फल अनुरूप" ! ॥३७॥

महिमे धर्मक मानव-नव-अवतार[2] ।
नीतिक निलय, प्रतापक स्थिर-आधार ॥३८॥

समाहार सौन्दर्यक, प्रीतिक तत्त्व ।
मर्यादाक निकेतन, विनयक सत्त्व ॥३९॥

सन्निपात सौजन्यक, मतिक विकास ।
उज्जृम्भण गाम्भीर्यक, धैर्यक हास ॥४०॥

जयलक्ष्मीक निरन्तर क्रीड़ागार ।
नारायणक अनुग्रह-भर साकार ॥४१॥

ब्रह्मचर्य-प्रतिभासँ उज्ज्वलवेष ।
समुदित-विद्या-निकरक मूर्त्तिविशेष ॥४२॥

अपन दिव्यसौभाग्यक दृश्य-स्वरूप ।
देखल दूरहिसँ सुत अवहृत भूप ॥४३॥

नव उन्नत घन जहिना देखि मयूर ।
पर्व-चन्द्र लखि जहिना सागर-पूर ॥४४॥

सुत निहारि नृप तहिना हर्षें वृद्धि ।
पाबि पूर्ण निज मानल भाग्य-समृद्धि ॥४५॥

भेलि मुदितमन रानी सुतकेँ हेरि ।
रङ्कवधू जनि बिलटल धन लहि फेरि ॥४६॥

---

1 एक। 2 मालारूपक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



पसिझल वत्सलतासँ हृदय उदार ।
अशुभ जानि रोकल दृग-सलिल अपार ॥४७॥

सुत पदाति लखि रथसँ उतरि नृपाल ।
महिषी-सहित चलल दए डेग विशाल ॥४८॥

जहिना मिलए नीचदिसि दुइ जलधार ।
तहिना मिलल तनयसँ नृपति सदार ॥४९॥

गुरु-शिक्षा ओ विद्या पाबि नितान्त ।
एकवीर छल कोविद विनयी शान्त ॥५०॥

गोत्र प्रवर उच्चारण कए निज नाम ।
कहि कएलन्हि ओ जननी-जनक-प्रणाम ॥५१॥

तावत त्वरित तनुजकाँ भूप उठाए ।
वदन चूमि ओ लेलन्हि हृदय लगाए ॥५२॥

नृप लखि सुत-गुण-गौरव[1] गौरव[2] लैत ।
पुछल परसि तनु आशिख[3] आशिष दैत ॥५३॥

"कहू अहाँ किसलय-सम भए सुकुमार ।
कोना गुरु-आश्रममे छलहुँ कुमार ॥५४॥

ब्रह्मचर्य कत दुष्कर मुनिजनसाध्य ।
राजतनय कत देशक स्वयमाराध्य[4] ॥५५॥

ब्रह्मचर्य द्विजसुतकाँ पाल'क थीक ।
ई श्रुति-आज्ञालङ्घन हो नहि नीक ॥५६॥

प्राणहुसँ प्रिय रहनहु तेँ वनवास ।
देल अहाँकाँ, मन जनु करिअ उदास ॥५७॥

वत्स ! अहाँक निकेँ छथि की गुरुदेव ? ।
जनिकाँ किछु नहि दुर्घट तपबल लेब ॥५८॥

---

1 महत्त्व । 2 गर्व । 3 शिखापर्यन्त । 4 विषम ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



की गुरु-आज्ञा पालल अहाँ अखेद ?
व्रत निर्विघ्न निबाहल पढ़इत वेद ? ॥५६॥

की नहि गुरुसेवामे भेल प्रमाद ? ।
की छल बनल निरन्तर तनिक प्रसाद ? ॥६०॥

मधुर वचनसँ कएलहुँ की आह्लाद ? ।
की नहि कएल कदाचित व्यर्थ विवाद ? ॥६१॥

की कखनहु न उपेखल निज-कुल-धर्म ? ।
की रहस्यमय सूझल शास्त्रक मर्म ? ॥६२॥

भेल अचल ईश्वरपर की विश्वास ? ।
सकल वेद थिक जनिके मुख-निश्श्वास ! ॥६३॥

की नहि वन रहि भेलहुँ जगद्विरक्त ? ।
की बनले छी मातापितरक भक्त ? ॥६४॥

जनिकर अनिमिष दृग छल तकइत बाट ।
सदिखन हृदय विकल छल पाबि उचाट ॥६५॥

भए वत्सलो मनहि गुनि धर्मविरोध ।
जे न अहाँक कएल वन-गमन-निरोध ॥६६॥

अशन वसन सुख शय्या त्यागि निरीह ।
जे अहाँक सुमिरन कए व्यथित छलीह ॥६७॥

जनिकाँ मनोविनोदक अहीँ उपाय ।
से अहाँक ई जननी छथि असहाय ! ॥६८॥

जाथि नोरसँ विरहक नित्य नहाए ।
ई दुख भोगथि नृपतिक दार कहाए" ॥६९॥

स्नेह-भरल सुनि हैहय बापक बात ।
सादर कहलन्हि विनयेँ अवनत-गात ॥ ७०॥

---

1 उच्चाटन ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



"तात ! छलहुँ हम सुखसँ पढ़इत वेद ।
बुझि नहि पड़ल भवनसँ वनमे भेद ॥७१॥

जनिक अनुग्रह अनकहु मङ्गलमेह[1] ।
ताहि गुरुक नहि अपनहि तत सन्देह[2] ॥७२॥

ठेसि खसैत रहथि से जन प्रति डेग ।
पबइत रहथि अनुक्षण मन उद्वेग ॥७३॥

पशुबत पाबि अनादर सोचथि सृष्टि[3] ।
जनिक हो न उन्मीलित विद्या-दृष्टि ॥७४॥

धनिक पढ़थि नहि जे लखि दुख-सम्बन्ध ।
से दुइ आँखिक रहितहुँ कहबथि अन्ध ॥७५॥

चपला-चपल[4] विमोहक विभव महान ।
स्थिर-मोदक पुनि विद्या अमृत-समान ॥७६॥

धन्य पिता जे सुतकेँ अवसर देखि ।
विद्या पढ़ए पठावथि विरह उपेखि ॥७७॥

सद्गुण-मण्डित पण्डित सुत सुख-मूल ।
जनक-मनक हो बालिश[5] बालक शूल ॥७ ॥

जे दुलारसँ सुतकेँ पढ़ए न देथि ।
से आमरण पिता दुख अपनहि लेथि ॥७६॥

तात ! अहाँक न बिसरल छल उपदेश ।
तेँ नहि पाओल वनमे किछुओ क्लेश ॥८०॥

सावधान भए पढ़लहुँ वेद समग्र ।
भ्रमहुँ न कखनहु भेलहुँ मनमे व्यग्र ॥८१॥

---

1 मेघ । 2 अर्थापत्ति । 3 जन्म । 4 विद्युत्‌जकाँ चञ्चल ।
5 मूर्ख ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कएल गुरुक परिचर्या जे छल साध्य ।
कटुवाणी कहि ककरहु कएल न बाध्य ॥८२॥

गुरु छलाह करुणामय सतत प्रसन्न ।
विद्याध्ययन भेल झट तेँ सम्पन्न ॥८३॥

जगत्कार्यसँ जनिकर हो अनुमान ।
महामान्य शतशः श्रुति जतए प्रमाण ॥८४॥

जनिक अलौकिक महिमे होइछ भान ।
तनि परमेश्वरकाँ के सुमति न मान ? ॥८५॥

बाल्य-अवस्थासँ जे दृढ़ संस्कार ।
तकर न हो परिवर्त्तन वा परिहार ॥८६॥

वनवासी भए सीखल विषय-विराग ।
द्विगुण भेल तेँ धर्मक पथ अनुराग ॥८७॥

जननी-जनक-भक्ति-गुण वेदो[1] गाव ।
दोसर विषय तकर नहि तुलना पाव ॥८८॥

धर्मव्याध-कथा[2] अछि ततए प्रमाण ।
एक स्वरेँ ई कहइछ शास्त्र-पुराण ॥८९॥

माए-बाप-गुरु-सेवामे आसक्त ।
मूर्खो नीक, न पुनि बुध ततए विरक्त[3] ॥९०॥

जन्म देथि परिपालथि जे सहि क्लेश ।
तनिकाँ तजि की हो कए विपिन-प्रवेश ? ॥९१॥

माता पिता वृद्ध, सुत शिशु, ओ नारि ।
तरुणी पालनीय थिक जनकाँ चारि ॥९२॥

गुरुजनसँ पालित भए पूर्णप्रज्ञ[4] ।
जे कर तनि प्रतिपालन सएह कृतज्ञ ॥९३॥

---

1 'मातृदेवोभव' इत्यादि । 2 महाभारतमे । 3 व्यतिरेक । 4 पण्डित ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तनिक जन्मसँ जेहन रह उपकार ।
तकर सकथि कए के जन प्रत्युपकार ? ॥९४॥

हुनक वचन कटु मानथि जे मतिवाम ।
निश्चय जानब तनिकाँ दुख परिणाम ॥९५॥

माए-बाप-सेवा तजि होथि न सिद्ध ।
अछि इतिहास न की ऋषिसुतक प्रसिद्ध[1] ? ॥९६॥

सकल-शास्त्र-शिक्षो नहि धर्मक बाट ।
सदाचारपर हो यदि मनमे काट[2] ॥९७॥

शास्त्रो जानि न जनिका श्रद्धा होए ।
कुलक धर्ममे, से यश नाशथि धोए ॥९८॥

कुलाचार हो यद्यपि शास्त्र-अनुक्त ।
थिक तथापि शिष्टक ओ सम्मत युक्त ॥९९॥

श्रुतिस्मृतिक सदृशे जेँ अछि अविकार ।
गणित धर्मलक्षणमे शिष्टाचार ॥१००॥

सानुग्रह गुरु रहइत सतत छलाह ।
भेल अहीँक धर्मसँ व्रत-निर्वाह ॥१०१॥

जेँ छल सुकृति-सतीर्थ्यक अनुपल सङ्ग ।
तेँ न भेल कनिओँ पुनि व्रतमे भङ्ग ॥१०२॥

सत्सङ्गक महिमा अछि सभसँ बाढ़ि ।
रहथि योग्यता-बनिता जनि बल ठाढ़ि ! ॥१०३॥

प्राणपणहुसँ आज्ञा-पालन-दक्ष ।
तात ! अहाँक तनय अछि आब समक्ष" ॥१०४॥

कहल माएकेँ, 'अम्ब ! न मानब शोक ।
कर्मसूत्रमे गाँथल मानव-लोक ! ॥१०५॥

---

1 पद्मपुराणमे । 2 द्वेष ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तातक आज्ञासँ हम गुरु-पद-लग्न ।
निगमागम-पढ़बामे छलहुँ निमग्न ॥१०६॥

पराधीन भए सेवा वञ्चित भेल ।
कानन जाए अहाँकाँ बड़ दुख देल ॥१०७॥

से अपराध छमब बुझि बालक अम्ब ! ।
गुरुवश छलहुँ भेल तेँ ततए विलम्ब" ॥१०८॥

सुतक वाक्य श्रुतसम्मत सुनि नरनाह ।
विस्मित प्रमुदित गर्वित भए बजलाह ॥१०९॥

"वत्स ! हमर अभिलाषा छल नहि छोट ।
पूरल तदपि दयामय हरि बड़गोट ॥११०॥

यति[1]वत होए ययातिक कुल विच्छिन्न ।
ई विचारि हम होइत छलहुँ विखिन्न ॥१११॥

जगत्पिता समदर्शी किन्तु रमेश ।
सहि सकलाह न दासक आधिक्लेश ॥११२॥

रमाप्रसूत स्वसुतकाँ हमरा देल ।
दीनदयाक विमल यश बदला लेल[2] ॥११३॥

कहल "अहाँक तनय ई यश-विस्तार ।
करत अपन सद्गुणसँ भरि संसार" ॥११४॥

मिलल प्रभुक से वाणी सब विधि योग्य ।
अहाँ भेल छी स्नातक[3] लक्ष्मीभोग्य ॥११५॥

विद्या-विक्रम-गरिमा सोचि अहाँक ।
वैरिक हृदय न होइछ की दुइ फाँक ? ॥११६॥

---

1 यति, तुर्वसुक ज्येष्ठपितृव्य, गृहत्यागी छलथिन्ह । 2 परिवृत्ति ।
3 कृतसमावर्तन ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



आइ सकल दुख मेटल भेटल स्वर्ग ।
अनायास हम पाओल ध्रुव अपवर्ग ॥११७॥

देव-पितर-अनुकम्पा निश्चय भेल ।
ब्राह्मणगणक शुभाशिष सभ फल देल ॥११८॥

सम्मुख भेल विधाता, जागल भाग ।
गेल दूर मन परिहरि दुखद-विराग ॥११९॥

सभप्रकारसँ पुहमीतलमे धन्य ।
पुत्रवानमे भेलहुँ हम मूर्धन्य [1] ॥१२०॥

वत्स ! आब अभिलाषा पूरिअ एक ।
भए युवराज राखि लिअ वंशक टेक" ॥१२१॥

माता किछु नहि शब्दें कहि सकलीह ।
छल आह्लादशिथिल जें मन ओ जीह ॥१२२॥

वत्सलतासँ भीजल विकसित आँखि ।
देलक किन्तु मनोगत सबकिछु भाखि ॥१२३॥

तखन भवन जएबालए धरणीनाह ।
पुत्र-कलत्र सङ्ग लए रथ चढ़लाह ॥१२४॥

जनसङ्कक अनुरोधें हयगति मन्द ।
लोकप्रिय की जगमे रह स्वच्छन्द ? ॥१२५॥

वहुतो लैत परीक्षा सुत-प्रतिभाक ।
पूछि नृपति सुनि उत्तर भेल अवाक ॥१२६॥

कुसुम-वृष्टि पुरबालाजन कए देल ।
श्लथगति जेँ पुनि पथभरि रथ भरि गेल ॥१२७॥

नृप-पथ कतहु न तिलहुक छल अवकाश ।
भरल पुरुष महिला गृह-आकाश ॥१२८॥

---

1 श्रेष्ठ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तेजि वधूजन रान्हब, बान्हब केश।
शिर सिन्दूर लगाएब, विरचब वेश ॥१२६॥

उबटन मलब, सम्हारब गति कटिछीन।
आरत लेपब, पहिरब वसन नवीन ॥१३०॥

दर्पनमे मुख देखब, गाँथब हार।
सासु-ससुर-शुश्रूषा, पति--परिचार[1] ॥१३ ॥

आँजब दृग काजर लए, साजब सेज।
भाँजब पाश, समाजब लयधुनि तेज ॥१३२॥

गुरुजन--रुचि अनुहारब, धारब काज।
मधुर, मन्दसुर भाखब, राखब लाज ॥१३३॥

डरेँ अनेरो काँपब, झाँपब अङ्ग।
दौड़लि सब्रजनि बौड़लि प्रबलउमङ्ग ॥१३४॥

कौतुकरस-पागलि कत लागलि द्वार।
पाओल लखि न अभागलि कलह पसार ॥१३५॥

भूप यथोचित सभको मान रखैत।
आएल गृह पथ-कौतुक विविध लखैत ॥१३६॥

सुत पाबि नृप घर आबि उत्सव कएल अतिउत्साहसँ,
किछु रहल याचककाँ न याचक[2] चाह पुहमीनाहसँ।
युवराजपद पर गेल हैहय भेल भय खललोककेँ,
हो अमृतदीधिति-भास जागए त्रास की नहि कोककेँ !॥१३७॥

॥ इति पञ्चम सर्ग ॥

1 सेवा। भावध्वनि। 2 याचना करबाक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# अथ षष्ठ सर्ग

तदनन्तर नरराए भूमिपतिक मननीय नित ।
निर्जन थल बइसाए कहल तनयकाँ नीति हित ॥१॥
"वत्स ! प्रौढ़ भए वृत्त हमर दुखःकारण जरा ।
चित्त न भेल निवृत्त रचइत वृत्ति-परम्परा ! ॥२॥
केश भेल शिर स्वच्छ गाढ़ राग[1] मनमे बढ़ल ।
टुटल दाँत परतच्छ भोगलालसा गिरि चढ़ल ॥३॥
सारथि जीव अमन्द अतुल-कलेवर-रथ-सहित ।
चलि कुचालि स्वच्छन्द इन्द्रिय-हय खसबए त्वरित ॥४॥
निज-पोसल अजगूत[2] बहसि भेल अतिशय प्रबल ।
इन्द्रिय अवश कुपूत कथमपि नहि मानए कहल ॥५॥
शरद-वारि-सम शक्ति शारीरिक प्रतिदिन घटए ।
घन-सरितोपम-व्यक्ति बढ़ि ममता नहि मन अँटए ॥६॥
काम-क्रोध-मद-मोह- लोभ करए विग्रह सतत ।
तेँ रह चित्त-विछोह[3] गृह-कलहार्त-गृहस्थवत ॥७॥
तृष्णा-दुस्तर-धार पड़ि आयासेँ शिथिलभुज ।
सहस-युगहुँ नहि पार पाबथि सुर नर वा दनुज ॥८॥
ईशक मायाबन्ध अज्ञजीवसँ दुरवगम[4] ।
पाबि जकर सम्बन्ध विश्व चलए घट-चक्र-सम ॥९॥
चिन्ता बढ़ए नितान्त वासरान्त-छाया सदृश ।
ग्रीष्म-निशा-सम-तान्त[5] दिन दिन होए सुषुप्ति कृश ॥१०॥

---

1 लाली; प्रेम; अपमान । 2 अद्भुत । 3 विक्षोभ, चाञ्चल्य ।
4 दुर्बोध । 5 क्षीण ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



शम-दम-सय्यँम-शील छाड़ए दुर्बल वृद्धकाँ ।
शान्ति[1] न सपनहु मील निर्धनसँ वेश्या जकाँ ॥११॥

बल उत्साह हटाए पौरुष प्रतिभा ओ स्मरण ।
घटबए जरा बनाए दुर्बल तनु अन्तः करण[2] ॥१२॥

सुनितहिँ बूढ़क बात अपनहिकेँ बुझइत निपुण ।
अर्काछ पड़ाइछ कात उपदेशक डरसँ तरुण ॥१३॥

स्वजनो निष्फल जानि पद पदमे अपमान कर ।
हीन-पराक्रम मानि निर्भय-रिपु ठानए समर ॥१४॥

अक्षम अपनो देह परिचर्यामे हो जतए ।
जरा पराभव-गेह सुख-लेशो की रह ततए ? ॥१५॥

वृद्धक मलिन विवेक खसलासँ भवगर्तमे[3] ।
स्थिरता नहि मन टेक पड़ि परिवारावर्तमे[4] ॥१६॥

छुवितहिँ मानव-गात कए कुरूप चैतन्य हर ।
जरा-सर्पिणी तात ! प्रतीकार नहि किछु जकर ॥१७॥

व्याधि-आधि[5]-भरसार्थ- काल-व्यालसँ ग्रस्त भए ।
वृद्धक तनमन स्वार्थ- साधन-शक्त न रहि सकए ॥१८॥

कारागार कठोर- गृहक अज्ञ आश्रयणकए ।
नरक-यातना घोर जिबितहिँ भोगथि वृद्ध भए ॥१९॥

परमपदक प्रस्थान जानि वृद्धकेँ सन्निहित ।
थिक धर्मानुष्ठान- पाथेय[6]क सङ्ग्रह उचित ॥२०॥

राज्यभार तेँ सोपि वत्स ! करब हम वन-गमन ।
सिंहासन पद रोपि करू अहाँ खल-रिपु-दमन ॥२१॥



---

1 क्षमा । 2 मन, बुद्धि, चित्त ओ अहङ्कार । 3 खत्ता । 4 जलभ्रम । 5 मानसव्यथा । 6 बटखर्चा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



शास्त्र जानि सुविचार छी यद्यपि अपनहि् अहाँ।
किन्तु विना व्यवहार हो नीतिक अनुभव कहाँ ? ॥२२॥

तात ! नीति-उपदेश अनका देबामे सुकर।
हो परन्तु बड़ क्लेश अपना पालनमे तकर ॥२३॥

राजनीति अति गूढ़ सहज बुधो नहि बुझि सकथि।
अवसर पड़लेँ मूढ़ बनि, वैरिक कपटेँ छकथि ॥२४॥

पालन प्रजा[1]-समान प्रजाजनक करुणा-सहित।
भूपक धर्म महान बुझब लोक परलोक हित ॥२५॥

प्रजा, कोश ओ दण्ड[2] सुखित, पूर्ण ओ दृढ़ जनिक।
रह साम्राज्य अखण्ड भूतलमे निश्चल तनिक ॥२६॥

भूमिपतिक पद पाबि नीति-अपटु जे नर रहथि।
पद पदमे मुह बाबि क्लेश आन्हरक से सहथि ॥२७॥

आँजथि लोचन धीर धरणीपति जे नीतिसँ।
परखि जगत गम्भीर शासथि सएह सुरीतिसँ ॥२८॥

जनिक न मन कसरेस[3] नीति-मार्गसँ जे चलथि।
तनिका लाग न ठेस ओ न हाथ कखनहु मलथि ॥२९॥

नीति-चतुर नरनाथ अनायास वश कए जगत।
सुजन-गीत-गुण-गाथ सुख सम्पति भोगथि सतत ॥३०॥

सैनिक सचिव प्रधान सेवक जनिक कुलीन रह।
से क्षितिपति मतिमान पाबथि नहि लक्ष्मी-विरह ॥३१॥

बाह्याडम्बर देखि देथि नीचकाँ उच्चपद।
से नृप काज परेखि पछताबथि पओलेँ विपद ॥३२॥

अनुरञ्जन निस्स्वार्थ प्रकृति[4]-मण्डलक जे करथि।
राजा सएह यथार्थ सुयशराशिसँ जग भरथि ॥३३॥

---

1 सन्तति। 2 यथासङ्ख्य। 3 कृपण। 4 प्रजा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कर[1]-पीड़ित कर हाए जनिक सुशासन बिनु प्रजा।
ताहि नृपक फहराए भूतलमे दुर्यशध्वजा ॥३४॥

भूपक आज्ञाभङ्ग बिनु अस्त्रहिँ वध नीति कह।
उचित विवेक-असङ्ग शासन जनिक कठोर रह ॥३५॥

हो नहि सुखद प्रताप क्षमारहित धरणीपतिक।
नाशए कीर्तिकलाप जे बनि कारण अवनतिक ॥३६॥

विनयी सरल उदार धार्मिक दीनदयानिपुण।
शासन विमल-विचार नृप कहबथि कमनीयगुण ॥३७॥

निष्प्रताप अवनीश तापहानि-शीतल अनल।
तेज-रहित नलिनीश तीनि अनादृत रह बनल[2] ॥३८॥

जनिक पराक्रम सूनि थरथर काँपए वैरिमन।
तनिके दुस्सह गूनि दण्ड दुष्टजन सरल बन ॥३९॥

नरपति पौरुष-हीन क्षम शासनमे होथि नहि।
सहथि पराभव दीन सतत शत्रुसँ भीत रहि ॥४०॥

प्रभुता पाबि नृपाल बिसरि उचित कर्त्तव्यकेँ।
करथि दूर सब काल मूढ़ भव्य भवितव्यकेँ ॥४१॥

अनुपल ललना-सङ्ग करथि भूप जे कामवश।
होए तनिक श्रीभङ्ग गलए ग्रीष्म-हिमसम सुयश ॥४२॥

जागए प्रजाऽनुराग नियत न्याययुत दण्डसँ।
प्रतिदिन बढ़ए विराग प्रकृतिक नृपति प्रचण्डसँ ॥४३॥

व्यसनी अवनीनाथ सचिवक ऊपर भार दए।
पाछाँ धूनथि माथ क्रमहि हीन-अधिकार भए ॥४४॥

व्यसनी भूपक भृत्य भए स्वतन्त्र निर्भीक रहि।
करए न उचितो कृत्य सब उच्छृङ्खल मार्ग गहि ॥४५॥

---

1 मालगुजारी। 2 दीपक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जे स्वच्छन्द महीप न्याय-सरणिकेँ लाँघि चल।
पहुँचथि विपद-समीप से पवइत निज-कर्म-फल ॥४६॥

भोग व्यसन आलस्य नृपतिक वैरी थिक प्रबल।
होथि न कतहु प्रशस्य वश्य जकर निसिदिन बनल ॥४७॥

सञ्चित करथि नरेश धन जनि जल रवि गहि करेँ।
जानि जगक पुनि क्लेश अपनहि वरिसथि अवसरेँ ॥४८॥

जे आयक प्रतिकूल कखनहु करथि न व्यय नृपति।
तनिकाँ मानस-शूल होइछ नहि आर्थिक विपति ॥४९॥

जे नृप बान्हथि गेँठ धन उचितो नहि करथि व्यय।
सएह कहावथि ठेँठ दानयशोगानक समय ॥५०॥

नृपक कृपणता दोष यश प्रभाव सम्मान हर।
परलोकहुँ भरि पोष अनुताप[1]क उत्पत्ति कर ॥५१॥

विमन झुकावथि माथ व्यय-संशयसँ बद्धकर[2]।
दूरहिँ लखि महिनाथ अभ्यागत याचकनिकर ॥५२॥

जे नहि याचक-आश पुरवथि भूपति लुब्धमन।
अरजथि से उपहास व्यर्थ वणिक-सम राखि धन ॥५३॥

धन उत्पात-निदान द्यूत मद्य वेश्या जतए।
योग्यपात्रमे दान उचित शान्ति-विधि हो ततए ॥५४॥

चातक कएल निराश तेँ घन पाओल मलिनता।
हो नहि दुर्यश नाश भूप करथि यदि कृपणता ॥५५॥

विजयी रहथि नरेश सेनापति यदि रणकुशल।
सैनिक सगरो देश भक्त होए जँ अतुल बल ॥५६॥

क्रमिक पराक्रम-ह्रास देखि समरमे चतुरमति।
सुनितहुँ खलपरिहास हीनसन्धि कर धरणिपति ॥५७॥

1 पश्चात्ताप। 2 कृपण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



वृथा करथि सङ्ग्राम बलक दर्पसँ जे नृपति ।
तनिका हो परिणाम तात ! प्रकृति-मण्डल-विमति[1] ॥५८॥

लड़ने वैरिक हानि अनायास संशयरहित ।
अपन लाभ पुनि जानि ठानथि रण नृप विज्ञ हित ॥५९॥

प्राणक डरसँ भूप जे शठ शत्रुक आक्रमण ।
सहथि, तनिक अनुरूप जीवनसँ निश्चित मरण ॥६०॥

कौशल युद्ध-कलाक आवश्यक थिक भूपकाँ ।
सुमति-नीति-परिपाक मन्त्रीकाँ सुरगुरु जकाँ ॥६१॥

शास्त्रविज्ञता पुण्य सेबथि सबतरि भूमि-पहु ।
कूट-नीति-नैपुण्य गर्हथि समय पर पुनि कतहु ॥६२॥

वैरि-भीरु भूपाल मन्त्री मूर्ख विरक्त भट ।
यदि हो, तँ जञ्जाल जीवक जानब रणनिकट ॥६३॥

सोचि बलाबल युद्ध करथि भूप जे तनिक जय ।
जे अविवेकी क्रुद्ध लड़थि जाथि से यमनिलय ॥६४॥

नृपमन्त्रिक वैमत्य[2] थिक समृद्धि-नाशक नियत ।
ई नीतिज्ञक सत्य अछि सर्वत्र प्रसिद्ध मत ॥६५॥

शरणागत-जन-त्राण क्षत्रिय-मात्रक धर्म थिक ।
रण उपेखि पुनि प्राण देशक रक्षा भूपतिक ॥६६॥

रातुक चारिम याम उठि सोचथि जे नृपति हित ।
तनिके भवन ललाम हो नव नव कल्याण नित ॥६७॥

जे प्रमादवश चूप उद्यम-अवसरमे रहथि ।
पराधीन से भूप सतत अवज्ञा-दुख सहथि ॥६८॥

विपति हेतु हो क्रोध ओ प्रसाद[3] सम्पति-जनक ।
जनिक, सपद्द अनुरोध[4]- पात्र भूप हो प्रियजनक ॥६९॥

---

1 विरक्ति । 2 मतभेद । 3 प्रसन्नता । 4 रोच ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जे मण्डल—सामन्त— हृदय चारनयनेँ लखथि ।
तनिक समृद्धि अनन्त नीति-विशारद-जन भखथि ॥७०॥

जे नृप देखथि कार्य अपनहि सुहृद-विचारसँ ।
सएह कहावथि आर्य[1] सेवित जाचल[2]चारसँ ॥७१॥

वैरिदर्पकेँ चूर्ण भुजविक्रमसँ जे करथि ।
तनिक प्रीति-परिपूर्ण जयलक्ष्मी पाछाँ धरथि ॥७२॥

रिपु-मद-नाशक वीर दीन अनाथ प्रजाक गति ।
सुभगप्रक्रिय[3] धीर लोकप्रिय हो धरणिपति ॥७३॥

जे बदला नहि लेथि बढ़ि वैरीसँ जिति समर ।
से कलङ्काँ देथि नियत वास नृप माथपर ॥७४॥

लाँघब जलधिक पाँत[4] रभसि उखारब मणि फणिक ।
तोड़ब सिंहक दाँत सुकर न आज्ञा नृपमणिक ॥७५॥

सार्वभौमपद बाँच अचलेशक[5] की अचल भए ? ।
जावत शस्त्र न नाच यात्रामे दिग्विजय लए ॥७६॥

भूपक इन्द्रिय पाँच भए असङ्ख्य बढ़बए व्यसन ।
से पुनि केवल बाँच जनिकाँ गुरु-उपदेश मन ॥७७॥

जे नृप कए अभिमान सुनथि न हित गुरुजन-कथा ।
आपत्ति-रइनि-बिहान[6] तनिका हो नहि सर्वथा ॥७८॥

भूपक भयसँ तात ! काँपए हृदय सभासदक ।
तेँ नहि उचितो बात साहस हो कखनहु कह'क ॥७९॥

भेँटत मित्र अनेक लोभेँ जे सभ प्रिय कहत ।
लखि आपत्ति कनेक झट दोसर आश्रय गहत ॥८०॥

---

1 श्रेष्ठ । 2 परीक्षित । 3 सुयश सुव्यवहार । 4 व्यतिरेक ध्वनि । 5 भूपति । 6 प्रभात ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



राखब वंशक मान दर्प दलब अरिदलक लड़ि ।
करब निरन्तर दान यश अरजव शुभपथ पकड़ि ॥८ ॥

पालव प्रजा समस्त विषम-दृष्टिकेँ दूर कए ।
परखब जे रिपु अस्त नहि प्रतापरविकेँ करए ॥८२॥

बुझि उपदेशक सार चीन्हब लोकक मन जहाँ ।
तँ नहि बनब गमार बाँचब वञ्चकसँ अहाँ ॥८३॥

ई कहि नीतिस्वरूप अमृत-मधुर तुर्वसु वचन ।
ठानल तनयक भूप अभिषेकक बहुविधिरचन ॥८४॥

पुष्य-दिवाकर जानि स्थिर-समृद्धि-दायक समय ।
सकल तीर्थजल आनि न्योति विज्ञ-ब्राह्मण-निचय ॥८५॥

राखि श्रुति-स्मृति-टेक भूपति विप्रविचारसँ ।
सुतक राज्य-अभिषेक कएल विपुल सम्भारसँ ॥८६॥

आहुत हुतवह भास वायुवेग पहुँचल गगन ।
लखि उत्सव सविलास भेल देवगण मुद-मगन ॥८७॥

स्वामी अभिनव भूमि पावि राजलक्ष्मी तथा ।
जनि आनन्देँ भूमि बनलि नवोढ़ा सर्वथा ॥८८॥

विमल पट्टपटसार[1] तुर्वसु डूबि उमङ्गमे ।
भूषण विविधप्रकार पहिराओल सुत-अङ्गमे ॥८९॥

सिंहासन बइसाए कनकघटित मणिगणखचित ।
मुकुट देल पहिराए विश्वकर्मकरसँ रचित ॥९०॥

श्वेत छत्र तनबाए हैँकाओल चामरयुगल ।
देलन्हि तिलक लगाए अपनहि करेँ कपाल-थल ॥९१॥

तुर्वसु समय विचारि सत्वर सुतकाँ दहिनकर ।
सोपल निज तरुआरि राज्यभार जनु मूर्त्तिधर ॥९२॥

1 उत्तमपाटक वस्त्र ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



बाजल बाजनपुञ्ज नाचलि गणिका-गण मुदित ।
तुमुल शब्द नभ गुञ्ज जनि करइत वार्ता विदित ॥९३॥

हृष्ट सकल सामन्त प्रजानिकर अधिकारिव्रज ।
उपदा अरपि तुरन्त सीस लगाओल चरणरज ॥९४॥

राजसैन्य चतुरङ्ग अस्त्रशस्त्रसज्जित सकल ।
सेनानायक सङ्ग प्रणत भेल आनन्दचल ॥९५॥

गुरुजन-चरण-प्रणाम प्रतिसत्कार तथा परक ।
हैहय शुभपरिणाम कृत्य कएल अवनीश्वरक ॥९६॥

द्विज गुरु पुरहित वृद्ध माए बाप ओ बन्धुजन ।
आशिषराशि-समृद्ध नवनृपकाँ कएलन्हि तखन ॥९७॥

नृप कहि वचन विनीत वितरि अशन भूषण वसन ।
धन दए आशाऽतीत परितोखल आगन्तुमन ॥९८॥

विधिवत कए सम्पन्न अभिषेकोत्सव नृपतिलक ।
तुर्वसु भेल प्रसन्न भार उतरलैँ भूतलक ॥९९॥

तदनन्तरहिँ सदार पूर्ण मानि गार्हस्थ्यविधि ।
कए तप कर'क विचार कानन चलल प्रमोदनिधि ॥१००॥

विरह जनक जननीक एकवीरकाँ अतिविकल ।
कएलक तैँ नहि नीक किछु समृद्धि ओ बुझि पड़ल ॥१०१॥

गुरुसेवाक प्रसाद ज्ञान किन्तु दए धीरता ।
नासल सकल विषाद भूपकर्म कहि वीरता ॥१०२॥

आज्ञा सुमरि पिताक शासनमे तत्पर रहल ।
तैँ बनिसहज अवाक खल निन्दा नहि कए सकल ॥१०३॥

लक्ष्मी रहि अनुरक्त वढ़लि मूढ़ममता जकाँ ।
लोक व्यसन-आसक्त देखल नहि नरपालकाँ ॥१०४॥

नव सुखशासन पाबि ऋद्धिसिद्धियुत सुप्रजा ।
एकवीर गुण गाबि तुर्वसुकाँ बिसरल प्रजा ॥१०५॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



मुनि-सत्सङ्ग-प्रवीण धर्मकर्मतत्पर सतत।
तुर्वसु ज्ञानिधुरीण तेजल भूति[1] विभूतिवत[2] ॥१०६॥

ओ बनि वानप्रस्थ वनहि कुटीर बनाए बसि।
ज्ञानविरागेँ स्वस्थ ममताकेँ त्यागल विहँसि ॥१०७॥

वसन विभूषण गेह सचिव सुहृद अत्तय-विभव।
प्रियतम-तनय-स्नेह बिसरल वनी[3] विरक्त सब ॥१०८॥

छूटल जगतक शोच भेल शान्ति-सुखमय हृदय।
रहल न ककरो रोच छल समाधिमे मन विलय ॥१०९॥

पतिशुश्रूषालीन सपनहु नहि सुमिरल भवन।
भेल न कखनहु दीन एकतान[4] रानीक मन ॥११०॥

बाहर-वृत्ति समेटि अन्तर्मुख निश्चल अधिक।
मलिन वासना मेटि चित्त भेल निर्मल तनिक ॥१११॥

अविरल-मङ्गल सद्म स्त्रीसमेत अवसर चरम।
जगदम्बा पदपद्म पुजइत पाओल पद परम ॥११२॥

वर्नाह महानिर्वाण[5] जननी जनकक सुनि नृपति।
नश्वर जगनिर्माण जानि भेल निश्शोक-मति ॥११३॥

उचित विभव-औदार्य- उत्साहक ओ श्रद्धहुक।
एकवीर नृप-कार्य कएल और्ध्वदैहिक[6] दुहुक[7] ॥११४॥

हैहय मानवराज काजमे जननीतातक,
कएलन्हि उत्तम भोज ओज[8] परिहरि यशघातक।
पावि विविधसम्मान दानसँ अतुलित सम्पति,
आगत सभ सन्तुष्ट दुष्ट मुख भेल मलिन अति।
आशिष देल प्रसन्नमन जनता सुनि पुनि माण्डलिक,
कीर्तिपताका भुवनभरि फहरापल चहुदिसि तनिक ॥ ११५॥

इति षष्ठसर्ग

---

1 ऐश्वर्य। 2 भस्मजकाँ। 3 बानप्रस्थ। 4 एकाग्र। 5 मोक्ष।
6 परलोकोपकारक श्राद्ध। 7 माइ बापक। 8 कृपणता।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# सप्तम सर्ग

तावत एकवीर नरनाथक गुणवश सेबल सदिखन ।
अति सुन्दर उपवन कुसुमाकर तनु पुनि नूतन यौवन[1] ॥१॥

लए मलयानिल-अलिकुल-कोकिलवलय-कलानिधि-सेना ।
सुरभि शिशिरकेँ जीति निकालल नृप वैरीकाँ जेना ॥२॥

कचकलाप शिरसञ्चित कुञ्चित चञ्चरीक[2]-रुचि जीतल ।
गर्व कलापक दूर मयूरक गेल भेल मन शीतल ॥३॥

कोकिल-कुहुक अकोनि शिशिर ध्रुव अपन प्रबन्ध उसारल ।
सेनापति मन्मथ ऋतुराजक जग अधिकार पसारल ॥४॥

रुचिर ललाट अष्टमी-चानक सुन्दरताकाँ छीनल ।
भूमिपतिक भ्रूयुग विनु दामहिँ काम-धनुष-दुति कीनल ॥५॥

दछिन-पवन झट गमहि आबि पथ सुरभित करइत झारल ।
हरखि कुसुम-रस बरखि लतातरु मधु-सञ्चार प्रचारल ॥६॥

शोभल कुङ्कुम-तिलक भालपर लाल युवक-नरपालक ।
प्रभा-जाल जनु रविक कनक-गिरि-शिखरहिँ प्रातःकालक ॥७॥

मलय-समीर धीर भए बहइत युवजन-मानस मोहल ।
करइत नमित कुसुम-धनु मदनक दहिन-बाहु-सम सोहल[3] ॥८॥

चान छान[4] दए कमल मधुप धए विधि प्रतिदिन कत सीखल ।
तखन तनिक आनन-मण्डलमे भ्रूलेखा ध्रुव लीखल ॥९॥

सरस व्रतति-ततति-परस सुरस-वश करइत विपिन प्रदक्षिण ।
दक्षिण पवन विरह-हुतवह-हित पथिकक भेल अदक्षिण[5] ॥१०॥

तनिक नयन-युग के न युवति लखि मन-स्वतन्त्रता बेचल ।
सेवित रवि जनु मीनमिथुनकाँ नलिनराज्य अभिखेचल ॥११॥

---

1 तुल्ययोगिता अथवा समुच्चय । 2 भ्रमर । 3 शोभित भेल । 4 कलङ्क ।
5 प्रतिकूल ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जे पिक-दर्प मयूर-हंस-बल निरखि पूर्व छल बिलटल ।
से ऋतुराजक जग-विभुता लखि द्विगुन भेल पुन पलटल ।।१२।।

लोचन-रुचि न कोकनद कुवलय इन्दीवर वा पाओल ।
जेँ शिल्पी विधि रक्त-सितासित अद्भुत ताहि बनाओल ।।१३।।

तरुवर-निकर छीन पतझड़सँ नवदल-माला-मण्डित ।
घर घर मान बखानि विनासल मदनतन्त्र पिक-पण्डित ।।१४।।

नरपालक नासा-सुन्दरता निरुपम कीर[1] अकानल[2] ।
लखि स्वचञ्चु कल-व्याज लाज-वश वन वसि कए जनु कानल ।।१५।।

काजर-रङ्ग मत्त कानन-चर पोषक-द्वेषक[3] नामी ।
पवइत पिक सम्मान कतहु की जँ वसन्त नहि स्वामी ? ।।१६।।

श्मश्रु[4]-राजि अङ्कुरित वदनपर नृपक रुचिर-रुचि ठानल ।
नलिन उपर नव-शैवल-लतिका[5] जकरा दर्शक जानल ।।१७।।

जे कोकिल-कलरव सय्योँ गिक हृदय सुधारस सीँचल ।
गरल-प्रवाह बहाए सएह पुनि विरहि-प्राणकेँ खीँचल ।।१८।।

नृपक अधर-दल भोजपत्रपर लिखि रेखा विद्यानिधि ।
तरुणी-वशीकरण-सम्मोहन-यन्त्र लिखल मानू विधि ।।१९।।

स्मर-नरपालक कोतवाल पिक सूतल तरुण जगाओल ।
मुकुल विपुल चूतक जेँ वेतन मधुमन्त्रीसँ पाओल ।।२०।।

एकवीरनृप-दशन हीर-द्युति मोतिक जोति घटाओल ।
पानक रस-सम्बन्ध पावि पुन दाड़िमबीज हटाओल ।।२१।।

कुसुमायुधसँ उद्बोधित विधु हिमतन्द्राकेँ त्यागल ।
विरही-हरिणदलन-दावानल जनु पलाशवन लागल ।।२२।।

---

1 सूगा । 2 सुनल । 3 पोसनिहार (कौआ)क द्वेषी । 4 दाढ़ीमोछ ।
5 सेमारक लत्ती ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri


कुन्दकली-सुन्दर-दशनावलि अधर बिम्बफल-पाटल।
मुक्तापङ्क्ति-विमल-विद्रुमदल- दर्पद्रुमकाँ काटल ॥२३॥

शिशिर-दलित किसलयित कमलिनी भए बहु-कोरक पाओल।
मधु-लोलुप-मधुकर-निकरक धुनि-छल सङ्गीत सुनाओल ॥२४॥

कुण्डल-मण्डित कुटिल कर्णयुग तनिक मनोरम भासल।
जे कुण्डलित[1]-रतिस्मर-पाशक रुचि-परिहास विकासल ॥२५॥

कर्णिकार[2] हरितालवर्ण बहु महु उपवनमे फूलल।
स्वर्णक कर्णफूल जनु ललना-शुचि-कपोलतल झूलल ॥२६॥

कृष्णपक्षमे घटल कलङ्कित चन्द्र तमोग्रहशङ्की।
हरिदल हर्षबढ़ल भूपक मुख तिमिरवैरि अकलङ्की[3] ॥२७॥

तरणिकिरण भए सबल गलाओल तुहिननिचय प्रतिपक्षी।
मदन-महीप-अनुग-उन्मद भल कलरव पाओल पक्षी ॥२८॥

ग्रीवा[4] हैहयधरणीपालक तीनिरेखसँ भूषित।
कण्ठक अनायास जे शङ्खक अनुपमता मद-दूषित ॥२९॥

सौरभ-सार-भारसँ दश दिसि पूरित करइत चम्पक।
कुसुमित भेल निमित्त वियोगी-जन-मन-निर्भर-कम्पक ॥३०॥

वक्षस्थल छल तनिकर उन्नत कठिन-विशाल-शिलासम।
लगने जतए विफल हो निश्चय इन्द्रायुधहुक[5] विक्रम ॥३१॥

घन-दल-जाल-तमाल-साल[6]-बिच उपवन विकसल चम्पा।
नव-जलधर-निकरक अन्तर जनु भेल विराजित शम्पा[7] ॥३२॥

शस्त्र-क्षत-चिन्हहिसँ मण्डित भेल तनिक जेँ छाती।
अलङ्कार तत अलङ्कार[8] छल तेँ मणिमुक्तापाँती ॥३३॥

---

1 लपेटल। 2 कनैल। 3 व्यतिरेक। 4 गरदनि। 5 वज्रहुक।
6 वृक्ष सामान्य वा साँखु। 7 विद्युल्लता। 8 अप्रयोजक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



नाम यथार्थ मानि पथिकव्रज स्फुटअशोकके सेबल ।
ओ पुनि मदनदहन उज्ज्वल कए शोक बढ़ाओल केवल[1] ॥३४॥

भए गम्भीर कुतूहल तेजल मन शिरीष-सुकुमारक ।
सञ्ज सञ्ज सञ्चार-योग्य बनि समय-प्रभावें मारक ॥३५॥

स्फुट सहकार[2] मार-सहकारक बनल वाण-निर्माणे ।
अशरण-विरहिगणक निष्कारण-वैरी हरलक प्राणे ॥३६॥

दूरहिँ तनिक हृदयसँ जड़ता विद्याभयें रहल पुनि ।
दान-वीरता-डरें कृपणता बाहर बैसल शिर धुनि ॥३७॥

नव नेवारि-वारिरुह-बेली-भालसरीक विकासें ।
मधु-लम्पट षट्पदक गेल दिन गमनागमन-विलासें ॥३८॥

देल ततए अवकाश न पैस'क भयकाँ शौर्य प्रतापी ।
देखि विवेक फड़ाक पड़ाएल क्रोधलोभमद पापी ॥३९॥

वकुलमुकुल[3] अवलोकि तृषाकुल अलिकुल डेरा देलक ।
गुञ्जन मञ्जु सुनाए रसिकजनमन सहजहिँ हरि लेलक ॥४०॥

हृदय दीनमे जे नरपालक नवनीतहुसँ कोमल ।
सएह पखानहुसँ कठोरतर वैरिनिकरमे पुनि छल ॥४१॥

सीमर-लाल-फूल-कपटें जनु ऊपरसँ पाटक पट ।
कान्त वसन्त देल परिणयमे वनलक्ष्मीकाँ घोघट[4] ॥४२॥

विपुल-विनय-आच्छादित मनमे तनिक गर्व छल उज्ज्वल ।
जनि घन-पटल-तिरोहित पावस-पर्व-सुधानिधि-मण्डल ॥४३॥

सूगा फूल देखितहिँ सिमरक फल-आशासँ लुबुधल ।
लगने अन्त लोल भरि तूरक भूरचित्त भए ऊड़ल ॥४४॥

शैशव विक्रमतरुक बीज जे तनिक हृदयमे रोपल ।
यौवन कए शतशाख लाखवर महिमा तकरा सोपल ॥४५॥

---

1 विषम । 2 आम । 3 भालसरीक कली । 4 सापह्नवोत्प्रेक्षा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



परिमल-लोलुप-अलिकुल-लालित कतहु फुलाएल दमनक[1]।
चलल प्रवासी मदनवेदना-दलित सदन तेँ शमनक ॥४६॥

नयकौशल-उत्साह-पराक्रम-विजिगीषा-सम्मेलन।
हृदयस्थित क्षितिनाथक कएलक वैरि-निकर-उद्वेजन ॥४७॥

भेल विकच कचनार वसन्तक महिमा बहुत बढ़ाओल।
स्मरशर भ्रमरनिकर बुझि लोहेँ तकरा बैसि मढ़ाओल ॥४८॥

तनिक हृदय छल मत्सर-वालिक ऋष्यमूक-धरणीधर॥
तथा असूया-मृदुल-वल्लरिक ग्रीष्मदिवस-मरुऊसर[2] ॥४९॥

कएल गुलाब फुलाए सुरभिसँ उपवनकाँ अति महमह।
गाँथल शरसँ विरहिदेहकेँ कुसुम-शरासन गहगह ॥५०॥

एकवीर-नरनाथक मनमे रहल धीरता अविचल।
दिव्य-सुन्दरी-निकर निरखितहुँ तेँ विकार नहि उपजल ॥५१॥

आम-मजर, मधु, सौरभसँ पिक, मधुकर, दछिन-पवनकेँ।
जँ न वसन्त तोखितथि, तँ स्मर जिततथि की त्रिभुवनकेँ ? ॥५२॥

उन्नत-अंसयुगल[3]-लागल भल भूपतिभुजा विराजल।
सुरगिरिवर-दुइशिखर-बद्ध जनु कनक-विशाल-लता छल ॥५३॥

ज्या मधुपानतरल-मधुपावलि मृदुलकुसुम धनुसायक।
तदपि अनङ्ग विरहिमन बेधल जेँ छल सुरभि सहायक ॥५४॥

निरखि मृणालमृदुल नरपतिभुज चतुर जनो नहि जानल।
अश्मसारसम[4] सार विपुल जे विहिसँ निहित ततए छल ॥५५॥

अकरुण तरुणपथिकमृगमृगया व्यसन निवाहल कामक।
सकल लतातरुमण्डल विकसित कए मधु वन-आरामक ॥५६॥

पीवर जानुविलम्बित भुजयुग फणिपतिसदृश नरेशक।
पालनभार जतए अवलम्बित छल भूतल सभ देशक ॥५७॥

1 दोनाफूल। 2 वैधर्म्यरूपक। 3 दुहू स्कन्ध। 4 लोहजकाँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



सोपथि विरचि असङ्ख्य शिलीमुख जनिक सखा ऋतु-नायक।
से कोना प्रभुता न बढ़ाबथु पथिकवधें सुमसायक ? ॥५८॥

नृप-मणिबन्ध[1] पाबि मणिबन्धन कनक-बलय-सम्पर्कें।
मणिराजित-फणिवर-विशाल-शिर भेल विदित बुधतर्कें ॥५९॥

सुरभि-कलाल चुआओल जगभरि विनु यन्त्रहिँ कुसुमासव।
मदन अनङ्ग बनल जकरहिँ बल प्रमदा पुनि अबलासव[2] ॥६०॥

दान-सलिल-भीजल अनुखन अतिकोमल अवनिपतिक कर।
निरखि नुकओलक मूह लाजसँ गजराजक कर्कश कर ॥६१॥

प्राणपणें पाशी ताड़क रस तुङ्गशिखर चढ़ि लाएल।
जे पिबितहिँ श्रमजीविक-जन-मन ब्रह्मानन्द समाएल ॥६२॥

हस्त प्रशस्त-विभा भूपालक किसलयकें कए लज्जित।
विनु प्रयास पुनु कोकनदहुकाँ कएलक सलिल-निमज्जित ॥६३॥

मत्त-मधुप-धुनि सुनि वसन्त गुनि मानिनि मान समेटल।
केलि-तरल अलबेलि दयित-गल भुजयुग-बेलि लपेटल ॥६४॥

इन्दिराक मन्दिर, विधि-आसन, अवलम्बित-गरुड़ध्वज।
तनिक करक तुलना नहि पाओल तदपि कनेको पङ्कज ॥६५॥

बढ़ल मलिन रजनी घटाए शुचि वासर छीन बढ़ाओल।
रति-प्रतिबन्धक हरल मान मधु तें ऋतुपति-पद पाओल ॥६६॥

विषमबाण-तूणीरक शोभा नृपतिक कर अपनाओल।
अङ्गुलि-पाँचो-बाण जतए छल ललितरेख हिङ्गुराओल ॥६७॥

कतहु लवङ्गलता छल विकसल भ्रमरभारसँ लचकल।
माधवीक मृदु डारि कतहु पुनि कुसुमगुच्छसँ मचकल ॥६८॥

हैहय करमे द्रुहिण[3] दिव्य जनु दानशक्ति रहबा लए।
अङ्गुलि-पञ्चक छलसँ पाँचो सुरपादप देलन्हि धए ॥६९॥

---

1 पहुँचा। 2 विरोध। 3 ब्रह्मा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



प्रिय यद्यपि शिशिरो छल युवतिक सुरत-श्रमक परिहारेँ।
प्रियतम किन्तु वसन्त भेल नवकेलिकला-विस्तारेँ॥७०॥

शङ्ख, चक्र, ध्वज, वज्र, मीन ओ पङ्कजसँ कर मण्डित।
नृपक निरखि के भेल न विस्मित-मन सामुद्रिक-पण्डित!॥७१॥

यदि विलास-अनभिज्ञो खगमृग उन्मद विहरए लागल।
तँ उचिते रति-रसिक तरुणगण केलिकलाप पसारल[1]॥७२॥

स्वर्ण-वलय-वेड़ी लए बान्हल श्रीकाँ नृपकर धाता।
चपला जाथि पड़ाए कतहु नहि, रहितहुँ नृपतिक दाता॥७३॥

उपवन पैसि पवन नव-कुसुमित चूतलता झिकझोरल।
रसलोलुप-लोलम्ब-कदम्बक निसिदिन आबि अगोरल॥७४॥

जम्भरिपु[2]-ध्वज कनकस्तम्भक दम्भ ऊरु[3] संहारल।
जानू जानुविभा लखि तनिकर सुरकुञ्जरकर हारल॥७५॥

नूतन पाबि वसन्त-समागम विकसल माधवि आधा।
जनु अनुरागक उन्मीलनमे देल लाज भय बाधा॥७६॥

आरत-शरण चरण भूपक छल सुषमा-शरण अनारत।
तुलना नवपल्लव नहि पओलक जकर लगओनहु आरत[4]॥७७॥

मन्मथ-शर-आघात-यातना पहिने बहुत अङेजल।
प्रबल-वसन्त-प्रताप-ताप लहि तापस जपतप तेजल॥७८॥

अद्भुत निसिदिन तुल्य-रुचिर-रुचि रहल अनीरज नीरज[5]।
नख-विधु-सय्योँगहुँ नहि सकुचल अवनिपाल-पद-पङ्कज॥७९॥

कुसुमक[6] कुसुम-पराग रागवश केवल जकरा सूझल।
षट्पद-पटल कटु-क्षत काँटक से किछुओ नहि बूझल॥८०॥

---

1 अर्थापत्ति। 2 इन्द्र। 3 जाँघ। 4 विरोध। 5 जलमे अनुत्पन्न। धूलिरहित। विरोध। 6 पुष्पविशेषक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



इलातनय[1]-सुरवैद्ययुगल[2]-रतिनाथक रुचिमद-ममता ।
क्षितिहरिहय[3] हरि हैहय थापल निजसौन्दर्य-असमता ॥८१॥

अलिनी रजनीदिवस गमाओल प्रियतम-सङ्गहिँ भमइत ।
प्रोषितपतिका पाबि कान्तकेँ बसि एकान्तहिँ रमइत ॥८२॥

पाबि यौवने निरवधि सुषमा तनुक मनुजभू-भर्ता ।
गनल न तृणसम बनल सुभगतम मदनमदक संहर्ता ॥८३॥

सुरभि-प्रताप-तपन-आतप हरि शिशिर-सुहृद पालाकाँ ।
पलकहिँ प्रियपदप्रणत बनाओल प्रणयकुपित-बालाकाँ ॥८४॥

नृपसौन्दर्य दृष्टिपथ जनिकर पड़ल- पलोभरि से धनि ।
लोकलाजकेँ देल तिलाञ्जलि के न मनोजक वश बनि ॥८५॥

कुसुमाकर निर्माए धनुषशर सुहृदहाथमे छोड़ल ।
मन्मथ-मथित-चित्त पथिक-व्रज जीवन-आशा तोड़ल[4] ॥८६॥

वीर वैरि-भट शील-शालिनी ललना लखितहिँ केवल ।
एकवीर नरपतिकेँ, धैरज तेजि चरण-रज सेवल[5] ॥८७॥

परपुष्टाश्रय[6] बलित-मधुप[7]-चय जग-अभिसार-प्रसारक ।
पाओल तदपि महित ऋतुपतिपद सुरभि सखा भए मारक ॥८८॥

भूप-प्रताप-दाप दुस्सह लहि दुर्जन-साहस टूटल ।
सज्जनमन आतङ्करङ्क[8]भए शान्ति-मधुर-सुख लूटल ८९॥

मातल तरुण प्रवास उपेखल पाबि गाढ़-भुज-बन्धन ।
मधु-उन्मद प्रमदा पुन तेजल विरहभीरु वरु रन्धन ॥९०॥

देखि तनिक आकार परखि झट हृदय दया-रस-भीजल ।
जीवन-आस पाबि खलरिपुहुक मन आनन्द पसीझल ॥९१॥

---

1 पुरूरवा। 2 दुहू अश्विनीकुमार। 3 पृथिवीन्द्र। 4 समुच्चय। 5 तुल्ययोगिता वा समुच्चय। 6 परपुष्ट=कोकिल, पक्षान्तरमे परपुष्टा वेश्या। 7 मधुप=भ्रमर, मद्यप। 8 निर्भय।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



बहुत दिवसपर निरखि परस्पर लोचन तृषित जुड़ाओल ।
मुद-अधीर स्मर-समर-वीर युव-युगल अबीर उड़ाओल ॥९२॥

प्रजा, युवति, याचक, वैरी ओ खल भूपतिकाँ जानल[1] ।
पिता, मदन, कल्पद्रुम, अन्तक तथा प्रलयकालानल ॥९३॥

अक्षय रति-सुख-काम कामरति पूजल मानस मुद भरि ।
पीसि अशोक-कली अभिमन्त्रित पीउल नागर-नागरि ॥९४॥

गुरु गुरु-बुद्धि-विभवसँ नृपतिक अतिशय विस्मय पाओल ।
वाणी वाणी-पाटव नव लखि मस्तक चकित हिलाओल ॥९५॥

झालि डम्फ करताल बजवइत गबइत रुचिकर होरी ।
तरुण परस्पर उमगि लगाओल तनु फुलेल मलि रोरी ॥९६॥

काव्य-कला-कौशलसँ काव्यक[2] मन आशङ्का धएलन्हि ।
दर्पक-दर्पक[3] अन्त रूपसँ भूप असंशय कएलन्हि ॥९७॥

अलि-गुञ्जित पिक-कूजित किसलय-मण्डित मधुमे सब तरु ।
कर विहार लए दार-युवति रति-पण्डित युवजन सबतरु ॥९८॥

तनिक शौर्य्यविख्यातो राजा स्पर्धा करए न पारल ।
बूढ़ो मन्त्रीगण विचारमे लखि विचित्रता हारल ॥९९॥

पीउल मधु भरि मधुभरि[4] मधुकर-मिथुन कुसुम-दल-दोना ।
युवति-युवक-मन-उच्चाटनहुक काम कएल किछु टोना ॥१००॥

सुरभि-सुरभि उपवनमे विचरल नृप नवयौवन-शाली ।
सुरभि सुरभि-मग[5] गगन बीच जनु राका-हिमकर-माली ॥१०१॥

बीतल नित नवनव विलाससँ रचइत अमित कुतूहल ।
प्रिया-सङ्ग प्रियतमक महोत्सव-मय वसन्त-ऋतु जनु पल ॥१०२॥

---

1 यथासङ्ख्य-उल्लेख । 2 शुक्रक । 3 कामगर्वक । 4 वसन्तपर्यन्त ।
5 कामधेनुक मार्ग ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



दिक्पालहुक अंश यदि नरपति पाबथि अनवधि गरिमा ।
तँ श्रीनारायणक तनुज-तनि-गुणक कहत के महिमा ? ॥१०३॥

जँ वाक्पति-मति शारद प्रतिभा जीह सहसदुइ पाबथि ।
तँ कदाच हैहय-महिनाहक कवि अशेष गुण गाबथि ॥१०४॥

छल[1] अनीति[2] हरि देशकेँ नृपति सुखी कए देल ।
छल अनीति[3] पुनि ततए तेँ दुख ककरहु नहि भेल ॥
दुख ककरहु नहि भेल गेल दारुण दुष्टक भय,
बाढ़ल शिक्षाऽऽलोक[4] लोकमन रहल मोदमय ।
बीतल विबुधसमान मानवक दिन पृथिवीतल,
बिनु मङ्गनहि लहि भव्य द्रव्य नहि भिक्षुक पूछल ॥१०५॥

इति सप्तम सर्ग

1 कपट । 2 अन्याय । 3 अतिवृष्ट्यादिरहित । 4 प्रकाश ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# अष्टम सर्ग

तदनन्तर कृत-नित्यकृत्य कोनहु दिन हैहय,
सखा मन्त्रिसुत बहुत सङ्ग लए चढ़ि सुन्दर हय ।
वासव उच्चैश्श्रवा-पीठपर आरोहण कए,
देव-सहित जनु बिदा भेल कौतुकवश टहलए ॥१॥

नित्य निरखितहुँ भूप-रूप नहि तृप्त नगर-जन,
पथ-दुहु-दिसि भए ठाढ़ गाढ़ छल उत्कण्ठा मन ।
एकवीरकाँ देखि लेखि निज दिवस सुफल सभ,
कए जंयकार-उचार तार-रव[1] त्वरित भरल नभ ॥२॥

पुरसँ नृप बहराए जाए देखल निज जनपद[2],
सकल प्रजा सानन्द पाबि नित नव सुखसम्पद ।
जाति-कुलोचित-वृत्ति सबहु कए मीलि परस्पर,
अध्यवसायबलेँ पहुँचल उन्नतिक शिखरपर ॥३॥

सब उत्सवमय गाम नाम नहि जतए विरोधक,
घर घर नृप-यश-गीति नीतिमत-शासन-बोधक ।
प्रतिपद साभिनिवेश[3] क्लेशहारक हरि-अर्चा,
आगम-निगम-विचार धारणा[4]-ध्यानक चर्चा ॥४॥

प्रतिगृह गुरु-उपदेश क्लेश-नाशक हितकारक,
सुनि नश्वरता जानि हानि-पोषक संसारक ।
धर्मकर्ममे निरत विरत पाखण्ड-सरणिसँ,
तरए भवाब्धि अथाह चाह नर ज्ञान-तरणिसँ ॥५॥

---

1 उच्चध्वनि । 2 अपन देश । 3 आग्रहपूर्वक । 4 अष्टाङ्ग-योगक छठम ओ सातम अङ्ग ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



ब्रह्मचारिजन कतहु वेद-अध्ययन-परायण,
कतहु अतिथि-सत्कार--मग्न-मानस गृहस्थगण।
वानप्रस्थ-समूह कतहु तापस वनवासी,
आत्मज्ञान-विलीन कतहु बहुतो सन्न्यासी ॥६॥

कृषक कतहु जोतए उपेखि श्रम समय पेखि हर,
नमल-सीस नव सस्य कतहु पुनि खेत मनोहर।
तरुतर वइसल कतहु कुतूहल कर बहु जनता,
ग्राम्य-गीत हर चित्त पाबि स्वर-सङ्कर-घनता ॥७॥

सरिता कतहु अगम्य, रम्य वन कतहु निरन्तर,
वापी कूप तड़ाग सागरक कतहु साम्य कर।
गगन-वितत-शत-शृङ्ग भृङ्गरुचि कतहु घनोपम,
पर्वतश्रेणी राज राजप्रासाद-मनोरम ॥८॥

सदय उदार-प्रकृति[1] प्रकृति[2]-मण्डलक अवस्था,
लखि करइत नरपाल पालनक उचित व्यवस्था।
प्रतिपद सुनइत चित्र मित्र-आलाप उरुक्रम[3],
गनल न किछु आनन्द-कन्दलित-मन मार्गश्रम ॥९॥

विधिक अलौकिक सृष्टि दृष्टि-आकर्षक लखइत,
मुदित-चित्त पीयूष-यूष[4] जनु नयनें चखइत।
नृपति प्रचण्ड-प्रताप ताप मार्तण्डक[5] हेरल,
सुरसरि-दर्शन-काम वामदिसि हयकाँ फेरल ॥१०॥

पवन-मनहुँ उद्वेग वेगसँ करइत वाजी,
पहुँचल गङ्गातीर नीर-पावन-तरुराजी।
भूप धवल जलधार सारसम सत्त्वक[6] देखल,
आमोदित-मन अपन भाग जागल परिलेखल ॥११॥

---

1 स्वभाव। 2 प्रजा। 3 उत्तमरूपक। 4 अमृतसार। 5 सूर्यक।
6 सत्त्वगुणक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



गोविन्दक चरणारविन्दसँ जे बहराएल,
विधिक कमण्डलु पैसि धूर्जटिक जटा समाएल।
जानि सगर-सुत-कलुष शुष्क-तृण-राशि-दवानल,
भूप-भगीरथ जकरा तपबल महितल आनल ॥१२॥

अवनीमे निश्शङ्क पातकी जकर भरोसेँ,
यमराजो रहि जाथि हाथ मलितहिँ जनु रोसेँ।
जकरा देखि तुरन्त मनुजमन कलुष-विमुख हो,
अन्त स्वर्ग अपवर्ग अनन्त अनन्तर सुख हो ॥१३॥

दूरहिँ सङ्गी-सहित अश्वसँ उतरि महीपति,
कए प्रणाम सुरसिन्धु-निकट झट जाए विमलमति।
जनु हरिनाभी-पद्म सद्म पद्माक सुपरिमल,
देखल शतदल कमल एक जलमे छल विकसल ॥१४॥

तकर दहिनदिसि ठाढ़ि रूपमे रतिसँ धन्या,
पावि असह्य कलेस एकसरि कनइत कन्या।
लखितहिँ पुहमी-पतिक दयासँ सान्द्र भेल मन,
दीनक दुख नहि देखि सकथि करुणामय सज्जन[1] ॥१५॥

दुःखिक रक्षा क्षात्र-धर्म बुझि सत्वर हैहय,
प्राणपणहुँ साहाय्य कर'क चित्तहिँ कए निर्णय।
सुहृद्भावसँ निकट जाए उत्सुक भए पूछल,
"सुमुखि! अहाँ के थिकहुँ कहू से, जानू जनु छल ॥१६॥

देवि! अहाँ की रति अनङ्ग पतिकेँ तकइत छी?
करइत शक्रक खोज शची की पथ थकइत छी?।
हरिक हेतु वा रमा जलधिसँ बहराइलि छी?
किंवा शिवक उदेश उमा बूझए आइलि छी? ॥१७॥

---

1 अर्थान्तरन्यास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



नाग-वधू पाताल-लोकसँ ऊपर अएलहुँ ?
सुर-ललना वा त्रिदिव त्यागि धरणी पद धएलहुँ ? ।
मनुज-भुवनमे कोन एहि सौन्दर्यक सम्भव ?
किंवा आविष्कार भेल अछि एतहु ई नव ? ॥१८॥

कोन कारणेँ कहू अहाँ कनइत छी, बाले ! ?
सुख दुःखक उत्पत्ति-मूल मानल अछि काले ।
अथवा अपन अदृष्ट ईश्वरेच्छा वा जानू,
तेँ कातरता त्यागि चित्तमे धैरज आनू ॥१९॥

की ककरहुसँ कलह भेल अछि दुस्सह घरमे ?
कोनो गुरु-अपमान भेल अछि वा नैहरमे ।
की वल्लभ परदेश गेल छथि छाड़ि अहाँकेँ ?
किं वा व्याकुल छी कोनहु सहचरि-दुख-पाँकेँ ? ॥२०॥

अथवा केओ दुष्ट दुसह साहस कएलक अछि ?.
मणिक लोभसँ फणिक शिखरपर कर धएलक अछि ? ।
कहू नाम ओ देव-दनुज-मानवमे के थिक ?
जँ नहि मारी एक शरहिसँ, तँ हमरा धिक ॥२१॥"

वेष वचन आकार तथा व्यवहार परखि कए,
पुरुष-राजकेँ जानि आस उद्धारक मन धए ।
अपन दुःख-वृत्तान्त दयोदयजनक-स्वरसँ,
क्रमहिँ कहए लगलीह बालिका अवनीश्वरसँ ॥२२॥

"सुभग ! विना आपत्ति कतहु नहि कानथि प्राणी,
सावधान रहि सुनिअ हमर करुणामय वाणी ।
आनक विपति परेखि होथि आनन्दित दुर्जन,
करथि व्यथित-मन प्रतीकार समुचित पुन सज्जन ॥२३॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



सौम्य ! सौम्य[1]-सम बुद्धिमान वक्ता वाक्पति[2]-वत,
शक्रक सदृश समृद्ध शुक्रसन नय-मत-सम्मत।
तेजस्वी रवि-कल्प[3] कल्पतरु-तुल्य दानरत,
'रैभ्य'[4] नाम छथि नृपति एक विख्यात न जग कत ॥२४॥
प्रजा[5] द्विभुज-गोविन्द द्विलोचन-हर वैरीगण,
चिन्तामणि चैतन्यशालि याचना-परायण[6]।
पुरुषभाव-सम्प्राप्त भारती विद्यायोगी,
धर्मराज नररूप बुझथि जनिकाँ अभियोगी[7] ॥२५॥
प्रायः प्रतिदिन वेदवाक्य अनुहारि समर्पित-
यज्ञभागसँ अनुगसहित भए अतिशय तर्पित।
असुर-समरमे कठिन समयपर जानि सहायक,
आसन आधा छाड़ि देथि जनिकाँ सुरनायक ॥२६॥
श्रुतनय[8] विनय-प्रवीण, मधुश्रित मधुसूदन-रत,
ओजस्वी प्रियवीर अवीर-प्रीत केलिगत।
इष्ट-कैरवामोद[9] कैरवामोद[10]-निवारक,
जे अनुदार[11] उदार चार-संवलित विचारक ॥२७॥
दलित-तनुद्युति-निकष-रुक्मरेखा-रुचिराभा,
कान्त-सेविनी सतत घनाश्रित जनु अचिराभा।
भवक अमित-सौभाग्य-शालिनी यथा भवानी,
गुणहुँ धनिक छथि तनिक 'रुक्मरेखा' पटरानी ॥२८॥
धन-यौवन-सुख-भोग-अनन्तर सन्ततिहीना,
विलपि हृदय-दुख कहल कान्तसँ रानी दीना।
सुसमय देखि बजाए भूमिसुर-समुदय सादर,
पुत्रेष्टक[12] आरम्भ कराओल मनुजपुरन्दर ॥२९॥

1 बुधग्रह समान। 2 बृहस्पतिजकाँ। 3 सूर्यक सदृश। 4 एकावलीक पिता। 5 उल्लेखरूपकातिशयोक्ति। 6 याचक। 7 अभियोग कएनिहार। 8 विरोधाभास। 9 कुमुदक सौरभ। 10 शत्रुक आनन्द। 11 स्त्रीसँ अनुगत। 12 पुत्रोत्पादक यज्ञ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अभिमन्त्रित घृतधार-धोरणी-तृप्त हुताशन,
कएल अभीष्टक सिद्धि भूपतिक अति प्रसन्नमन।
बहराइलि मखकुण्ड-पयोनिधिसँ विधिजन्या,
सत्वर रमासमान शील-सौभग-निधि कन्या ॥३०॥

देखि अपन मखकर्म सफल होता आनन्दित,
शिशु अरपल नरनाथ-हाथमे भए अभिवन्दित।
ईदृश प्रथम अलभ्य-लाभ कए रैभ्यमहीपति,
प्रिया-कोरमे देल भेल उल्लास-तरल-मति ॥३१॥

दिव्य-सुन्दरी सुता पाबि हर्षित नृपदारा,
बिसरल तनयकचोट बहल दृग-दुहु जलधारा।
शिशुक जातकर्मादि पुरुषवत् करबाओल सब,
राजभवनमे त्वरित भेल प्रारम्भ महोत्सव ॥३२॥

एकावली[1]-समान मानवी-वलय-विभूषण,
तनयाकेँ अतिहरखि परखि गुण-खानि अदूषण।
शास्त्रोदित विधि जानि ज्ञानिवर शरणागतगति,
'एकावली' ललाम नाम राखल अवनीपति ॥३३॥

चपलेँ कादम्बिनी, चूतलतिका मञ्जरिएँ,
काकलिएँ पिकपालि, फूलबाड़ी वल्लरिएँ।
ललना यौवनदशेँ, शरद जनु हंसावलिएँ,
सुषमा पाओल भूप-भामिनी एकावलिएँ[2] ॥३४॥

शुक्लपक्षमे चन्द्रकला, पावसमे सरिता,
तप-आतपमे तृषा, दुष्टजनमे मत्सरिता[3]।
जनु उत्कलिका चिरप्रवासमे, लालनसुहिता[4],
अपनाओल परिणाह[5] प्रतिक्षणमे नृपदुहिता ॥३५॥

---

1 मौतिक माला। 2 मालोपमा। 3 अन्यशुभद्वेष। 4 लालनेँ तृप्त वा अनुकूल। 5 वृद्धि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कृपणक सम्पतिमे, निदाघ-पान्थक छायामे,
बुधक सूक्तिमे, व्यभिचारिक जनु परजायामे।
प्रणय असाधारण अनिष्ट-शत-शङ्काकारक,
बढ़ल बालिकामे समस्त-भूपति-परिवारक ॥३६॥

व्यसनें जनु बालिशक, शास्त्रचिन्तनें सुधीरक,
द्रोहें दुष्टक, छलें प्रपञ्चिक, समरें वीरक।
उपकारें साधुक, अभिनवरचने कविनृपतिक,
शिशु-लीला-दर्शने बितल दिन राजदम्पतिक ॥३७॥

दुर्लभ-तनुजा-प्राप्ति-दिनहिसँ रानिक आलय,
आमोदक भए गेल खानि अनुखन उत्सवमय।
कौतुक-पारावार विलासें शिशुक बहल जत,
पुरजन परिजन रहल सर्वदा नव-विनोद-रत ॥३८॥

प्रणयक आलम्बन, अनन्यआश्रय उल्लासक,
हासक अभिजन-भवन, आयतन विविधविलासक।
कुतुकक क्रीड़ागार, सनातन-वसति विनोदक,
उत्साहक आधार, नृपति निधि बनल प्रमोदक ॥३९॥

ओहीदिनमे मुख्यमन्त्रि-गृहिणीसँ उत्पति,
हमरो जानि प्रसन्न, कएल अति उत्सव भूपति।
'यशोमती'धए नाम सखी तनयाक बनाओल,
लालनपालनमे कदापि नहि भेद जनाओल ॥४०॥

छाया-सम एकावलीक हम सङ्गहिं रहलहुँ,
खेलि-लीन-मन तुल्य समयपर सुखदुख सहलहुँ।
दैवयोगसँ विरह कलह वा भेल न कखनहु,
बहिनिजकाँ सम्मान लेल सेवकता रखनहु ॥४१॥

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



वय-स्वभाव-व्यवसाय-साम्य-सहवासेँ निरवधि,
दुहुक परस्पर बढ़ल पुरुष-पुङ्गव ! प्रणयोदधि ।
दुसह छनोर्भार विरह लाग वाड़व-हुतवह-सन,
भिन्न कलेवर मात्र सर्वथा एके जीवन ॥४२॥

हेमन्तक दिन, मधुक जाड़, शरदक सलिलाशय,
पिशुनक सौहृद, खलक विनय, चोरक समाज-भय
रङ्कजनक औदार्य, प्रमत्त[1]नृपक जनु वैभव,
विगत अतर्कित भेल तनिक अछि सम्प्रति शैशव[2] ॥४३॥

आरोपल पद भूपसुता कैशोरदशामे,
गति-चञ्चलता बढ़ल ततए जनि बालवशामे[3] ।
कुल-गृहिणी-कर्तव्य सकल खेलहिमे सीखल,
कला-कुशलता पाबि चित्र अद्भुत कत लीखल ॥४४॥

पिता सती-वनिताक विविध इतिहास सुनबइत,
उपदेशप्रद रुचिर गीत माता पुनि गवइत ।
धर्मक शिक्षा घरहिँ सुखेँ तनुजाकाँ देलन्हि,
मर्यादा-लङ्घनक लोकमे अयश न लेलन्हि ॥४५॥

स्मृति-पुराण-इतिहास-श्रवणसँ पाबि विमलमति,
देव-पितर-द्विज-जननि-जनक-पदकमल-अचल-रति ।
एकावली स्वभाव-रुचिर-आचरणेँ अनुपम,
बाल्यावस्थाहिँ भेलि सकल-बान्धव-हृदयङ्गम ॥४६॥

एके सन्तति चरमदशामे जानि दुलारक-
सीमा नहि छल, तदपि प्रकृतिमे लेश विकारक ।
तनिकाँ किछु नहि भेल ; कदापि न अम्भोनिधिजल,
आविल[4] तटिनी-पूर-निकर कए सकए अनिर्मल[5] ॥४७॥

---

1 असावधान वा उन्मत्त । 2 मालोपमा । 3 नवीन हथिनी ।
4 पङ्किल । 5 प्रतिवस्तूपमा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तनिक सुभगता बढ़ल विनय-कौशल-विवेकसँ,
जनि उद्यानक लता बेढ़ि-अवलम्ब-सेकसँ।
सुननिहार तरुणक धैरजकाँ करइत कवलित,
उपजाओल औत्सुक्य अमितअनुरागे ँ शवलित ॥४८॥

प्रतिदिन एकावली-वयक सङ्गहिँ कन्दर्पक,
विजयक आशा बढ़ल, रहल सीमा नहि दर्पक।
दृष्टि शिथिल ओ कुटिल पड़ल अवहेलामूलक,
कुलिशहुसँ सम्मान्य धनुष-सायकमे फूलक ॥४९॥

शैशव-सीमा लाँघि नृपतितनयातनु यौवन,
पाओल शिशिर बिताए यथा कुसुमाकर उपवन।
गलल तरलता-तुहिन, उगल गाम्भीर्य-दिवाकर,
अङ्ग-प्रसून-विकास भेल युव-मधुप-मनोहर[1] ॥५०॥

कोमलतासँ शिरिसकुसुमकेँ जीति तनिक तनु,
चान-कलाहुक मान अनायासहि ँ तोड़ल जनु।
फूहरि अहि-नागरि अनुखन दुर्जरविष चखइत,
अप्सराहि अप्सरा बूझि पड़ तनिकाँ लखइत। ५१॥

शरदागम-विनिपात-शील, कखनहु नहि कुञ्चित,
अर्धचन्द्र[2]-परिभूत, सतत सौरभसँ वञ्चित।
शिखिकलाप[3] कत, कतए नित्य-वर्धिष्णु, कुटिलतर,
मुखराकेशशिरस्थ तनिक सुम-सुरभि चिकुरभर ॥५२॥

स्नेह कालिमा विविध धूपमाला-परिमलवर,
अतुल दीर्घता अचल पाव कथमपि यदि चामर।
तँ एकावलि-अलक-पालि-तुलनाक कथंचित,
हो कदाच किछुमात्र ततए अवसर सम्भावित[4] ॥५३॥

1 साङ्गरूपक। 2 चन्द्रक ओ गढ़हस्था। 3 मयूरक पिच्छ। विषम।
4 अतिशयोक्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अद्वितीय-लावण्य-शालि विरचइत तनिक तनु,
कान्ति-कोश निश्शेष भेल धाताक अखिल जनु ।
भए निरुपाय समेटि तिमिर-समुदाय बनाओल,
चिकुरपाश, तेँ शशिप्रकाश निर्मल यश पाओल ॥५४॥

विमल-बकावलि-वलित-बलाहक[1]-घटा-विनिन्दक,
तारा-निकर-च्छुरित-अमर-सरणी[2]-रुचि-विन्दक ।
विद्योतित-खद्योत-तिमिर-पटली-सुषमाहर,
सित-प्रसून-चित अतुलनीय कवरीभर तनिकर ॥५५॥

केशपाश लखि तनिक भेल जनु तम असारतम,
ऊड़ि पड़ाएल गगन पाबि घनमाला सम्भ्रम ।
चमरी रहल नुकाए गहनमे सङ्ग मयूरक,
विदित भेल जड़भाव[3] जगतमे यमुनापूरक ॥५६॥

जनु मेचक[4]-मणिहार द्विरद[5]-मुक्ता-तति-राजित,
जनु कालिन्दी-धार कुमुद-पटली-विभ्राजित ।
जनु मधुपावलि कुन्द-कुसुम-नव-धूली-शालित,
एकावलि-धम्मिल्ल[6] मालती-माला-लालित ॥५७॥

साधक अतनु अनन्य जाहिमे जागि अनुक्षण,
कएल चतुर्दश-भुवन-पराजय-सिद्धि विलक्षण ।
युव-जन-मानस-मोहरात्रि से रतिपति-काजेँ,
प्रकट भेल जनु भूपति-तनया कवरी-व्याजेँ ॥५८॥

शशधर होथि विलक्ष[7] विलक्षण निरखि जनिक मुख,
पैसए पानि सरोज ओज तजि जीवपराङ्मुख ।
स्पर्धा वस्तु न आन ओन[8] परिहासहुँ मनमे,
केवल निज-उपमेय गेय तेँ ओ त्रिभुवनमे ॥५९॥

1 मेघ । 2 आकाश । 3 शैत्य वा जलत्व । 4 नील । 5 हाथी ।
6 केशपाश । 7 लज्जित । 8 लावण्य ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अलक-जालसँ भाल तनिक सिन्दूर-सुलोहित,
बाल-चन्द्र जनु मुदिर-मालसँ अर्ध-तिरोहित।
पथिक-चक्र[1] दए विरह-दारुणी-भाव-धारणा,
करबए तरुण-चकोर-नयन-पीयूष-पारणा ॥६०॥

अपना जातिक पक्षपात देवहुसँ दुस्त्यज,
सन्तति जनिक समान सकल सुर-असुर-नरव्रज।
सेहओ भौँह छलेँ कलङ्क विधि देलन्हि निश्चय,
एकावलि-मुखसँ परेखि शशधरक पराजय ॥६१॥

अधर-बिम्बफल-लोभ-वशंवद जनु शुक निश्चल,
नासा-चञ्चु सम्हारि भौँह दुहु पाँखि पसारल।
किंवा कज्जल-विन्दु बीज मध्यग उपजाओल,
नीललता, दुइपात तकर भ्रूयुग-पद पाओल ॥६२॥

रैभ्य-सुता-सौन्दर्य अनिर्वचनीय निरखितहिँ,
मदन धनुष रखबाक प्रयोजन मानल किछु नहि।
फेँकल कए दुइ खण्ड विश्वकाँ जानि वशीकृत,
सएह भेल भ्रूयुग्म तनिक ध्रुव भाल-मूल-धृत ॥६३॥

स्मरसायक-अरविन्द-मीन-इन्दीवर-खञ्जन-
मृगी-दृगन्तक सार खीँचि प्रतिभट-मद-भञ्जन।
सिरजि राजतनुजाक नयन पओने गुरु-दीक्षा,
चतुर विधाता देल अपन जनु शिल्प-परीक्षा ॥६४॥

पात्र योग्य अवधारि आदिशिल्पी तत्पर विधि,
लोचन नृपति-सुताक विरचलन्हि सहजहिँ श्रीनिधि।
यौवन रागेँ रुचिर बनाओल चञ्चलता हरि,
कएल अनिर्वचनीय मनोभव पुनि विभ्रम भरि ॥६५॥

1 चक्रवाक ओ समुदाय।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



बाला-कुटिल- कटाक्ष-तीक्ष्णभालाकाँ काजर-
हालाहल मलि भरल शस्त्रशाला योद्धा स्मर।
तँहि बाढ़ल व्यासङ्ग अङ्ग-सङ्गहुँ विनु तनिकर
तरुण-चित्त-मातङ्ग-तुङ्ग-मद-भङ्ग-केलिपर ॥६६॥

जनु शिक्षक तारुण्य तनिक दृष्टिक हरि चापल,
सहज लाज उपजाए अहेतुक सँकुचब थापल।
आबि वृत्त भए गेल वक्रता अपनहि सत्वर,
पओलक आविर्भाव भावभङ्गी युव-जित्वर ॥६७॥

राज राजतनुजाक मनोरम-लोचन-युगमे,
कुन्द-कुमुद-शरदिन्दु-सुन्दर-द्युतिक अनुगमे।
इन्द्रनीलमणि-कील-रुचिर-रुचि काली[1] तारा[2],
भस्म-धवल-हर-हृदयमध्य जनु काली[3] तारा[4] ॥६८॥

तरुण-मनोमृग-बन्धनार्थ जकरा निरमाओल,
युगल रतिस्मर-पाश समटि दृगनिकट नराओल।
प्रथम चतुश्श्रुति[5]-पढ़निहार से राजसुता-श्रुति[6],
वक्रोक्ति-श्रुति[7]-निरत वक्र पाओल जग-विश्रुति[8] ॥६९॥

तनिक पक्व-नारङ्ग-रङ्ग-अभिषङ्ग-जनक शुचि,
दर्पण-गोल कपोल लोल-अलकालि-कलित-रुचि।
अभकहुँ युवक निहारि हारि मन बारि सकथि नहि,
रहथि मौन गहि वामकाम-अविराम-दमन सहि ॥७०॥

दशनावलि अवलोकि कुन्द-कलिका-तति कानल,
मुक्तापङ्क्ति विरक्त गौरवक गति नहि जानल।
सम्भव नहि छल कतहु जकर सौभग-मद छीजक[9],
तकरो भेल मलान प्रभा ध्रुव दाड़िमबीजक ॥७१॥

1 कारीरङ्ग। 2 आँखिक पुतड़ी। 3 प्रथमा महाविद्या। 4 द्वितीया। 5 श्रुति वेद, पढ़निहार ब्रह्मा। 6 कान। 7 सुनब। 8 प्रसिद्धि। 9 नष्ट होएबाक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



नवपल्लव चलराग, बिम्ब खगकीटक्रिमिच्छत,
मधुरिमाक लेशो प्रवालदल पावि सकए कत ।
प्रकृति-रक्त ताम्बूलरसें दुति लहइत दोगुन,
अद्वितीय अछि अधर तनिक पीयूष-मधुर पुन[1] ॥७२॥

सुनितहिँ वाणी तनिक गुणिक वीणा-धुनि उसरल,
कलकण्ठी[2] मधु-मध्य पञ्चमस्वरकें बिसरल ।
तेजल सुर-गन्धर्ववधू सङ्गीतक ममता,
आनक सम्भव कोन करत जे कनिओँ समता ॥७३॥

पीयूषक लए यूष, गाढ़ि दृढ़ पर्वसुधानिधि,
क्षीरसागरक फेन मिलाओल अपन हाथ विधि ।
रचल ताहिसँ तनिक हास, से मार-सहायक,
किन्तु भेल विरहीक सहज सन्ताप-विधायक ॥७४॥

अवनीपति-तनयाक तप्त-तपनीय[3]-गोलसम,
माझहिँ दबल कनेक पक्-नारङ्ग-फलोपम ।
चतुर चारु लखि चिबुक[4] चित्तमे के नहि गूनल,
शिल्प-कल्पना विधिक चरम-सीमापर पहुँचल ॥७५॥

एकावलि-मुखमण्डलपर राजित लट लटकल,
लहरि-लोल-शैवाल कमलऊपर जनु अँटकल ।
चन्द्रबिम्ब-अवलम्बित जनु तिमिरक चल अङ्कुर,
जनु दर्पण-प्रतिबिम्बित काजररेह परिस्फुर[5] ॥७६॥

मधुर-सत्य-वक्रोक्ति-वास लखि करइत लेखा[6],
तनिक कण्ठमे तीनि विधाता देलन्हि रेखा ।
शङ्खक सङ्ग विवादमध्य पुनि विजय परखि कए,
पहिराओल मणिहार विरचि सत्कार हरखि कए ॥७७॥

1 काव्यलिङ्ग-व्यतिरेक-सङ्कर । 2 कोकिला । 3 स्वर्ण । 4 दाढ़ी ।
5 चञ्चल । 6 गणना ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



नूतन-लता मृणाल मृदुलता-दर्पें जूझल[1],
तनिक भुजासँ हारि, अपन जीवन धिक बूझल।
तें जनि एक पड़ाए गहनकाननकाँ सेवल,
दोसर ग्लानिक लेल पानिमे मानी डूबल ॥७८॥

तनिक बाहु-बिस-वल्लि-शिखरमे मृदु-अङ्गुलि-दल,
नख-छवि-केसर कर-सरसीरुह लोहित विकसल।
तरुण-वृन्द-लोचन-मिलिन्द सहि सकए विरह नहि,
भमइत रहि अभिलाष-पूर्ति निज करए दर्शनहि[2] ॥७९॥

विरचल केलि-निमित्त तनिक तनु अतनु-प्रजापति,
वापी शुचि-लावण्य-वारिसँ भरल महायति[3]।
भुजा-मृणाली नयन-नील-सरसिज मुख-सारस,
कच-शैवल कुच-चक्र नाभि-आवर्त जतए लस[4] ॥८०॥

की विलास-कन्दुक सदार-मारक हृदयङ्गम,
की भुजवल्ली-कन्द खेतगुणमहिम-महत्तम।
स्मरयौवनसर्वस्व पूर्ण की सम्पुट मणिमय,
किंवा शुचिलावण्यकोश दुइ दिव्य दुरत्यय? ॥८१॥

भुजालता सुकुमार फरल की दुइ कर्कश फल,
की मनोज-करिकुम्भ हृदयसरसीसँ ऊगल।
चक्र-मिथुन वदनेन्दुभीरु की बैसल सटिकए,
किंवा उदित उरोज तनिक जगकान्ति समटि कए[5] ॥८२॥

केओ मङ्गल-कलश मदनराज-द्वारस्थित,
अनिलें ऊड़क डरें शैल केओ विधि-आहित[6]।
एकावलि-उरसिजकें केओ मानल मारक,
स्तूप[7] बाण-निक्षेपण-शिक्षाविधि-उपकारक[8] ॥८३॥

---

1 जड़ल। 2 रूपक। 3 अतिविस्तीर्ण। 4 साङ्गरूपक। 5 निश्चयान्त सन्देह। 6 स्थापित। 7 माटिक ढेरी। 8 उवलेख भ्रान्तिमान्। मै० सा० पत्र २(२)

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



आनन-पूर्ण-सुधांशु-सन्निधानहुँ प्रमुदित रहि,
पलको भरि कुच-चक्रवाक-जोड़ी बिछुड़ए नहि ।
अथवा सरसिज-युगल कनेको हो न सङ्कुचित,
ई कन्दर्प-नरेन्द्र-नीति-अनुभावक समुचित[1] ॥८४॥

नृप-तनया-तनु-खेत पैसि शैशव-थिति-दूषक,
मूसि कामरुचि-रुचिर-सस्यभर यौवन-मूषक ।
उचित उच्चथल हेरि ततए दुइ ढेरि लगाओल,
तकरहि विधि कर्कशता दए कुच-शैल बनाओल[2] ॥८५॥

जे एकावलि-कुच लिकुचक[3] रुचि उगितहिँ लूटल,
सम्प्रति तकर महत्त्व देखि श्रीफल-मद[4] छूटल ।
स्पर्धा साहस करक मतिभ्रम तालक टूटल,
फूटल भाग्य विचारि हारि तेँ नभतट जूटल ॥८६॥

तनिक पयोधर-चतुर उदर-दुर्मतिकेँ ठकि कए,
वदलि लेल गौरव मानू निज लाघवकाँ दए ।
रीति विदित अछि इएह नीतिमर्मज्ञ-बीचमे,
यदि कदाच वदला हो कोनो ऊँचनीचमे ॥८७॥

नाभि-गर्त[5] गम्भीर पाबि हित-सिद्धि-सहायक,
वन बिछाए रोमालि-जाल व्याधा रति-नायक ।
स्तन-गिरि ओटहिँ बैसि वीए वाणीमिष बजबथि,
तरल-तरुण-मन-हरिण अनायासहिँ जनु बभ्ऱबथि[6] ॥८८॥

करइत सतत कुलाल[7] कलश-निर्माणक अनुभव,
एकावलि-कुच-काञ्चन-घट-युग रचल नाभिभव[8] ।
अनिवारित-जनदृष्टि-दोष-भयसँ मन काँपल,
तेँ जनु चतुर विचारि रुचिर कञ्चुकसँ झाँपल ॥८९॥

1 रूपक । 2 रूपकापह्नुति । 3 बड़हड़क । 4 बिल्वफलक गर्व ।
5 खसा । 6 रूपक । 7 कुम्हार । 8 ब्रह्मा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अलखरूप शारदा,[1] हारतनु त्रिदिवसारिणी[2],
रोमावलिवपु तपन-तनूजा तापहारिणी।
त्रिवलि-त्रिवेणी सङ्ग जतए अति अद्भुत पाबथि,
से भए महाप्रयाग दर्शनहुँ धन्य बनाबथि ॥९०॥

कामनृपक चढ़बाक हेतु कुच-उच्चशिखर पर,
सोनक सीढ़ी तीनि बनाओल यौवन अनुचर।
तकर बीचमे जे नीरदरुचि वसन बिछाओल,
एकावलि-रोमावलि तकरहि कविजन गाओल[3] ॥९१॥

उदर-पड़ोसिक छीनि क्रमहिँ गौरव उन्नत भए,
उरज भारसँ तकरहि सदिखन लागल दबबए।
से लखि मदन-नरेन्द्र-केन्द्र-शासक नवयौवन,
तीनि वली[4] दए कएल बली[5] तकरा लोहक सन ॥९२॥

घन-रोमावलि-गहन-राजि कुच-उच्च-धराधर,
त्रिवली-तटिनी तीनि निरखि मन्मथ-पाटच्चर[6]।
डेरा दए सञ्चरए लखए जँ पथिक-युवकमन,
तँ मारए झट तीर वीर लूटए धैरज-धन[7] ॥९३॥

प्रवल-मदन-मातङ्ग मत्त भए ऋजुता छोड़ल,
बन्धन-खाम्ह उखाड़ि लोहबेड़ीकेँ तोड़ल।
खाम्हक खाधि गहीँर तनिक नाभी-गरिमा गह,
छिन्नमध्य वेड़ीकाँ सभजन रोमावलि कह[8] ॥९४॥

नव-तारुण्य-उमङ्ग युवति-रति-सङ्ग-विलासी,
नाभि-कूप-जल-काम काम कुच-शैल-निवासी।
माझहिँ तरल-तरङ्ग निरखि त्रिवली-तटिनी-तट,
रचल अपन अनुकूल पूल रोमावलि-छल झट ॥९५॥

---

1 अदृश्या सरस्वती नदी। 2 गङ्गा। 3 अपह्नुति। 4 उदररेखा। 5 बलवान्। 6 चोर। 7 साङ्गरूपक। 8 अपह्नुति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



स्तवक-गौरवें लतामध्य जनि अनिल-लुलित भए,
पीन-पयोधर-भार-खीन कटि चलइत लचकए।
जकर तुला चढ़ि हहरि केहरिक डाँड़ गेल छँटि,
मानए जकरा जगत मुष्टिमे जाएत ई अँटि ॥९६॥

प्रतिवासर-वर्धिष्णु उरज-भूधर-दुइ ऊपर,
नीचाँ युगल-नितम्ब नितम्बक[1] सदृश विस्तृत्वर।
दुहुक मध्यमे पड़ल अचल दुर्वह-भारें घटि,
होअ प्रकृति-कृश कृशतर तनिकर कोना नहि कटि ? ॥९७॥

जकर बाल्यमे अगणनीय अतिहीन दशा छल,
से यौवनकें अबितहिँ पओलक उन्नति अविचल।
कुच-नितम्ब एकावलीक, ई लखि कटि सोचें,
दिन दिन होइछ छीन मनस्वी जनु सङ्कोचें ॥९८॥

विधिक दिव्य-सौन्दर्य-कल्पना-विधिक अवधिमे,
महि-महेन्द्र-नन्दिनी-देह-लावण्य-जलधिमे।
स्मर-भूपक अवगाहनार्थ देखल नहि नौका,
तें विरचल तारुण्य जानु श्रोणी-युग-नौका ॥९९॥

नृपति-सुता तनुपर नूतन अधिकार मनोजक,
लखि यौवन-मन्त्री प्रबन्ध कएलन्हि विधिओजक[2]।
अवनति-शील परेखि मध्यसँ गौरव लेलन्हि,
उन्नति-निरत निहारि नितम्ब-युगलकें देलन्हि ॥१००॥

शिल्पकार-पद पाबि मानु यौवन रति-मदनक,
रचना चतुर विचित्र कएल प्रतिदिश रति-सदनक।
आगाँ उन्नत-शिखर-पयोधर-युगल निरन्तर,
पाछाँ श्रोणी-बिम्ब-युग्म उत्तुङ्ग मनोहर ॥१०१॥

---

1 पर्वतक मध्यभागक। 2 प्रतापक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जङ्घा क्रम-कृश-नीच[1] तनिक रचितथि जँ नहि विधि,
तँ की रम्भा-स्तम्भ समाइत लाज-पयोनिधि।
दितथि अलौकिक ततए मृदुलता वा यदि नहि ओ,
पबितथि की करिराज-करक जययश तँ कहिओ ? ॥१०२॥

जनु सोनक दुइ नाल ऊर्ध्वमुख चरण-सरोजक,
जङ्गम विजय-स्तम्भ-युगल जनु नृपति-मनोजक।
वेत्र-दण्ड[2] तारुण्य-द्वारपालक जनु दुहु कर,
उपमान-व्रज लाँघ जाँघ सुषमाबल तनिकर ॥ १०३ ॥

थम्भक मुख ऊपरसँ नीचाँ यदि कर बदली,
जानुक जानु कनेक तुला तँ पाबए कदली।
तेजि कञ्जकाँ मञ्जुलता तनि चरणहिँ रीतल,
बिना कलह कलहंसक कल हंसक[3] पुनि जीतल ॥ १०४ ॥

जकर अहर्निश रह विकास दश-शशधर[4] सङ्गहिँ,
चामीकर-रुचि नालऊर्ध्वमुख उद्भव जल नहि।
सुन्दरतासँ कतहु जगतमे तुल्य न तेसर,
नलिन-युग्म से चित्र कर्णिका-रहित अकेसर[5] ॥ १०५ ॥

सहजहिँ पद एकावलीक कमलहुसँ कोमल,
ततए उरोज-नितम्ब-महीधर-भार अरोपल।
तकर मन्द सञ्चार समुचिते तेँ पृथिवीतल,
ताहूसँ पुनि हारि हंस-गज लाजेँ बीतल[6] ॥ १०६ ॥

कनकलता जनु हरित-पल्लव-प्रकर-विराजित,
चपला जनु नूतन-जलधर-मण्डल-विभ्राजित।
चम्पक-माला जनु इन्दीवर-वृन्द-विकासित,
तनु-मञ्जरि हो तनिक नील-कौशेय-विभासित ॥ १०७ ॥

---

1 नीचाँ दिसि क्रमहिँ पातर। 2 सोनाक अधिकार-दण्ड। 3 नूपुर।
4 नखरूप-दशचन्द्रक। 5 व्यतिरेक। 6 सङ्कुचित भेल।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



मदन-सुधांशु-वसन्त-यौवनक समिति घटित कए,
चिर-विचार-निष्पन्न दकर समुचित सम्मति लए।
निज सुन्दर-रचनाक ततहि जनु शिल्प-कलानिधि,
कएलन्हि निर्वृति काम ललाम विराम विज्ञ विधि ॥ १०८ ॥

करइत सखीक शिखादि-नखपर्यन्त वर्णन बालिका,
आमोदसँ मन भरल भूपक यथा मालति-मालिका।
वसुधा-वलयमे सएह पूजित होथि, जनिक सुधासमा,
वाणी अनृत-दूषण-कृपाणी[1] हो रसिक-हृदयङ्गमा ॥ १०९ ॥

इति अष्टम सर्ग

1 मिथ्यादोषक छुरीजकाँ नाशक। अर्थान्तरन्यास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# नवम सर्ग

पुनि भूपतिकेँ उत्सुकविशेष, लखि लागलि कहए कथाऽवशेष[1] ।
मन्त्रिक तनया[2] स्वर-विजित-वीण, शुचि-वचन-रुचिर-रचना-प्रवीण ॥१॥

बजलासँ अधिक शान्ति एक, दोसर मुक्तिक आशा कनेक ।
श्रोताकेँ तेसर दत्तचित्त, अवलोकि कहल रोदन-निमित्त ॥२॥

"सुन्दर ! अद्भुत-गुण-पक्षपात-विक्षेप[3] कहओलक बहुत बात ।
बजइत छी विषय प्रधान आब, करुणा कए सुनिअ महानुभाव ! ॥३॥

सरसिजमे जनु मधुपावलीक, बाल्यहिसँ मन एकावलीक ।
कुसुमान्तर-दुर्लभ-मधुरपूत- सौरभक भेल अतिवशीभूत ॥४॥

अनुचरिएँ करइत सतत खोज, जँ सुनथि कतहु दूरहुँ सरोज ।
तँ त्वरित जाए सब सखी सङ्ग, विहरथि बढ़ाए जल-केलि-रङ्ग ॥५॥

कमलाकर लखितहिँ हर्ष-नृत्त[4], कए त्वरित होथि क्रीड़ा-प्रवृत्त ।
बूझथि किछु नहि समयातिपात, जे व्यासङ्गक थिक सहज बात ॥६॥

व्यसनक स्वभाव जे क्रियौचित्य-चिन्ताकाँ परिहरि बढ़ए नित्य ।
तेँ बढ़ल तनिक नलिनानुराग, जेँ आलिकुलक जागल अभाग ॥७॥

सखिगणक निवारण-वचन व्यर्थ, गुरुवर्गक आज्ञा नहि समर्थ ।
भए गेल जतए, की ततए आन, हो प्रतीकार कोनो महान[5] ? ॥८॥

व्यासङ्ग देखि एकावलीक, हम भेलि विपदशङ्केँ सभीक[6] ।
हित सखिक समीहित-साधनार्थ, कहलैन्हि जाए नृपकाँ यथार्थ ॥९॥

"अपनेक सुताकेँ अतुल-रीति, सरसिजमे बाढ़ल देव ! प्रीति ।
चलि जाथि कुतूहलवशेँ दूर, यदि सुनथि विकच-राजीव-पूर ॥१०॥

---

1 अवशिष्ट वक्तव्य । 2 यशोमती । 3 व्यासङ्ग । 4 गात्रविक्षेप ।
5 अर्थापत्ति । 6 भीत ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



"एना बाहर जाएब आब, थिक उचित न" ई कहनहु स्वभाव ।
छूटए नहि, तेँ नृप ! कए विचार, किछु रचल जाए झट प्रतीकार" ॥११॥

वाणी सुनि हमर वशी महीप, सागर-परिपन्थी[1] गृह-समीप ।
सर-निकर खुनाए सभृङ्गगुञ्ज, लगवाओल ललित सरोज-पुञ्ज ॥१२॥

हंसी जनु सारस-वधूसङ्ग, सहचरीसहित उद्भट-उमङ्ग ।
कमलाकरमे नित सलिलकेलि, ओ कएलन्हि सौरभ-मुग्ध भेलि ॥१३॥

आली-कुल-वलित-विलास-मग्न—तनिकाँ लखितहिँ स्मृति-पटल-लग्न ।
नहि ककर भेलि सुरयुवतिसङ्ग, करइत कमला क्रीड़ाप्रसङ्ग[2] ? ॥१४॥

राजीवक मञ्जुल-रुचि-सुगन्ध, कएलक तनिकर चलचित्तबन्ध ।
कलहंस सारसक सरस नाद, उपजओलक पुनि निरवधि प्रसाद ॥१५॥

एकावलीक वदनक अजस्र, आमोदक लगितहिँ अलि-सहस्र ।
लोभेँ उड़ि घेड़ल बद्धमाल, परिहरि सरमे स्फुट-कमल-जाल[3] ॥१६॥

कुच-युगल सरोरुह-मुकुल जानि, द्रुत भावी तकर विकास मानि ।
षट्-पद-पटली मकरन्द-आस, कएलक झट आबि समीपवास[4] ॥१७॥

अरविन्द-विनिन्दक दुहु उरोज, लखि चक्रमिथुन लाजेँ निरोज ।
मुख-पर्वसुधानिधि-सन्निधान, पबितहिँ विरहक शङ्केँ मलान ॥१८॥

इन्दीवर नयनक असितभाव, लखि विनु साँझहुँ सङ्कोच पाब ।
चापल-कौशल शफरी विलोकि, उद्वेग-उदय नहि सकए रोकि ॥१९॥

रोमावलि-सुषमा देखि दीन, शैवाल भेल जनु सलिल-लीन ।
कोमलता बाहुक लखि अमेय, अपनाकेँ बूझल विस विगेय[5] ॥२०॥

नाभी नरनाथसुताक हेरि, सम्पुटित[6] फुलाइत नलिन फेरि ।
कच-रुचि निहारि मधुकर-समूह, हो मूक विषादेँ मलिनमूह ॥२१॥

---

1 सागरक प्रतिस्पर्धा कएनिहार। 2 स्मरणालङ्कार। 3 व्यतिरेक-ध्वनि ।
4 भ्रान्तिमान् । 5 निन्दनीय । 6 सङ्कुचित ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



त्रिवली-विलास लहरी निहारि, स्पर्धा छोड़ल समुचित विचारि।
जघनक घन-विस्तृत-भाव हेरि, पुलिनक मन काँप अनेक बेरि ॥२२॥

अवलोकि अलौकिक अधरराग, हो कोकनदक मनमे विराग।
नूपुर-धुनि सुनि पुनि मधुर हंस, सोचए नहि कल-गौरव-ध्वंस ॥२३॥

सरमे विहार करइत परेखि, नृप-दुहिताकाँ अप्सरा लेखि।
निज नयनक बुझइत धन्यभाग, के भेल न सहृदय सानुराग ? ॥२४॥

नित नलिन-केलि कएनहु नितान्त, विजिहीर्षा[1] भेल न तनिक शान्त।
उपभोगेँ ध्रुव विषयानुराग, जनु आगि घृतेँ भए द्विगुण जाग ॥२५॥

ककरहु मुहसँ सुनि वीचधार, सुरसरिमे सरसीरुह अपार।
नहि जानि भविष्य विपत्तरङ्ग, भेलीह बिदा झट सखीसङ्ग ॥२६॥

नहि रोकल गुरुजन भए विरुद्ध, भवितव्यक गति की कतहु रुद्ध ?।
विधि-इच्छहिँ जीवक चित्तवृत्ति, पावए प्रवृत्ति अथवा निवृत्ति[2] ॥२७॥

अवनीश सुता-वात्सल्यवश्य, अवधारि तनिक यात्रा अवश्य।
पड़ि आपत्तिक संशयतरङ्ग; रक्षक सेना कए देल सङ्ग ॥२८॥

तनु-दुतिएँ करइत दिग्विकास, भूषण-धुनिएँ भरइत अकास।
कौतुकवश-अगणित-गति-क्लेश, पहुँचलि सब गङ्गातीर-देश ॥२९॥

गिरि-उरज-पतित जनु धरणिहार,[3] लखितहिँ निर्मल सुरसिन्धुधार।
निष्कलुष-हृदय भए कए प्रणाम, पैसलि अविरल-जलकेलि-काम ॥३०॥

शीतल-सुगन्ध-शुचि-सलिल-सेक, मृदु-सरसीरुह-ताड़न कतेक।
उल्लसित, परस्पर कएल आलि-संहति जनु वारण-तरुणि-पालि ॥३१॥

केओ नव-नलिनी-पात मोड़ि, पीउल जल, राखल कमल तोड़ि।
बरड़ी बिसाँढ़ कौतुकेँ चाखि, नहि सकलि मधुरिमा तकर भाखि ॥३२॥

---

1 विहारक इच्छा। 2 अर्थान्तरन्यास। 3 रूपकोत्प्रेक्षासङ्कर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



केओ लोलुप अलिवृन्द टाड़ि, आँजुर भरि नलिनपराग झाड़ि।
फागुनमे भए कुतुकेँ अधीर, छीटल सब जनि पर जनि अबीर ॥३३॥
केओ कलहंस-कलानुवाद, कए उन्मद-मधुपक तुल्य नाद।
देलक अपने दलतर[1] नुकाए, हंसी मधुपीकेँ अकचकाए ॥३४॥
केओ मकरी बनि पानि डूबि, डेराओल सभकाँ चरण छूबि।
सम्भ्रमसँ ओ बालासमूह, विभ्रम पाओल अतिसुकवि-ऊह[2]। ३५॥
केओ सुषमाक समृद्धि सोचि, कोमल कमलक दल सकल नोचि।
कर्णिका बनाओल कर्णपूर, चामीकर-रुचि जे कएल दूर ॥३६॥
केओ कुवलय-रम्भा-समान,[3] दुइ लए कुवलय सम्भासमान।
स्पर्धालु दृगक बुझि कर्णपाश, बान्हल उनटा कए जनु हताश ॥३७॥
केओ पङ्कज-कोरक सभृङ्ग, लए सखी-उरोरुह असित-शृङ्ग।
सङ्गहिँ परिहास-परा मिलाए, देखल शोभा मस्तक हिलाए ॥३८॥
केओ लखि सुरललनाऽनुरूप, जलमे प्रतिबिम्बित अपन रूप।
विधिकेँ अद्भुत-रुचि-शिल्प-खानि, अवधारि सराहल अमृतवानि ॥३९॥
केओ नलिनी-दल-व्यजन हाँकि, कारणक बिनहुँ कए बेरि चौंकि।
नव विभ्रम लहि देवाङ्गनीय,[4] सखिजनहुक भेलि विलोकनीय ॥४०॥
सहचरी-निकर कर पकड़ि गोल-मण्डल बनाए जलकेलि लोल।
एकावलिकेँ दए मध्यवास, कविवचनागोचर रचल रास[5] ॥४१॥
तावत जनु प्रलय-निशा-कलाप, सञ्चित जनु पातकिजनक पाप।
सांवर्तक-गण जनु घनक व्यूह, जनु अन्धकार विश्वक समूह ॥४२॥
जनु मृगनयनी-काजरक पुञ्ज, संहत जनु श्यामा[6]लता-कुञ्ज।
व्यामोहक[7] जनु सञ्चय विशाल, जगदन्तक जनु स्वयमेव काल[8] ॥४३॥

---

1 पातक नीचाँ। 2 सुकवि-तर्कक अगोचर। 3 पृथिवी-मण्डलक रम्भा-सदृश। 4 देवाङ्गना-सम्बन्धी। 5 मण्डलाकार नृत्य। 6 प्रियङ्गु। 7 सम्मोहक। 8 यमराज।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जनु सकल समाहृत कालकूट, जनु नीलमणिक उत्तुङ्ग कूट ।
समवेत अखिल जनु नील शैल, पूगीकृत जनु त्रिभुवनक मैल ॥ ४४ ॥

दुर्यश-समूह जनु लब्धगात, जनु एक मधुव्रत-कुलव्रात ।
सङ्घात कोकिलक जनु महान, काकक जनु निकर अनन्ततान ॥ ४५ ॥

उच्छ्रित जनु इन्दीवर-व्यूह; जनु मिलित वन्य-शूकर-समूह ।
आसञ्जित जनु सैरिभ-कदम्ब, जनु वृन्द करीन्द्रक गगनलम्ब ॥ ४६ ॥

जनु कृष्णसार सारङ्ग[1]यूथ, जनु कोलभिल्ल-वनचर-वरूथ ।
सभ गहनक जनु सङ्कुलित ऋक्ष, सञ्चित जनु सकल तमाल वृक्ष ॥ ४७॥

संहत जनु कस्तूरीक धूर, सङ्गत जनु यमुना-नदी-पूर ।
एकीकृत जनु छायानिकाय, समुदाय कचक जनु महोच्छ्राय ॥ ४८ ॥

सागरक वारि जनु ढेरि भेल, जनु कलि कृतयुग[2] अवतार लेल ।
परधनवनिता-आसक्तचित्त, घुमइत हरवा लए सतत वित्त ॥ ४९ ॥

दारुण-दुर्दर्श-दुरुह-गात्र, दिनराति दुराचारहिक पात्र ।
बाल्यहिसँ लँघने धर्मसेतु, दानव तत आएल 'कालकेतु' ॥ ५० ॥

झपटए झट दूरहिसँ असिद्ध-माँसक जनु खण्ड परेखि गिद्ध ।
तहिना वेगेँ ओ दौड़ि दृप्त, हरि नृपतनयाकाँ भेल तृप्त ॥ ५१ ॥

असहाय-सखी-निकरक कलोल-हाहाकारेँ उठि गेल घोल ।
पड़ितहिँ जे सैनिकभटक कान, मन कए देलक रण-एकतान[3] ॥ ५२ ॥

जहिना गिरिमे करकाप्रहार, सागरधारामे घनासार ।
उपदेश-वाक्य खलमे सुधीक, रोपब थलमे अम्भोजिनीक ॥ ५३ ॥

नहि होए फलोत्पादन-समर्थ, तहिना सबटा भए गेल व्यर्थ ।
अस्त्रप्रहार जितकाशिनीक[4], दानवमे नृपति-पताकिनीक[5] ॥ ५४ ॥

---

1 हरिण । 2 सत्ययुग । 3 एकाग्र । 4 युद्धमे सर्वदा विजय प्राप्तनिहारिक । 5 राजसेनाक ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



एकावलीक रक्षानियुक्त, प्राणत्यागे भट बूझि युक्त।
साहसें चढ़ल रणवलिक वेदि, चल गेल त्रिदिव रविबिम्ब भेदि ॥५५॥

जनु गरुड़-लोलमे फँसि भुजङ्ग, पावकमण्डलमे खसि पतङ्ग।
निर्जीव पड़ल सब धरणि-सेज, लगितहिँ रक्षक राक्षसक तेज ॥ ५६ ॥

दैवी घटना अवलोकि गूढ़, सहचरीनिकर कर्तव्यमूढ़।
जलमे निश्चल पुतरी समान, कुररीस्वरसँ असहाय कान ॥ ५७ ॥

जहिना बटेरिकेँ तरुण बाज, नलिनीकेँ उन्मद द्विरदराज।
करिणीकेँ हरि[1] विकटप्रतीक,[2] हरिणीकेँ पकड़ए पुण्डरीक[3] ॥ ५८ ॥

धएलक तहिना ओ केलिहेतु, नरपति-तनयाकेँ कालकेतु।
चलि सकल न किछु ककरो उपाय, विधि विमुख रहथि तँ के सहाय[4]? ॥५९॥

पड़ि गेलि हाथ दानव-बलीक, आक्रन्दन सुनि एकावलीक।
खगमृगहुक मन सम्भ्रान्त भेल, करुणहुकाँ करुणा उपजि गेल ॥ ६० ॥

गङ्गा तरङ्ग-करकाँ हिलाए, खग सखि-करुण-स्वरकाँ मिलाए।
दुरवस्था नृपदुहिताक हेरि, दानवकेँ रोकल बहुत बेरि[5] ॥ ६१ ॥

जनु दैत्यकृत्य दारुण निहारि, कम्पित कर-किसलयकेँ पसारि।
करइत कपोतहुङ्कार जोर, बारल वन करुणेँ भए विभोर ॥ ६२ ॥

आकाश धूलिसँ अप्रकाश, भए गेल दिशा सभ निरवकाश।
दिननाथक रथगति शिथिल भेल, पवनहुक वेग मान्थर्य लेल ॥ ६३॥

संसार पड़ल बुझि गलित-सार, शृङ्गार गेल भए निराधार।
सौन्दर्यक महिमा दूरि भेल, सातङ्क मदनमद लङ्क लेल ॥ ६४ ॥

लीला-विलास सहसा विलीन, मुख-मण्डल सभक दिनेन्दु-दीन[6]।
नृपनन्दिनीक सकरुण विलाप, सुनितहिँ ककरा नहि हृदय-ताप ॥ ६५॥

---

1 सिंह। 2 दारुणाकार। 3 बाघ। 4 अर्थान्तरन्यास। 5 उत्प्रेक्षा।
6 दिनक चन्द्र-सदृश मलिन।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



उत्सवक भेल सर्वापहार, उल्लासक शिर वज्रप्रहार ।
स्थावरजङ्गम सब जगत कान. हाहाकार-ध्वनि भरल कान ॥६६॥

सर्वंसहाक[1] उर उठल कम्प, अहिपतिशिर सिरजल मही-झम्प ।
कालहुक नयनसँ बहल पानि, के सकए दशा आनक बखानि[2] ? ॥६७॥

जड़ चेतन हृदय-प्रसाद गेल, करुणासमुद्र उद्वेल भेल ।
झरनाक छले ँ अविरलप्रचार, जनु बहल अगहुसँ अश्रुधार[3] ॥६८॥

चर अचर अचर चर[4] दुखेँ भेल, प्राकृतिक व्यवस्था बदलि गेल ।
धैरजक रहल जग नाममात्र, के बनल न करुण-प्रवाह-पात्र ? ॥६९॥

भूतलक महत्त्व विशिष्ट जानि, पातालनिवासी हानि मानि ।
अगुआए दनुजकेँ जनु प्रयत्न, कएलक हरबालए अतुलरत्न ॥७०॥

किं वा एकावलि-ललित-कान्ति- जित-सुरवनिताक विलोकि क्लान्ति ।
उर्वशीप्रभृति-रतिवशीभूत, पुरुहूत पठाओल कपटदूत ॥७१॥

कत कहब अपन दुख, विज्ञलोक, अनुरागहिँ परखथि परक शोक ।
अछि दुहुक एक मन भिन्न देह, ई कहनहिँ अनुमानिअ सिनेह ॥७२॥

तत्काल विश्व बुझि पड़ल लीन,[5] गुणगौरव सब सहसा विलीन[6] ।
अबला उपाय नहि आन जानि, धैरज कए धएलहुँ छलक बानि ॥७३॥

लहि असुरबाहु-राहुक गरास, एकावलि-चन्द्रकला उदास ।
अवलोकि कर'क तनिकाँ विमुक्त, सोचल अनुगमन उपाय युक्त ॥७४॥

आपदहिँ परेखिअ सुहृदप्रीति, प्रबलक आगू अनुनये रीति ।
धैर्यहिसँ कार्यक सिद्धि होए, ई नीति-वचन दृढ़ हृदय गोए[7] ॥७५॥

आकस्मिक-उत्पातेँ अधीर- मनकेँ कए समय-विचार-थीर ।
धिक जीवन बुझि सहचरी त्यागि, चललहुँ कनइत हम पाछु लागि ॥७६॥

---

1 पृथ्वीक । 2 अर्थापत्ति । 3 सापह्नवोत्प्रेक्षा । 4 चर अचर ओ अचर जीव चर भेल । 5 प्रलयमे प्राप्त । 6 बिलाएल । 7 राखि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



रोदन अवलोक महाश्च जानि, तनिकाँ छोड़ए हम कहल कानि ।
नहि पड़ल किन्तु किछुओ प्रभाव, निर्दयता दनु-जातिक स्वभाव[1] ॥७७॥

कएलहुँ पुनि अनुनय हाथ जोड़ि, 'एकावलिके ँ दनुजेश ! छोड़ि ।
हमरहि बरु गहिअ कृपानिधान ! बाँचत नहि हरने हिनक प्रान ॥७८॥

अपनेक असुर-सुर-वधू-रत्न, सेवाक हेतु सब करथि यत्न ।
ते ँ सिरजत ई विज्ञोपहास, विमनस्क-मनुज-वनिता-विलास" ॥७९॥

जनु तप्तलोहमे अम्बुविन्दु, उन्नत-घनमण्डलमध्य इन्दु ।
दानवक हृदयमे हमर उक्ति, भए गेल परन्तु विलुप्तयुक्ति ॥८०॥

यद्यपि कएलक प्रार्थना-भङ्ग, छाड़ल हम तदपि न तकर सङ्ग ।
अपमान मान वा जन उपेखि, स्वाभीष्ट-सिद्धिके ँ सकथि देखि ॥८१॥

हमरा विनु एकावलि हताश, करतीह अपन ध्रुव प्राणनाश ।
आश्वासन सत्वर प्रतीकार, ई बुझि हम चललहुँ तदनुसार[2] ॥८२॥

अवहृत पाछाँमे बहुत दूरि, हमरा विलोकि कए बेरि घूरि ।
नृप-नन्दिनीक परिबोध-हेतु, लेलक चढ़ाए रथ कालकेतु ॥८३॥

देवारि मदन-शर-दलित-चित्त, एकावलि-अनुकूलन-निमित्त ।
सत्वर सुनाए देलक निदेश, औत्सुक्य सहए न विलम्ब-लेश[3] ॥८४॥

हमरा पबितहि ँ जनु पावि त्राण, आएल पलटि पुनि तनिक प्राण ।
सन्त्रस्त, दनुजके ँ देखि चण्ठ, भरिपाँज पकड़ि लगलीह कण्ठ ॥८५॥

अनुखन सङ्गहि ँ हम रहनिहारि, दुर्दशा हुनक ओहन निहारि ।
उद्विग्नहृदय भेलहुँ, परन्तु, त्राणार्थ पसारल वचन-तन्तु ॥८६॥

"दनुजाधिप ! जनु अगुताइ, त्रस्त, छथि आइ अधिक ई विपति-ग्रस्त ।
कत तात-नृपति-घर सौख्यभोग, कत आकस्मिक-अपहरण-योग'? ॥८७॥

---

1 अर्थान्तरन्यास । 2 तकर पाछाँ । 3 अर्थान्तरन्यास । 4 विषम ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



पशुपक्षिहुकेँ परिचयेँ स्नेह, असुरेश ! बढ़ए यदि असन्देह ।
तँ मानवजातिक मन पवित्र-प्रेमक उद्भावन की विचित्र ? [1] ॥ ८८ ॥

बालाक सहज चञ्चल स्वभाव, पाराक तुल्य कविवृन्द गाब ।
यतनहिँ तकरा बुध करथि थीर, लोलुप पछताबथि भए अधीर ॥८९॥

किछु समय प्रतीक्षा तेँ अवश्य, करु, अपनहि भए जइतीह वश्य ।
व्यवहार मधुर चुम्बकसमान, खीचए यदि जड़, तँ कत सुजान [2] "॥९०॥

रतिनायक-सायक-मथित दैत्य, हमरा वचनेँ किछु हृदय-शैत्य ।
अनुभवइत क्रीड़ाशा-निबद्ध, आचरण तेजलक कटु अश्रद्ध ॥ ९१ ॥

याबत चलितहुँ दुइ चारि डेग, ततबहिमे हय अति पवनवेग ।
भू-विवर-पथेँ रथकेँ कराल, पहुँचओलक दानव-पुर पताल ॥ ९२ ॥

ओ नगर सुसज्जित छल तथापि, लखितहिँ देलक मन त्रास थापि ।
दनुजेतर-जीवक पापभोग्य, यमपुरक सहोदर कह'क योग्य ॥९३॥

जे शून्य सौध उद्यान-बीच, ताहीमे देलक वास नीच ।
रक्षक राक्षस आत्मीय राखि, गृह गेल, सचेतन रहए भाखि ॥ ९४॥

कत विपति कतए अवलाक जाति ? [3] बीतल युगसम ओ विषम राति ।
कामुक दानव-पति अति कठोर, भोरहिँ पहुँचल सहचरी-चोर ॥ ९५॥

प्रासादक भीतर दैत्य पैसि, अवनीश-सुताक समीप बैसि ।
लम्पट अनभिज्ञ विदग्धताक, [4] कटुरव जनु मधुर बनाए काक ॥ ९६ ॥

अपनहि झट तोड़ि विवेक-सेतु, कएलक प्रस्ताव विवाह-हेतु ।
औचित्य-विचारक रह न वास, जखनहि हो औत्सुक्यक विकास [5] ॥९७॥

"नृपनन्दिनि ! लखि सुषमा अहाँक, पड़लहुँ हम विषमशराधि-पाँक ।
नहि अछि जीवन बचबाक आस, कए कृपा बनाबिअ अपन दास ॥९८॥

---

1 अर्थापत्ति । 2 अर्थापत्ति । 3 विषम । 4 रसिकताक ।
5. अर्थान्तरन्यास ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अपराध गरुअ[1] अपहरण-जन्य, अछि, तकर दण्ड दए करिअ धन्य ।
भुजपाश कण्ठ कसि कुचेँ ताड़ि, वेधिअ कटाक्ष-शर-निकर छाड़ि ॥ ९९॥
त्रिभुवन-राज्य-श्री भूरमाक[2], सौतिन भए दासी बनि अहाँक ।
रहतीह, सकल से मन विचारि, स्वीकृति दए दिअ दुख-उदधि तारि ॥१००॥
शरणागत-दुख हरि देब शर्म[3], क्षत्रियगोत्रक थिक परम धर्म ।
तेँ त्यागि उपेक्षा, करिअ त्राण, चण्डाल विषमशर हरए प्राण" ॥१०१॥
एकावलि सोचल आब लाज, कएने नहि बनत कदापि काज ।
सङ्कोच शिथिल कए तेँ अनेक, लगलीह कहए उत्तर कनेक ॥ १०२ ॥
"असुरेश ! असम-महिमा निहारि, अपनेकाँ के नहि वरति नारि ।
हमरा परन्तु अछि भाग्य वक्र, नेनहि पड़लहुँ जेँ प्रणय-चक्र ॥ १०३ ॥
शुभ्रांशु-वंश-सागर-सुधांशु, तुर्वसु-नृपनन्दन दलितपांशु[4] ।
भूतलमे छथि रण-कुशल धीर, सुन्दर गुणमन्दिर एकवीर ॥ १०४ ॥
गुण परम मनोहर तनिक सूनि, सर्वथा अपन अनुरूप गूनि ।
तातक आज्ञा अनुकूल जानि, तनिकहि वरलहुँ वर उचित मानि ॥१०५॥
हैहय-कुल-दीपक ओ नृपाल, हमरा पर होथि न यदि कृपाल ।
तँ अनल हलाहल जल अवश्य, पुनि बनथि शरण भवितव्यवश्य[5] ॥१०६॥
त्यागब कथमपि नहि सदाचार, अछि इएह हमर दृढ़तर विचार ।
अपने जनितँहि छी स्मृतिक मर्म, जे अछि कुलीन कन्याक धर्म ॥१०७॥
बालिका जानि तेँ अपन आज, भिक्षा दयाक दए दैत्यराज ।
ई छमिअ हमर गुरु दुरपराध, सुपुरुष क्षमाक सागर अगाध[6]" ॥१०८॥
ई सुनि प्रस्तावक अननुरूप,[7] उत्तर असुराधिप भेल चूप ।
सोचल कालेँ हो की न सिद्ध, बालाक बलात्कारो निषिद्ध[8] ॥ १०९ ॥

---

1 पैघ । 2 भूतल-लक्ष्मीक । 3 सुख । 4 निष्पाप वा निर्दोष ।
5 भाग्याधीन । 6 अर्थान्तरन्यास । 7 प्रतिकूल । 8 काव्यलिङ्ग ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



रज्ञकसभकाँ पुनि कए सचेत, दैतेय गेल लीलानिकेत ।
हम भेलहुँ सहचरि-दुखेँ दीन, अवकाश पाबि प्रणिधानलीन[1] ॥११०॥

देलक सुझाए मति भए सहाय, निरपाय सखीमुक्तिक उपाय ।
भरिमास जपल हम पूजि यन्त्र, द्विजदत्त[2] जगज्जननीक मन्त्र ॥१११॥

देवीक दयोदधि उछलि गेल, दर्शन सपनहिमे अपन देल ।
करइत दशनद्युतिसँ प्रकाश, कहलन्हि "होएत झट विपतिनाश ॥११२॥

नारायण-सुत लक्ष्मी-प्रसूत, हैहय-नृप तुर्वसु-पोसपूत ।
भेटत गङ्गातट एकवीर, मेटत से सब दुख एकतीर ॥११३॥

दत्त-प्रदत्त[3] ओ हमर मन्त्र, जपि भेल सकल-सिद्धि-स्वतन्त्र ।
ई उद्धत-दानव समरमध्य, अछि तकरहिसँ विधि-कथित-वध्य" ॥११४॥

हम मुदित सकल सपनाक बात, एकावलिकाँ उठि कहल प्रात ।
अम्बाक अनुग्रह ओ महान, मानल बन्धनसँ मुक्तिदान ॥११५॥

देलन्हि लगले हमरा निदेश, करबाक त्वरित तनिकर उदेश[4] ।
अएलहुँ तेँ निर्जर-सिन्धुतीर, एतए नहि भेटथि एकवीर ॥११६॥

तनिकाँ चारूदिसि बहुत ताकि, हम गेलहुँ वीरवरेण्य ! थाकि ।
भएकेँ निराश सखिदुख बिचारि, सकलहुँ नहि आधिक वेग टारि ॥११७॥

घन-पङ्कलग्न गाइक समान, पबइत दारुणदुख अतिमहान ।
दुर्दशा सुमिरि नृपनन्दिनीक, हमरा किछुओ नहि लाग नीक ॥११८॥

परिणाम देखि एकावलीक, दैवज्ञ-वचन[5] बुझि पड़ अलीक[6] ।
देवीहुक वाणी मृषा भेल, उद्धारक आशा टूटि गेल ॥११९॥

हा !! रैभ्य-रुक्मरेखाक दैव, रहलाह किए' विमुखे सदैव ।
ई सङ्कट विकट दुरन्त जानि, रहलहुँ अछि सम्प्रति हमहु कानि ॥१२०॥

---

1 ध्यानमग्न। 2 सिद्धब्राह्मणसँ देल। 3 दत्तात्रेयसँ देल।
4 अन्वेषण। 5 ज्यौतिषीक वाक्य। 6 मिथ्या।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



दुखमे अपनेक सहानुभूति, सुपुरुष ! थपलक साहसक जूति[1] ।
जे उठ तें जिज्ञासा-तरङ्ग, उत्तर दए तकरो करिअ भङ्ग ॥१२१॥

आपति-अर्णवमे कर्णधार, विधि विरचि पठाओल गाङ्गधार ।
अपनेकाँ ई मन हो प्रतीति, आकलित काकतालीय-रीति ॥१२२॥

आन्हरक यष्टिसम, डुबनिहार—मनुजक तरि-तुल्य[2] विपत्तिधार ।
अविलम्ब हमर अवलम्ब भेल, अपने के थिकहुँ कृपातिवेल ![3] ॥१२३॥

अपनेकाँ लहि चन्दन-समान, कुल कोन वहए मलयाभिमान ।
विरचए वा चन्द्रोत्पत्तिदत्त, क्षीराम्बुधिकाँ बहुधा विलक्ष ?" ॥१२४॥

कहि ई गहि मौन नरेन्द्रकथा—सुनबालए उत्सुक भेलि तथा ।
तनिके मुखसम्मुख-दृष्टियुता, करजोड़ि छलीह अमात्यसुता ॥१२५॥

इति नवम सर्ग ।

1 प्रभुत्व । 2 नावक सदृश । 3 अतिशयदयालु ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# दशम सर्ग

मन्त्रिसुताक वचन-मधु नृप बहुभाँति ।
पीबि, गेल कौतुक-घन-सम्मद-माति ॥१॥

दनुजरुद्ध-नृपदुहिता-द्रुतउद्धार ।
उचित जानि उत्सुकता बढ़ल अपार ॥२॥

गाम्भीर्यक गुरु महिमा बहु घटि गेल ।
झट आवेगक पटिमा प्रकटित भेल ॥३॥

एकावलिक स्वरति[1] दृढ़ बुझितहिँ धीर ।
एकवीर-मानस नहि रहले थीर ॥४॥

रूप-विजित भए वैरी अवसर जानि ।
सम्मोहन-शर मन्मथ छोड़ल तानि ॥५॥

तारुण्यक जे अएनहु छल अविकार ।
ततहि भेल नृपमनमे स्मर-सञ्चार ॥६॥

पातकि-सुकृत-सदृश झट घटल विवेक ।
बुध-मति-सम उत्कण्ठा बाढ़ल एक ॥७॥

राजा[2] रोक'क चेष्टा कएलन्हि लाख ।
तदपि बढ़ल अभिलाषा भए बहुशाख ॥८॥

चिन्ता-मलिन-वदनकेँ गहि नृप-नीति ।
प्राभातिक-विधुमण्डल लेलक जीति[3] ॥९॥

नृपति-सुताक सुमिरि अतिरति सौन्दर्य ।
हैहय-हृदय भेल बड़ धैर्य-कदर्य[4] ॥१०॥

---

1 स्वविषयक प्रेम । 2 एतएसँ दश श्लोक पर्यन्त १ अभिलाषा २ चिन्ता ३ स्मरण ४ गुण-वर्णन ५ उद्वेग ६ प्रलाप ७ उन्माद ८ व्याधि ९ जड़ता १० मरण क्रमहि दश काम-दशा वर्णित अछि । 3 निदर्शना । 4 अधीर ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



यशोमती-वर्णित-गुण अद्भुत हेरि।
चकित मनहि मन बरनल नृप कए बेरि ॥११॥

भेल प्रौढ़-उत्कलिके ँ स्फुट उद्वेग।
जीवन तुच्छ बुझओलक जकरो वेग ॥१२॥

भूप प्रियाक दशहु दिसि रूप-कलाप।
लखइत सकल सम्हारि न प्रणय-प्रलाप ॥१३॥

तनिका श्रम-पोषित-तनु तत उन्माद।
प्रेयसि-सङ्ग करओलक कत संवाद ॥१४॥

नृपक वल्लभा-विरहे ँ उपजल आधि।
सिरजल प्रबल मदन-शर-बाधा व्याधि ॥१५॥

क्षण भरि तनिकाँ घेड़ल जड़ता बेस।
जहिना शिशिर-मिहिरकाँ भोर कुहेस ॥१६॥

चरमदशाक[1] मनोरथ करितहिँ काम।
रहि गेलाह, दैव जे ँ नहि छल वाम ॥१७॥

तखनहि दुर्मद-दानव-दमनोत्साह।
कएलक जागि भूमिपति-मन-अवगाह[2] ॥१८॥

स्मित-विकसित भए ते ँ पुन वदन-सरोज।
अपन घटल पलटाओल, पहिलुक ओज[3] ॥१९॥

साहस-मन्त्र सुमिरितहिँ अवनति-मूल।
चिन्ता हटल पिशाची मानस-शूल ॥२०॥

भेल हृदयमे धैर्यक पुनि साम्राज्य।
बढ़ल पराक्रम हुतवह जनु लहि आज्य ॥२१॥

---

1 मृत्युक। 2 आलोड़न। 3 तेज।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



उदित भेल मानसमे शौर्य यशस्य[1]।
गेल तिरोहित भए झट घन-आलस्य ॥२२॥

समर-धीर-सहचर-मुख देखल घूरि।
देल सभक उत्साहेँ अन्तर पूरि ॥२३॥

पड़ल चाप-सायक पर दृष्टि विलोल।
वपु पाओल पुलकावलि-कवच अमोल ॥२४॥

मस्तक विक्रम-गर्वें उन्नत भेल।
औत्सुक्यक विजिगीषा[2] उत्पति देल ॥२५॥

त्वरितभावि-बहुतर-शुभ-सूचनिहार।
फड़कल दहिन बाहु दृग वारं वार ॥२६॥

यशोमती-प्रश्नक ओ तखन. अलेश[3]।
सावधान भए उत्तर देल नरेश ॥२७॥

"सुन्दरि! थिकहुँ हमहि ओ हैहय-भूप।
भेटल छी जगदम्बा-कथानुरूप ॥२८॥

जगदीश्वरी-वचनमे दृढ़ विश्वास।
राखू, निश्चय होएत दनुज-निरास ॥२९॥

सूनि अहाँसँ सभ गुण रैभ्यसुताक।
तपए हृदय विरहेँ जनु लहि पुटपाक[4] ॥३०॥

हरिक यथा कूकुर हरि हमरो अंश।
समरहिँ दानव पाओत नाश सवंश ॥३१॥

एकवीर थिक हमरे शशिमुखि! नाम।
हमहि अहाँक युद्ध कए पूरब काम ॥३२॥

---

1 यशोजनक। 2 विजयक इच्छा। 3 निश्छल। 4 दुइ सरवाक सम्पुटमे वस्तुकेँ मूनि पाक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जाए ससैन्य दैत्यकाँ सत्वर मारि ।
जनक-भवन पहुँचाएब राजकुमारि ॥३३॥

हरि अकाम-कन्याकेँ दानव लएठ ।
अपनहि क्रियेँ कटाओत रणमे कण्ठ ॥३४॥

श्रुतिकाँ हयग्रीव[1] हरि पओलक अन्त ।
कन्याकाँ हरि ई की रहत अनन्त[2] ? ॥३५॥

केओ विषक बीज वपि खल-स्वभाव ।
अमृत-फलक आस्वादन करए न पाब[3] ॥३६॥

बल-धन-योवन-गर्वेँ जीव बताह ।
दुराचार कए पाबथि फल अधलाह ॥३७॥

जनक चक्रधर जननी रमा सहाय ।
दत्तात्रेयगुरुक जँ कृपा व्यपाय[4] ॥३८॥

हमर समरसेँ तँ नहि कथमपि भङ्ग[5] ।
अनल मिझाए सकए की कतहु पतङ्ग[6] ? ॥३९॥

निश्चय जानि अहाँ तेँ भावी भव्य ।
दिअ उत्तर हमरा किछु अछि प्रष्टव्य ॥४०॥

सुता-हरणकेँ सुननहु मानी भूप[7] ।
रैभ्य किएक कहू छथि बैसल चूप ? ॥४१॥

एकापत्यो लखि किछु तनया-दोष ।
की कएलैन्हि उपेक्षा उपचित-रोष ? ॥४२॥

किंवा हुनका अद्भुत दानव-शौर्य ।
कएलक कातर, बुझनहु तनुजा-चोर्य ? ॥४३॥

---

1 राक्षस जकरा विष्णु मारल । 2 अन्त-रहित । अर्थापत्ति । 3 अर्थान्तरन्यास । 4 परिपूर्ण । 5 पराजय । 6 प्रतिवस्तूपमा । 7 परिकर ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



मनुज-अगम्य दनुजपुर-पथ नहि जानि।
कोना पहुँचि, देव हम सङ्गर[1] ठानि? ॥४४॥

विना पहुँचने दनुजक दुर्घट घात।
एकावलि-मुक्तिक तँ दूरहिँ बात ॥४५॥

भए जाएत हमरासँ दुष्कर त्राण।
अपटु कुलाल करए की घट निर्माण[2]? ॥४६॥

हमरा कोनहु मार्गे तत पहुँचाए।
दैत्य-दुर्दशा देखू रण-थल जाए" ॥४७॥

भूप-वचन उर-अन्तर यशोमतीक।
श्रुतिपथ पैसि बनओलक अतिनिर्भीक ॥४८॥

ब्रह्मानन्द-सहोदर वचनातीत।
उपजल मोद, भेल दुख-दशा व्यतीत ॥४९॥

सफल जानि श्रम लोचन जलधर भेल।
पुलक-पालि तनिकर तनु[3] तनु भरि देल ॥५०॥

उद्धारक आशा दृढ़ तनिक सखीक।
दुख हरलक जनु शशिरुचि तिमिर तमीक ॥५१॥

नृप-दर्शनसँ मानल परिणत पुण्य।
अपन तथा अन्वेषण-कृति नैपुण्य ॥५२॥

वचन परेखि वेदवत अवितथ-शक्ति।
जगदम्बाक चरणमे बाढ़ल भक्ति ॥५३॥

एकवीरकेँ मानल सुषमे योग्य।
एकावलिक यशोमति वर उपभोग्य ॥५४॥

1 युद्ध। 2 प्रतिवस्तूपमा। 3 कोमल।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



देवीवाक्य नृपाकृति सखी परेखि।
श्रम-भय-संशय-दुखकाँ देल उपेखि ॥ ५५ ॥

सस्मित सादर उत्तर अति बुधिआरि।
कहल महीपतिकें सहचरी विचारि ॥ ५६ ॥

"महाराज ! हम बातहिँ आइ कतेक।
समय अमूल्य बिताओल जे अपनेक ॥ ५७ ॥

से अछि हमर नरेश्वर ! गुरु अपराध।
जकर तुच्छदण्डें नहि विलय सुसाध ॥ ५८ ॥

पहिल याचना तकरे प्रभो ! क्षमाक।
दोसर अछि उद्धारक धरणि-रमाक[1] ॥ ५९ ॥

प्रायः सुनल न तनया-दशा नरेश।
सुननहु वा कए सकल न दनुज-उदेश ॥ ६० ॥

जे न होथि पृथिवीपति आश्रित-दुर्ग[2]।
से न बुझथि पुर दानव-आश्रित दुर्ग[3] ॥ ६१ ॥

सर्वंसहा[4] क्षमामे यदि हो रोष।
एकावलिमे तखनहि उपजए दोष[5] ॥ ६२ ॥

श्रीकें सिन्धु, उमाकें बरु अचलेश।
तनुजाकें न उपेखथि हमर नरेश[6] ॥ ६३ ॥

दृष्टि बुधक विद्यामे रहइछ जएह।
एकावलिमे रैभ्यक की नहि सएह[7] ॥ ६४ ॥

प्रौढावस्था बीतल तनिक तथापि।
कातरताक न लेशो भेल कदापि ॥ ६५ ॥

---

1 भूमे लक्ष्मीसमा एकावलीक। 2 दुर्गोपासक। 3 दैत्यसँ सेवित दुर्गम।
4 पृथ्वी, तितिक्षा, अथवा सब सहनिहारि पृथ्वी 5 आक्षेपध्वनि।
6 अतिशयोक्ति। 7 निदर्शना।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अभिमुख-मरण समरमे क्षत्रियवीर ।
भाग्यहिँ लभ्य जानि नहि होथि अधीर ॥ ६६ ॥

मन्त्र शिवाक महोत्तम हमरा आब ।
सुकर दनुजपुर-पैसब जकर प्रभाव ॥ ६७ ॥

ओ मनु[1] हमरासँ लए धरणीनाथ ! ।
होउ पुरश्चर्या कए सिद्धि-सनाथ ॥ ६८ ॥

सिद्ध-सिद्ध जकरा कहि गाबए तन्त्र ।
से शिवाक शिव-भाषित ओ शिव[2] मन्त्र ॥ ६९ ॥

उचित पात्र अपने छी उपगत भेल ।"
ई कहि मन्त्रिसुता मनु नृपकाँ देल ॥ ७० ॥

*लज्जाबीज*[3] प्रथम कहि *गौरि* उचारि ।
तखन *रुद्रदयिते* पुनि कहल बिचारि ॥ ७१ ॥

*योगेश्वरि* भाखल पुनि कूर्च[4]समेत ।
फट् *शिखिजाया*[5] अन्तहिँ महिमनिकेत ॥ ७२ ॥

मन्त्रराज ई सोड़ह आखर[6] सिद्ध ।
अन्वर्थाख्य[7] *त्रिलोकीतिलक* प्रसिद्ध ॥ ७३ ॥

श्रद्धासँ झट लए मनु कए जप होम ।
तर्पण मार्जन ब्राह्मण-भोज[8]नृसोम ॥ ७४ ॥

भेल पुरश्चरणेँ ओ सत्वर सिद्ध[9] ।
उचित तीव्र यत्नेँ की नहि झट सिद्ध[10] ? ॥ ७५ ॥

सूझल दानव-नगरक मार्ग तुरन्त ।
बूझल मन्त्रक महिमा नृपति अनन्त ॥ ७६ ॥

---

1 मन्त्र । 2 कल्याणाकारक । 3 ह्रीँ । 4 हूँ । 5 स्वाहा ।
6 ह्रीँ गौरि ! रुद्रदयिते ! योगेश्वरि ! हूँ फट्स्वाहा । 7 यथार्थनामा ।
8 पञ्चाङ्ग पुरश्चरण । 9 सिद्धिकेँ प्राप्त । 10 सम्पन्न ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कहल एक सङ्गीकेँ "हय चढ़ि जाउ।
अपन सकल–सेना लए सत्वर आउ" ॥७७॥

नृप–आज्ञाकाँ पबितहिँ वीर वयस्य।
धनुमुक्त-सायकसम वेग-प्रशस्य ॥७८॥

पहुँचि राजधानीमे शिविरहिँ जाए।
सेनापतिकेँ आज्ञा देल सुनाए ॥७९॥

प्रणत जकर डरसँ हो पर रिस दाबि।
नृपसेना से नायक-अनुमति पाबि ॥८०॥

जे छल दर्पेँ तकइत समरक बाट।
नृपतिसैन्य से सुनितहिँ पावि उचाट ॥८१॥

अस्त्र शस्त्रसँ सज्जित सङ्गर-धीर।
पहुँचल दौड़ि छनहिंमे सुरसरि-तीर ॥८२॥

लखि जाह्नवीपुलिनमे पसरल सैन्य।
क्षितिकेँ पुनि गिरिवृत जनु मानल वैन्य[1] ॥८३॥

जतए विलोल-पताका-निकर तरङ्ग।
ग्राह–मकर-गोधा, गज-ऊँट-तुरङ्ग ॥८४॥

शूल सुरद्रुम, वड़वा-दहन प्रताप।
सुयश सुधांशु, भुजङ्गम सायक-चाप ॥८५॥

कच्छप फलक,[2] तरणि रथ, असि शिशुमार[3]।
चक्र जलभ्रम, वल्गित-भट-गति धार ॥८६॥

नलिका शङ्ख,[4] शतघ्नी[5] जलगज पीन।
वीरनाद धीरध्वनि, सैनिक मीन ॥८७॥

---

1 राजा पृथु। 2 ढाल। 3 सोँस। 4 बन्दूक। सकुँची जलजन्तु।
5 तोप।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



शङ्ख शङ्ख, सेनापरि-वृढ़ कुम्भीर[1] ।
ऊद व्याघ्रनख[2] करगत, परशु कुलीर[3] ॥८८॥

गदा क्षेपणी,[4] भेरी-रव खग-नाद ।
पाश जलौका, कवच-व्रज घन-शाद[5] ॥८९॥

सुधा स्वामि-रति, मदिरा मद-उद्दाम ।
सहनशीलता वेला विपुल ललाम ॥९०॥

फेन वितान–धवलपटमण्डप[6] रोध ।
यादस्स्वन[7] पटह-ध्वनि, गरल क्रोध ॥९१॥

भूप-सैन्य–सागर[8] से छल विस्तीर्ण ।
गङ्गासँ मिलबा लए जनु अवतीर्ण ॥९२॥

नृपति सकल सेनामे रचलन्हि व्यूह ।
रखलन्हि आगु पदातिक विपुल समूह ॥९३॥

तदनु दनुज-भय-दायक ओ हय-राजि ।
मध्यहिँ रहि महिनायक देलन्हि साजि ॥९४॥

रखलन्हि तखन पताका-सारथि-शालि ।
चतुर चतुर्भुज-नन्दन स्यन्दन-पालि ॥९५॥

सभसँ पाछाँ रखलन्हि जनु गिरि-कूट ।
कादम्बिनी-विडम्बक वारणकूट ॥९६॥

वीर पदाति तुङ्ग गज चपल-तुरङ्ग ।
दृढ़ रथ सैन्य वैरिमथ ओ चतुरङ्ग ॥९७॥

यशोमतीकेँ सादर रथ बैसाए ।
चलल भूमि-विल-पथ धए मानव-राए ॥९८॥

---

1 घड़िआद । 2 बघनहाअस्त्र । 3 काँकोड़ । 4 करुआर । 5 पाँक ।
6 तम्बू । 7 जलजन्तुक शब्द । 8 साङ्गरूपक ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



उध्यतास्त्र-भट-रचित गणनातीत।
भेल समर-सामग्री शकटें नीत ॥९९॥

पहिले पहिल लड़'क छल दनुजक सङ्ग।
वीर भटक मनमे तें कुतुक-तरङ्ग ॥१००॥

मागध-चारण-वन्दि-व्रज-मिलि सूत।
नहुष-वंश-विरुदावलि गाओल पूत[1] ॥१०१॥

घोड़ा कूदि द्विरदकाँ[2] लाँघए चाह।
ऊँट निरखि से डरसँ भेल बताह ॥१०२

देखि उष्ट्रगति हथिनी चलल पड़ाए।
पकड़ल हाथी दुहुदिस सूँढ़ अड़ाए ॥१०३॥

वारण-गिरिसँ मदजल-झरना चूबि[3]।
तटिनी बहल, जाए जत पयदल डूबि ॥१०४॥

गजदल-वारिद-मण्डल गरजल घोर।
बरिसल हुलसि दानजल[4] पथ नहि थोर ॥१०५॥

सैन्यक पदाघातसँ ऊड़ल धूरि।
तेज-दहन-धूमोपम पहुँचल दूरि ॥१०६॥

सेना-स्वन भीषण सुनि फणि फुफुकार।
कए पुनि सटकल बिलमे लखि विस्तार ॥१०७॥

मगमे पुनि पुनि होइत डङ्कानाद।
हरलक यशोमतिक सब मन-अवसाद[5] ॥१०८॥

सेना-घनमालामे कहइत भव्य[6]।
आयुधराजि-चञ्चला[7] चमकल भव्य[8] १०९॥

---

1 पवित्र। 2 हाथीकेँ। 3 रूपक। 4 मदजल। रूपक। 5 दुःख। 6 शुभ। 7 विद्युत्। रूपक। 8 सुन्दर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अभ्रप्रभा बनओलक उज्ज्वल शुद्ध।
विवर-बाटकेँ, जे छल तम-अवरुद्ध ॥११०॥

जग-जननीक प्रसादेँ कण्टक फूल।
भेल मार्गमे आँकड़ पाथर तूल ॥१११॥

"पहुँचव कखन नगरमे तोड़व चैत्य[1]।
देखब विकट-समर-तट लम्पट दैत्य ॥११२॥

गरब हरब सब शूरक मारब सैन्य।
उपजाएब दनुजेशक हृदयहुँ दैन्य ॥११३॥

ढाहब कखन दुर्गके[2] तोड़ि कपाट।
अवगाहब सुचतुष्पथ[3] नगरी हाट ॥११४॥

ऊठत कखन युद्धथल आयुध नाचि।
एकओ सकत जाहिसँ नहि रिपु बाँचि ॥११५॥

हरब दानवक नव नव माया जाल।
धरब शिरहिँ पद सब भट काटि कराल ॥११६॥

असुरराजकेँ वक्षस्थलहिँ विशाल।
ताड़ि गदा संहारब सानुगमाल ॥११७॥

क्षितिमे पड़त दनुज-पति विक्षत-देह।
जय-जयकार करत सुर निस्सन्देह ॥११८॥

बहत समरधरणीमे शोणितधार।
गीदड़ काक गिद्ध मिलि करत विहार ॥११९॥

बहइत लखब दानवीदृगसँ धार।
खसइत भूतलमे जनु मुक्ताहार ॥१२०॥

---

1 प्रसिद्ध गृह। 2 क़िलाकेँ। 3 चौबट्टी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri


भेलि कृतज्ञ यशोमति कए उद्योग।
मिलन कराए हटाउति कखन वियोग ॥१२१॥

सजल-सङ्कुचित-जड़-दृग विगलित-तन्द्र।
देखब कखन प्रियामुख-शारद-चन्द्र" ॥१२२॥

इत्यादिक उत्सुकता-लसित-वितर्क।
नृपकाँ बुझए न देलक श्रम-सम्पर्क ॥१२३॥

विविध मनोरथ करइत मगहिँ नरेश।
गेल सुधा जनु चखइत दानव-देश ॥१२४॥

विरह-वेदना सतबए लागल जोर।
बाँचल जानि अपन जनु अवसर थोर ॥१२५॥

मदन-यातना दानव-विषयक कोप।
चाहल करए दुहू मिलि नृप-धृति-लोप ॥१२६॥

किन्तु प्रभात-तमक सम सहसा स्थैर्य।
तकरे गेल, उगल पुनि जनु रवि-धैर्य ॥१२७॥

बहुधा पओने रणमे भट उत्कर्ष।
अहम्पूर्विका¹सँ सभ भेल सहर्ष ॥१२८॥

प्रलय-कालमे उछिलल जनु पाथोधि।
सत्वर गेल सैन्य रिपु-पुरपथ-रोधि ॥१२९॥

धरणि-निखिल-रेणुक हो गणना शक्य।
किन्तु सर्वथा सैनिक-सभक अशक्य² ॥१३०॥

ध्वजा-कदलि-तति-राजित करि-गिरि भीम।
विकट-भट-श्वापद-चित आयत-सीम ॥१३१॥

---

1 हम पहिने तँ हम पहिने, एहि स्पर्धासँ दौड़ब। 2 व्यतिरेक ध्वनि।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



स्यन्दन-घनच्छाय-तरु-निकर-श्याम ।
हय-वीथी-नग-सरिता-बीच ललाम ॥ १३२ ॥

जाइत सैन्य असुरपुर रोसक लेल ।
जङ्गम-कानन-सम ओ लाक्षित भेल[1] ॥ १३३ ॥

यशोमती सेनाकेँ निरखि अमान[2] ।
कएलन्हि भूपक दानव-जय-अनुमान ॥ १३४ ॥

एकवीर नरपालक बल चतुरस्र ।
देलक मन्त्रिसुता-मन-मोद अजस्र ॥ १३५ ॥

सिंहनाद गज-गर्जन पटहध्वान ।
झाँपल सब रवकेँ पवि-[3]निनद-समान ॥ १३६ ॥

रहितहुँ चतुर तुरङ्गक अतिशय-वेग ।
नहि पदाति पछुआएल एको डेग ॥ १३७ ॥

सरय हयक गति लखइत विविध विचित्र ।
असवारहुक भेल मन सकुतुक-चित्र ॥ १३८ ॥

चरणहिसँ करि-चारण-पूर्ण-समर्थ ।
अङ्कुश धर' क निषादी बुझल न अर्थ[4] ॥ १३९ ॥

निज-रथ-चालन-कौशल-सङ्गहिँ सूत ।
प्रकटित हय-गति-पटुता कएल प्रभूत[5] ॥ १४० ॥

करि मान्थर्य तुरग पुनि लाघव[6] छोड़ि ।
मगमे गतिक लेल जनु समता जोड़ि ॥ १४१ ॥

जँ जँ ओ लगिचाएल असुरक गाम ।
तँ तँ बल-उत्कलिका बढ़ल निकाम ॥ १४२ ॥

---

1 उपमा । 2 अपरिमित । 3 वज्र । 4 प्रयोजन । 5 बहुत
6 शीघ्रता ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



हृष्ट पुष्ट सभ सैनिक प्रचुर उछाह ।
चलल वेगसँ मग जनु ऊड़ए चाह ॥ १४३ ॥

विविध कुतूहल करितहुँ उत्सुक भेल ।
सभसँ सभ अगुअइतहिँ मगभरि गेल ॥ १४४ ॥

दूरहिसँ सुनि डङ्का-तुमुल-निनाद ।
भीरु दनुज लहि शङ्का भेल ससाद[1] ॥ १४५ ॥

मनुष-धनुष-टङ्कारक पड़ितहिँ कान ।
दनुज-तनुज-[2]कम्पक नहि रहले मान ॥ १४६ ॥

कोलाहल भट-पटलक पथमे घोर ।
रिपुपुर पहुँचि मचाओल हलचल जोर ॥ १४७ ॥

से सुनि सबहुँ नुकाएल घर घर अर्भ[3] ।
दैत्य वधूक खसल कत भयसँ गर्भ ॥ १४८ ॥

असुर-नगर-सीमापर सेना गेल ।
पुर-जन-मानस शङ्का-पङ्किल भेल ॥ १४९ ॥

अविरल-करिपाली-तरलहयाली-रथभटबाली रणथलमे,
पहुँचल नृपसेना द्रुतगति तेना घनतति जेना नभतलमे ।
रज उड़ि रवि झाँपल अरि-उर काँपल रव बढ़ि नापल सुरसरणी[4]
दिकगज मुख खोलल सभ गिरि डोलल अहिपति झोलल चलि
धरणी ॥१५०॥

इति दशम सर्ग ।

1 दुःखी । 2 शरीरमे उत्पन्न । 3 नेना । 4 आकाश ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# एकादश सर्ग

हैहयनृपके तकबा लए, कए बिदा अपन सखिअहुकाँ।
भए ततए एकसरि बूझल, विरहिणी भार जीवहुकाँ ॥१॥

हरिणी व्याधक जनु करमे, शारिका[1] यथा पञ्जरमे।
ओ पड़लि आधिएँ परमे, व्याकुलि छलि दानवघरमे ॥२॥

जे सखी विरह-हुतवहके, आश्वासन-सलिले सीचल।
तनिको वियोगसँ हुनका, बाधा साधारण नहि छल ॥३॥

जनु परखि सून घर तस्कर, पैसल प्रसूनशर मनमे।
बँचलो विवेक-धृति मानिक-मुक्ता खल हरलक छनमे ॥४॥

स्वप्नक प्रसाद प्रिय–दर्शन, भेटल छल जे–किछु पहिने।
लोचन-अनुराग सिरजि से, पुनि कतए गेल से कहि ने[2] ॥५॥

रुचि-कणा छीटि चारुदिसि, गुण-पाश पसारल जे छल।
तनिकर विलोल-मानस-मृग, ताहीमे पड़ि कए बाझल ॥६॥

मानस-मेकल-[3]महिधरसँ, कत चलल मनोरथ-धारा।
पथ सहस विविध धए सत्वर, भए गेल नर्मदाकारा ॥७॥

सहृदयता जनु जड़ जीवक, भए गेल गगन-कुसुम-प्रभ।
चिन्ता-विद्रावित-निद्रा, एकावलि-नयनक दुर्लभ ॥८॥

तनुताक अछइतहुँ तनिकर, तनुमध्य अतनु की कएलन्हि।
अविरल शर-निकर बरसि कए, तकरहि तत पुनि जे धएलन्हि ॥९॥

---

1 मएना। 2 एतएसँ दश पद्यमे क्रमशः १ नयनप्रीति २ चित्तासङ्ग ३ सङ्कल्प ४ निद्राच्छेद ५ तनुता ६ विषयनिवृत्ति ७ त्रपानाश ८ उन्माद ९ मूर्च्छा ओ १० मृत्यु ई दशगोट कामदशा वर्णित अछि। 3 नर्मदानदीक उत्पादक पर्वत।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



योगिनिक सदृश छल मानस, जेँ वियोगिनिक अन्तर्मुख।
कखनहु तेँ बूझि पड़ल नहि, बाहरक विषयमे उन्मुख ॥१०॥

नारीक सहज भूषण जे, अछि लाज विदित सभ जगमे।
त्यागल तनिकाँ सेहओ जनु, लखि चलइत विरहक मगमे ॥११॥

प्रिय-विरह-दुःख-अर्णवमे, उबडुब करइत मन तनिकर।
अटपट-प्रलाप-परिपाटी[1], सिरजलक कतेक निरन्तर ॥१२॥

कएलक वियोग-दावानल, बढ़ि आधि-धूमकाँ दुस्सह।
अवलम्बन बिनु ओ अबला, खसि पड़लि अवनिपर निस्सह ॥१३॥

सहि सकलि जखन नहि बाला, कटु विरह एकसरि भए कए।
चाहल विश्राम तखन ओ, निज जीवन उत्कोचो[2] दए ॥१४॥

स्मर-शर-जर्जर-तनु आकुलि, अवलोकि नरेश-कुमारी।
दानवहुक कर्कश मनमे, जनु उपजल करुणा भारी ॥१५॥

मध्याह्न-मध्य तप-ऋतुमे, मरुलता कला वा चानक।
जे पाव, सएह गति पाओल, ओ वश भए विरहवितानक[3] ॥१६॥

कङ्कण प्रकोष्ठ[4]-आभूषण, राजेन्द्र-नन्दिनिक जे छल।
दए अङ्गुरीयके[5] निजपद, से बाहुमूल धरि पहुँचल ॥१७॥

एकावलीक लोचनसँ, ध्रुव मीन-केतनक केतन[6]।
हारल, तेँ बिगड़ि कएल ओ, हुनकाँ शर मारि अचेतन ॥१८॥

अविवेकी के कामक सन, जनिकहि बल त्रिभुवन जीतल।
ताही नरनाथ-कुमारिक, जे प्राणहरणमे रीतल ॥१९॥

मनसँ जे जनमि मनहिकाँ, वैरी बनि शरसँ ताड़थि।
तनिकासँ की अछि सम्भव, जे कथमपि हुनका छाड़थि[7] ? ॥२०॥

---

1 परम्परा। 2 घूसो। 3 विस्तारक। निदर्शना। 4 पहुँचा।
5 अङ्गुठी। 6 ध्वजा। 7 अर्थापत्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



गति आश्रयाशसम पाबथि, मनसिज आश्रयक विघाती।
त्यागथि तथापि कथमपि नहि, ओ अपन बानि उत्पाती ॥२१॥

स्मरशर वर्न कुसुम तनिक तनु-कुसुमहिकाँ लागल साधए।
अधिकार पाबि खल निर्मम,[1] झट बन्धुजनहिकाँ बाधए ॥२२॥

सम्भव नहि फेरि फिराएब, कालक घर पहुँचल जनकेँ।
कृपणक कर सोपल धनकेँ, दयितक पद लागल मनकेँ[2] ॥२३॥

प्रणयक स्वभाव जे विरहहुँ, होइछ ओ प्रतिभाशाली।
खारक लगनहु बढ़इछ की, नहि द्विगुण मजीठक लाली[3] ? ॥२४॥

चन्द्रिका तनिक तपबए तनु, मलयानिल हुतवह बनि दह।
अलिनाद मूल अवसादक, नहि कान कोकिलध्वनि सह ॥२५॥

स्मर-विशिख-भुजङ्गक डसितहिँ, पसरल वियोग-विष तनुभरि।
भ्रम दाह मोह दए लेलक, प्राकृतिक प्रसाद तनिक हरि[4] ॥२६॥

साँझहिँ शशाङ्क-मण्डलकेँ, उगइत लखि उदयाचलपर।
मानल बाला रतिरमणक, आयुध आग्नेय उदित्वर[5] ॥२७॥

उदधिक जल शोषि बुभुक्षित, बहराएल ई वड़वानल।
अम्बर-भक्षणक तृषेँ जनु, नव-हिम-दीधितिकाँ जानल ॥२८॥

कुमुदिनी-निकर-अनुरागेँ, रञ्जित उगइत रजनीकर।
हुनकासँ गेल बुझल पुन, विरहिणी-रोष-रोहिततर ॥२९॥

अमृतेँ भीजल चन्द्रक कर, सिरजलक तनिक तनुदाहे।
धाताक विमुख रहने ध्रुव, नीको करइछ अधलाहे[6] ॥३०॥

बुझि पड़ल सुधानिधि-दीधिति[7], तनिका विरहेँ हुतवहसन।
इष्टो अनिष्टसम लागए, जँ दुःखेँ रहए विकल मन ॥३१॥

---

1 मन्ताहीन। 2 दीपक। 3 प्रतिवस्तूपमा। 4 परिवृत्ति।
5 उदित। भ्रान्तिमान्। 6 अर्थान्तरन्यास। 7 चन्द्रकिरण।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



हालाहल-सोदर शङ्कर—तनुमध्य गरल-सहवासी।
जनु चन्द्र भेल तनिका प्रति, विषमय-कर-निचय-विकासी[1] ॥३२॥

ककरा दुख कहथु सुनओ के, दानवक भवनमे बाला।
छलि पड़लि एकसरि वनमे, जनि मृदुल मालती-माला ॥३३॥

नव-उदित कलाधरकेँ लखि, आमोद जगत सब सेवल।
चकवीक सङ्ग एकावलि, मिलि विरहेँ कानलि केवल ॥३४॥

अलि-गुञ्जित जे छल कानक, पहिने कमनीय रसायन।
भए गेल सएह पुन सम्प्रति, सन्तापक जनक गरलसन ॥३५॥

यम-दिसिसँ निकसल[2] अहिचय—विष-मय-निश्वासेँ पूरल।
मलयानिल परसि तनिक तनु, तपवइत त्वरित नहि घूरल ॥३६॥

चन्दन-वन-पवन परसितहिँ, विषदाह पाबि ओ बूझल।
अतिशीघ्र गुणिहुसँ दोषिक, सिरजए संसर्ग अधिक फल ॥३७॥

मलयानिलकेँ दक्षिण[3] बुझि, ओ सेबि वामकेँ जानल।
स्मरअनल-अनिलमैत्री पुनि, अनिवार्य हेतु तत मानल ॥३८॥

यदि जगत्प्राण भए दक्षिण, पवमान विरहि—संहारक।
सँ कथा कोन मधुसेवक—वनचर-कोकिल-परिवारक[4] ॥३९॥

स्वर-विजय-मत्सरी[5] अवसर, भल पाबि कतेको दिनपर।
पिक-निकर सताए निरन्तर, बदला जनु लेलक कपटर ॥४०॥

जगदानन्दक कोकिल—रुति, तनिकामे हेतु विषादक।
शीत-ज्वरार्तमे शशिरुचि, की नहि निमित्त अवसादक[6] ? ॥४१॥

पोषकहुक जे विद्वेषी, से पिक अनुचर नृपमारक।
नहि चित्र, भेल जे निनदेँ, विरहाकुल-हृदय-विदारक ॥४२॥

---

1 काव्यलिङ्ग। 2 काव्यलिङ्ग। 3 अनेकमे समानानुरागी ओ दहिन।
4 अर्थापत्ति-समुच्चय। 5 द्वेषी। 6 प्रतिवस्तूपमा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



काकलिएँ विकलित मनमे, पिकनिकर-असूया जागल।
क्रूरप्रहार तत काकक, तनिका तेँ नीके लागल ॥४३॥

विरहाकुल-एकावलिकेँ, काकलिओ कारण शोचक।
विनिपातोन्मुख[1] जनकेँ नहि, हितवचनो होइछ रोचक ॥४४॥

काजर-सन्निभ-वपु साँझहिँ, भृङ्गश्रेणी-डाइनि जनु।
किछु गुनगुनाए चहुदिसि घुमि, पढ़लक वियोगि-मारण-मनु[2] ॥४५॥

जनु चीन्हि कुसुमचापक चल—अलि—ततिकेँ ज्या नृपतनया।
लेलैन्हि कानमुनि सत्वर, टङ्कारध्वनिसँ सभया ॥४६॥

उद्यानमध्य ऋतुराजक, ओ परखि प्रवेश सँकाइलि।
लोचन दुहु मूनि विरहिणी, कम्पित भए घरहिँ नुकाइलि ॥४७॥

जनु सखा मधुक मधु-सब्झेँ[3], दानवक बनल हितकारी।
तनिकाँ सतबए लागल कए, कत अधम उपद्रव भारी ॥४८॥

स्मर-चन्द्र-मधुप-मधु-कोकिल-मलयानिल-मिलित प्रहारक।
नहि सहनिहार हो वीरो, की पुनि बाला नृपदारक[4] ? ॥४९॥

एकओ आश्वासनकारक, हुनका ओहन आपदमे।
नहि छल, तथापि रहले थिर, अनुराग बनल पतिपदमे ॥५०॥

आतपेँ लता जनु, विपदेँ, मुरुझाए पड़लि धरणीपर।
मनुजेन्द्र—नन्दिनी मनमे, सोचए लागलि तदनन्तर ॥५१॥

"परिजनक प्रमोद-निबन्धन[5], मातापिताक प्राणोपम।
अद्भुत-कौतुकमय-जीवन, कत छलहुँ सखी-निकरक हम ॥५२॥

कत दानवघरमे दारुण—दुख सहइत वन्दी[6] भेलहुँ।
दैवक भीषण-रोषानल— ज्वालामे हा ! पड़ि गेलहुँ ॥५३॥

---

1 अवनति दिसि प्रवृत्त। प्रतिवस्तूपमा। 2 रूपकोत्प्रेक्षा। 3 नामसँ।
4 राजकन्या। 5 कारण। विषम। 6 कैदी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



दानवक हाथसँ हमरो, मुक्तिक कथमपि नहि सम्भव।
बगुलाक लोलसँ पोठिक, छूटब सर्वथा असम्भव ॥५४॥

लोभेँ वा डरेँ विवश भए, नहि कालकेतुके वरबे।
विष खाए समाए अनलमे, वा पानि डूबि बरु मरबे ॥५५॥

उत्तम वंशक सन्तति भए, कुलटाक बाट नहि धरबे।
अवदात-राज-कुलकेँ नहि, व्यभिचार-कलङ्केँ भरबे ॥५६॥

तेजथि जे नारि पतिव्रत, विवशो भए तनिकहु भल नहि।
जे पुनि स्वतन्त्र रहि, तनिकर, दुर्गति विबुधो न सकथि कहि ॥५७॥

मन-वचन-कर्मसँ अनुखन, निश्छल पतिसेवा नारिक।
पुरुषार्थ-चतुष्टय[1]-साधक, कर्त्तव्य शास्त्र-सम्मत थिक ॥५८॥

तकरा उपेखि जे जप-तप—तीर्थाटन करथि कुलीना
परिणामहिँ विफल बूझि सब, पछताबथि से गतिहीना ॥५९॥

ब्रह्माण्डमध्य किछु दुर्लभ, अछि वस्तु न पतिव्रतासँ।
किछुओ अदेय की होइछ, जनयाचित कल्पलतासँ? ॥६०॥

पति मनोनीत छथि हमरा, नृप एकवीर बलशाली।
द्रुत दलत सएह दनुजाली, जनु तम-तति दीधिति-माली[2] ॥६१॥

दुर्दशा हमर ई कोना, हा! पड़त कानमे तनिकर।
जानी नहि किछुओ टोना, आकर्षण-हेतुक जनिकर ॥६२॥

जँ सुनितथि हमर दशा ओ, तँ कथमपि बैसि न रहितथि।
विक्रमी मनस्वी शर धनु, नरनाथ[3] हाथ ध्रुव गहितथि ॥६३॥

औरस–सुत[4] चक्रधरक[5] जे, क्षत्रिय कुलमे छथि पालल।
कौतुकेँ कतेको रिपुभट, बालक रहितहुँ जे घालल ॥६४॥

---

1 धर्म धन काम ओ मोक्ष। 2 सूर्य। 3 परिकर। 4 अपनासँ धर्मपत्नीमे उत्पन्न पुत्र। 5 नारायणक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तनिकासँ दानव-कानन—निर्मूलन ध्रुव ईषत्कर[1] ।
धरणीधर-पक्ष-च्छेदन, की कुलिशायुधसँ[2] दुष्कर ? ॥६५॥

की पथविभ्रमे कदर्थित, घुमितहिँ छथि कतहु यशोमति ? ।
सम्भव नहि हुनका भ्रान्तिक, अछि तनिक प्रमा-क्षालित[3] मति ॥६६॥

की मायिक दनुज–पुरहिसँ, सकलीह जाए नहि बाहर ? ।
हो नहि अवरुद्ध कतहु गति, मन्त्र-प्रभावसँ तनिकर ॥६७॥

की हमरहि जकाँ विपतिमे, गेलीह कतहु पड़ि सुन्दरि ? ।
ई पौरुष ककर, तनिक जे, पुनि छूबि सकए छायो धरि ॥६८॥

की भए विरक्त दुखभोगेँ, अनठाए कतहु छथि बैसलि ? ।
चर्चा नहि हुनक विरागक, ओ रहथि प्रणयमे पैसलि ॥६९॥

सकलीह पहुँचि की नहि ओ, असहाया सुरसरिता–तट ? ।
धृति-मति-साहस अछि सङ्गहिँ, जकरा बल ई नहि दुर्घट ॥७०॥

गङ्गातट गेनहु की नहि, भेटलथिन्ह हुनका हैहय ? ।
दैवीवाणीक कनेको, होइछ नहि अर्थ-विपर्यय ॥७१॥

अप्रतिभेँ यशोमती दबि, कहि सकलि न की हमरो दुख ? ।
अछि राज–भवनमे पोसलि, उक्ति-प्रगल्भ[4] नृपसम्मुख ॥७२॥

निर्गुण बुझि कएल उपेक्षा, दुख सुननहु की नरपुङ्गव ? ।
शरणागत-रक्षा-त्यागक, अछि हुनकासँ नहि सम्भव ॥७३॥

हमरापर सदयो की ओ, छथि भीत प्रबल दानवसँ ? ।
कातरताश्रयणक सम्भव, सपनहु न वीर-मानवसँ ॥७४॥

की हेतु न एखन धरि ओ, अएलाह सकल बल सङ्गेँ ? ।
घुरलीह यशोमति वा नहि, व्याकुलि भए आशाभङ्गेँ ? ॥७५॥

---

1 सुकर । 2 इन्द्रसँ । 3 यथार्थज्ञानसँ स्फीत । 4 बजबामे प्रौढ़ ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



आधार एक प्राणक जे, दुखमे सहचरी हमर छलि।
सेहओ दुर्दैवक घटने, हटि जाए कतए-दन बिलमलि ॥७७॥

बुझि पड़ए न हमर विषयमे, करबाक दैवके की अछि ?।
पर-पीड़नमे ओ प्रायः, शमनक[1] लेलन्हि भारा गछि ॥७८॥

हे विधे ! विधेय[2] अपन कए, भए जाउ कृतार्थ अहाँ धरि।
ई नरक-यातना भोगब, हम तँ अनन्त जीवन भरि ॥७८॥

हा दैव ! न दुसह-विरह-दुख, सहि होइछ आब पलोभरि।
करुणा-कोमल भए लिअ झट, शठ प्राण-विहङ्गमके हरि ॥७९॥

धिक दुर्विपाक[3] ई हमरे, जन्मान्तर-सञ्चित-कर्मक।
धिक हमर बुद्धिके जे तत, नहि लागल पथमे धर्मक ॥८०॥

प्राणेश ! अहाँक कहबितहुँ, हम भोगि रहलि छी दुर्गति।
के दोसर आबि दयामय, भए हमर हरत ई आपति ? ॥८१॥

मरु-पाँतर-पथिक जकाँ जे, अछि नयन तृषासँ व्याकुल।
दर्शन दए करब न तकरा, की मोद-अश्रुएँ सङ्कुल ॥८२॥

होएत कृतार्थ कखन ई, कोमलते जलज लजओने।
करयुग अहाँक पदपङ्कज—सेवाक सुअवसर पओने ॥८३॥

जे दौड़ि प्रेम-पदवीमे, काँटहुकाँ किछु नहि बूझल।
सङ्कल्प-कल्पना[4] करइत, जकरा विरहो नहि सूझल ॥८४॥

जकरे व्याकुलते स्तम्भित[5], गति सकल-करण-परिवारक[6]।
हे प्राणनाथ ! की सम्भव, नहि ताहि मनक उद्धारक ? ॥८५॥

दासीक प्रबल आशा छल, अपने अनुकम्पा करबे।
परिचर्यहिँ रहि, गहि पदयुग—तरणी भव-झरिणी[7] तरबे ॥८६॥

---

1 यमराजक। 2 कर्त्तव्य। 3 अधलाह फल। 4 मानस कर्मक रचना। 5 जड़ीभूत। 6 इन्द्रिय-वर्गक। 7 संसार-नदी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



हा ! किन्तु विधाता दारुण, चललाह तकर प्रतिकूले ।
रहि गेल हाथमे हमरा, मानसिक-वेदना-शूले ॥८७॥

अनुताप न होइछ प्रीतिक, कएलहुँ जे उचित-विचारे ।
मारक वा नहि किछु अछि भय, मर्म-च्छेदक-शर-धारे ॥८८॥

प्रिय ! जाए अहाँक हेतु जँ, ई कथमपि हमरो जीवन ।
तखनहि हो प्रणय-परीक्षा, दए शुद्धि-लाभसँ शोभन ॥८९॥

छूटल पुर परिजन बान्धव, प्रिय-सखी-निकर सुखसम्पति ।
तकरो न खेद जँ सेविअ, पदकमल अहाँक अचलमति ॥९०॥

शशिकान्त[1] कान्त ! यदि पाथर, पसिझइछ रजनिकर-रुचिएँ[2] ।
तँ हृदय अहाँक द्रवत की, नहि हमर निष्कपट-रुचिएँ[3] ॥९१॥

दासी-दुख देखि दयासँ, अपनेक हृदय होएत द्रुत[4] ।
रवि-बिम्ब परसि प्रतिभासँ, सरसिजक तुहिनसम विद्रुत[5] ॥९२॥

दानव-गृहीत बुझि त्यागी, हमरा जनु नाथ ! कदाचित ।
केवल अहाँक अनुरागी, जे हृदय शुद्धिसाक्षी स्थित ॥९३॥

मानसिक-व्यतिक्रमहुक[6] नहि, प्राणेश्वर ! जानू सम्भव ।
छथि जतए रातिदिन जागल, द्रष्टा चेष्टाक मनोभव ॥९४॥

जीवनधन ! विरह व्यथासँ, अवसान हमर लगिचाएल ।
अपनेक दयामय ! किन्तु न, संवादो धरि हा ! आएल ॥९५॥

थिक हमर याचना अन्तिम, ई एक कृपाकए मानब ।
परलोक पहुँचनहु पर प्रिय !, दासीकेँ निजजन जानब" ॥९६॥

उन्मिषित[7]-यातना तावत, दृग तनिक नोरसँ भरलक ।
विदलित कए विकल-हृदयकेँ, अवशिष्ट चेतना हरलक ॥९७॥

---

1 चन्द्रकान्त मणि । 2 कान्तिएँ । 3 प्रीतिएँ । 4 शीघ्र ।
5 पघिलल । 6 मानस-व्यभिचारहुक । 7 बढ़ल ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



रहइत जँ रैभ्यभवन ओ, तँ हाहाकार तुमुल भए।
गहइत अवश्य अम्बरकेँ, निनदान्तर अन्तर्हित कए।।९८।।

नृपसुता पड़लि छलि अवनी–तलमे नितान्त निस्सहतनु।
उन्मूलित–सहजालम्बन–दयनीयदशा वल्ली जनु।।९९।।

पहुँचल जनु देहद्युतिसँ, मद हरइत पाकल जामुक।
विधिसँ प्रेरित तत्कालहिँ, तत कालकेतु तत्कामुक।।१००।।

एकावलि-दीनदशा लखि, दनुजहुक हृदयमे उपजल।
किछु दया, त्वरित तेँ सीचल, कए पवन तुहिन-शीतल-जल।।१०१।।

चैतन्य पाबि मुख लखइत, दानवहिक राजकुमारी।
ओ खिन्नहृदय मूर्च्छहिकेँ, मानल सुखकर सुकुमारी।।१०२।।

जावत अवनीशसुताकेँ, प्रकृतिस्थ[1] जानि कामातुर।
पुनि करए कदर्थित चाहल, अनुनय-विनयेँ कालासुर[2]।।१०३।।

चरनिकर रजनिचरनाथक, तावत अनेक सत्वरगति।
तत आबि सुनओलक प्रभुकाँ, भूपक आगम कातर-मति।।१०४।।

"दनुजेश! नरेश सुरेश-समान अमान[3]अमानव[4]-पौरुषधारी,
चतुरङ्ग-उमङ्ग-तरङ्ग–कुरङ्गित[5]-सैन्यक सङ्ग महाभयकारी।
छथि एक अबैत लबैत अनेक चमूपति वीरघटामदहारी,
हिनके सखिकेँ रथ-बीच चढ़ाए बढ़ाए कुतूहल युद्धक भारी"।।१०५।।

इति एकादश सर्ग।

1 चैतन्य-युक्त। 2 कालकेतु राक्षस। 3 अपरिमित।
4 अलौकिक। 5 हरिणकाँ उछलैत।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# द्वादश सर्ग

एकावलीक मन दुख-पीडित, सानन्द भेल चारक बातें ।
अटवीक ग्रीष्म-तापित-तरु जनु, पल्लवित होए घन-जलपातें ॥१॥

चर-वचन किन्तु असुर-श्रुतिमे, ऊसरमे बाओल-बीजजकाँ ।
अवधान-सलिल-सम्पर्क विना, उपजओलक नहि किछुओ फलकाँ ॥२॥

अनुखन टङ्कार मार-धनुषक, सुनि बहिर कान दैत्यक दूहू ।
छल, तें न अकानि सकल सेना-सिन्धुक निनाद होइत हूहू ॥३॥

दानव जकरासभकें नियुक्त, कएने छल नगरक रक्षामे ।
से सबहुँ भेल कातर पहुँचल, उद्यानक भीतर कक्षामे ॥४॥

अवलोकि दैत्यपतिकें नवीन-ललनाक प्रसादनमे तत्पर ।
सब सावधान करबाक हेतु, उच्चारण कएलक उच्चस्वर ॥५॥

"हे दनुजराज ! पुरसीमापर, अछि पहुँचि गेल मनुजक सेना ।
कल्पान्तकाल तटमे उछिलल, पाथोनिधि सभक पूर जेना ॥६॥

उग्रप्रभ व धीरस्वभाव, पञ्चानन[1]वल वन-सञ्चारी ।
अधिपति अछि मानव-युवा जकर, विक्रम[2]विक्रम जनु तनुधारी ॥७॥

ओ थिक कोनो देवक सेवक, दानवपरिवारक प्रबल वैरि ।
सेना पसारि चहुदिसिसँ जे, लेलक अछि सत्वर नगर घैरि ॥८॥

सभ अपरिचिते अछि, किन्तु एक, केवल चिन्हारि ओकर सङ्गें ।
अथि हिनक सखी उल्लसित बूझि-पड़इत विकसित वदनक रङ्गें ॥९॥

ककरहु भूपतिकें ओ वजाए, आनल अछि अपनहि सम्पर्कें
ई सभ जनकाँ असुरेन्द्र ! विदित, होइछ अनुकूल-नियत-तर्कें ॥१०॥

---

1 सिंह । 2 विलक्षण वा विगत छैक क्रम जाहिमे ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



स्त्रीगणक दैत्यकुञ्जर! केवल, हो वाणी विभ्रम रूप रम्य।
आचरण किन्तु दारुण नितान्त, दैवहुक प्रायशः अनवगम्य ॥११॥

महिषासुर-शुम्भ-निशुम्भ-सुन्द[1]-उपसुन्दप्रभृति-निधनक कारण।
वनिताक प्रीतिए भेल नाथ! ई अछि पौराणिक-निर्धारण ॥१२॥

नारिए मोहिनी बनल विष्णु, बटबाक हेतु लए अमृतघटी।
की असुरसमाजक सर्वनाश, कएलन्हि पसारि नहि आरभटी[2] ॥१३॥

विश्वास करथि जे कामुक भए, राजा स्त्रीजातिक अज्ञानी।
से लगबथि अपनहि गरदनिमे, दुहुहाथेँ विपति-ससरफानी[3] ॥१४॥

मनुजक साहस एतेक भेल, जे दनुजक पुरपर चढ़ि आएल।
आलस्य दैत्यनायक! त्यागू, सङ्ग्राम भयङ्कर लगिचाएल ॥१५॥

नहि मानव मानि उपेक्षणीय, रिपु कथमपि थिक विक्रमशाली।
वृष बनल शक्रपर चढ़ि ककुत्स्थ, की नहि संहारल असुराली[4]? ॥१६॥

मानुषक पौरुषे हो कतेक, असुरेश! किन्तु अछि घर फूटल।
दायाद देवगण दुरभिसन्धि[5], मनुजहिक आड़ कत फल लूटल ॥१७॥

देखइत छिद्र रह सहस्राक्ष, मायावी जकर प्रकृतिवैरी।
से पाबथि असुर विपत्ति, होथि, जखनहि प्रमत्त अथवा स्वैरी ॥१८॥

नहि द्रोहमलिन सुरमनमे किछु, कर्तव्याकर्तव्यक विचार।
बेटीकेँ की चेटी[6] बनाए, नहि इन्द्र कएल असुरापकार? ॥१९॥

माया-वामन बनि की बलिकेँ, वनमाली छलल न वितथ बाजि?।
पुनि सएह जलन्धर-मरणहेतु, तुलसीव्रत तोड़ल कपट साजि[7] ॥२०॥

---

1 ताड़काक हेतु दुहुभाइमे युद्ध भेलासँ प्राणान्त भेलैक।
2 आडम्बरपूर्ण चेष्टा। 3 निदर्शना। 4 ई कथा भागवतमे अछि।
5 दुराशय। 6 ई हरिवंशमे कथा छैक। 7 पद्मपुराणमे ई कथा छैक।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अति-कूटनीति-पटु सुरपटलक, किछु अछि एहूमे गुप्त चालि।
होएब यदि नहि सब सावधान, दानवकुलकेँ तँ देत घालि ॥२१॥

सहइछ कदापि नहि अभिमानी, क्षुद्रो क्षितिपति नगरोपरोध।
की पुनि दानवचक्रेश! अहाँ, अनठाविअ कए ललनानुरोध[1] ॥२२॥

अपनहिक उपेक्षा लखि उदास, अछि वीर दनुजसेना समस्त।
नहि तँ निमिषहिमे मनुजशौर्य-सूर्यक भुजवीर्यें करत अस्त ॥२३॥

होएत दानवभट-सिंहनाद, जखनहि अर्णव-रव-तुल्य गाढ़।
मानव नैसर्गिक-कान्दिशीक[2], के समरभूमि रहि सकत ठाढ़? ॥२४॥

मायासङ्ग्रामक नाम सुमिरि, थर थर काँपए अमरहुक चित्त।
दैत्येन्द्र! जाहि दानवसैन्यक, तकरहु चिन्ता की नरनिमित्त? ॥२५॥

अपनेक सुभट-रण-परिपाटी, लखितहिँ मनुजक धड़कत छाती!
नहि वैनतेय-आक्रमण हेरि, अहि हो निजवीर्य-पक्षपाती ॥२६॥

पर्याप्त निखिल-नरघातहेतु, एके दानव दनुजाधिनाथ!।
करिणी-कदम्बकेँ करइछ की, असहाये केहरि नहि अनाथ[3]? ॥२७॥

दुइ चारि बेरि भूतलरणमे, विजयक लाभहिसँ भेल धृष्ट[4]।
ई पहुँचि गेल पातालहुमे, दानवबलकेँ बुझइत निकृष्ट[5] ॥२८॥

जँ समराङ्गणमे असुरशौर्य-परिचय पाओत ई एकबेरि।
तँ केओ दोसर नर कदापि, एहन साहस नहि करत फेरि ॥२९॥

तेँ देब एकरा आवश्यक, अज्ञात-वीरचर्या सिखाए।
स्मरणहु भीषण पुनि असुरसङ्ग-सङ्ग्राम-साहसक फल चिखाए ॥३०॥

घबड़ाए गेल अछि पुरवासी, जे किछु नगरक उपरोधनसँ[6]।
होएत दशा की तकर, अहाँ, यदि रहब विमुख आयोधनसँ? ॥३१॥

---

1 अर्थापत्ति। 2 भयसँ पड़ैनिहार। 3 विधवा। प्रतिवस्तूपमा।
4 प्रौढ़। 5 नीच वा छोट। 6 घेरब।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



चूटिहुकाँ यदि हो पदाघात, तँ झट अमर्षसँ वीन्हि लैछ।
बलवानो वैरिक तिरस्कारकेँ वीर कदापि न विसरि दैछ ॥३२॥

अपने यदि राखल नृपतिसुता, गहि वलात्कारसँ भवन आनि।
तँ बैसल छी की चूपचाप, असुरेश! समर दिअ त्वरित ठानि ॥३३॥

आएल अछि वैरी लड़ए वीर, कन्यापहरणसँ पावि ग्लानि।
स्वच्छन्द सदा उद्दामवीर्य, राजा नहि सहइछ मानहानि[1] ॥३४॥

आरम्भक पहिनहिं फलविचार, कार्यक प्रसङ्ग करबाक थीक।
पाछाँ कएने नहि हो कथमपि, दानवपुङ्गव! परिणाम नीक ॥३५॥

कोनो कार्यक जेँ अनारम्भ[3], बुद्धिक लक्षण कह पहिल नीति।
आरम्भानन्तर अन्तगमन[2], दोसर, तेँ लड़बे उचित रीति ॥३६॥

ईर्ष्यालु रिपुक रोषानलमे, अपकार-घृतक आहुति देने।
निश्चिन्तजकाँ की वैसल छी, नहि चलत काज कातर भेने ॥३७॥

कापुरुष-सुलभ ललनाक लोभ, हे दनुजराज! आबहुँ छोडू।
देखाए अपन उद्दण्ड शौर्य, सत्वर शत्रुक साहस तोडू ॥३८॥

भ्रूभङ्गमात्रसँ ध्रुव होएत, अपनेक समरमे विजयलाभ।
पूजेँ वश भए नरपक्षपात, निर्जर मिलि कर जँ पद्मनाभ ॥३९॥

रखइछ मानव-दल-दलन-शक्ति, छोटो भट दानवसेनामे।
की पुनि प्रधान, वासव-समेत सुरगण काँपए जकरा नामे ॥४०॥

उज्ज्वल दानवकुलमे कलङ्क, ई पहिले बेरि प्रभो! लागत।
अपनेक हृदयमे यदि कदाच, सूतल विजिगीषा नहि जागत ॥४१॥

प्राणापहारकारक रणमे, बरु वीर सहए अस्त्रप्रहार।
पुनि कथमपि नहि असुराधिनाथ! उच्छृङ्खल वैरिक तिरस्कार ॥४२॥

---

1 अर्थान्तरन्यास। 2 आरम्भ नहि करब। 3 सम्पूर्ण करब।
4 सूर्य। 5 अर्थापत्ति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अनको परिभव दुस्सह होइछ, जनु तप-मध्यान्हक भानुमान[4]।
अभिमानीकाँ दैत्याधिराज ! वैरिक तँ वड़वानल-समान[5] ।।४३।।

संसारक नश्वरता विचारि, नीतिज्ञ कहथि जगमे समस्त ।
शूरक रिपुकृत-अपमानमलिन-जीवनसँ मरणे थिक प्रशस्त ।।४४।।

कृकलाशक[1] जनु भित्तिस्थ कीट, जे दूरहुसँ भए दृष्टि-लक्ष्य ।
मधु-मधुरिमाई-द्राक्षासदृक्ष[2], होइछ मनुष्य राक्षसक भक्ष्य ।।४५।।

तकरहु हेतुक सन्नाह[3] कोन, रणकथा तथा लज्जाकारक ।
आदेशमात्र दए दैत्यनाथ ! देखू लीला नरसंहारक" ।।४६।।

ई तीव्र त्वरित पैसल मनमे, पुर-रक्षक-पक्षक वचनवाण ।
एकावलीक विरहासहिष्णु-दनुजेशक कएलक विकल प्राण ।।४७।।

सभकेँ लगइछ कटु उचित बात, यदि अपन विचारक हो विरुद्ध ।
सर्वज्ञम्मन्य[4]–श्रीमदान्ध-राजाकेँ तँ पुनि गरल शुद्ध ।।४८।।

असुरेन्द्र किन्तु परिणाम-रम्य, अनुचरक वचन सुनि हित मानल ।
ओ तेँ कनेक अप्रिय लगनहु, तकरासभपर नहि रिस ठानल ।।४९।।

रक्षकसभपर दए सौम्य दृष्टि, सेनाकाँ करवए कहल सज्ज ।
पूछल एकावलिकाँ लखि किछु, तत्काल मुदित विचलित सलज्ज ।।५०।।
"प्राणेश्वरि ! पुछइत छी किछु हम, भए चरण-प्रणत ओ जोड़ि हाथ ।
आशा अछि जे निज दास जानि, कथमपि नहि करवे अहाँ लाथ ।।५१।।
लक्षाधिक-रक्षक-रक्षक चक्षु–अलक्षित निकसि योगबलसँ ।
प्रियतमे ! अहाँक सखी ककरा, अनलक बजाए अवनीतलसँ ? ।।५२।।
ई जनक अहाँक थिकाह रैभ्य, की आएल छथि भए परम क्रुद्ध ! ।
आनब घर आदरसँ हुनका, पूजब, सुन्दरि ! नहि करब युद्ध ।।५३।।

---

1 गिरगिटक । 2 मधुसम मधुर दाखसन । 3 युद्धक उद्योग ।
4 अपनाकेँ सर्वज्ञ माननिहार । 5 रक्षा कएनिहार राक्षसक ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



पूजें प्रसन्न भए ओ अवश्य, अनुमति देताह विवाहहेतु ।
दानव सब सत्कारहिँ प्रवीण, की पुनि दनुजेश्वर कालकेतु[1] ।।५४।।

किंवा थिकाह ई एकवीर, जनिकापर छी अनुरक्त अहाँ ।
अएलाह वताह वृथा, पौरुष, दानवपर चल मानवक कहाँ ? ।।५५।।

ई औरस जनिक थिकाह, सएह, असुरक बल-जलनिधि लखि अथाह ।
की नहि कपटें बनलाह मीन–कच्छप-नृसिंह-वामन-वराह ? ।।५६।।

जकरहि विक्रमसँ भीत, नीत, दिन करथि कन्दरामध्य देव ।
की उचित ताहिदनुजक विरुद्ध, मनुजक रणपथ पर पएर देब ? ।।५७।।

पड़ि गरुड़चञ्चुमे बरु भुजङ्ग, प्रज्वलित अनलमे वा पतङ्ग ।
बाँचए, पुनि नहि कथमपि कृशाङ्गि ! नर जाए समरमे असुरसङ्ग[2] ।।५८।।

तें हमरा पर जनु होइ क्रुद्ध, अपनहि आएल छथि करए युद्ध ।
फल भोगताह साहसक शुद्ध, दैवो नहि चल दानवविरुद्ध[3]" ।।५६।।

दनुजक भाषण सुनि एकावलि, कहलैन्हि मनहिमे "दुष्ट ! आब ।
अएलहु अछि मृत्यु निकट तोहर, तें जानह नहि हैहयप्रभाव ।।६०।।
सुर-मुनिक वचनकें सत्य करए, धएलन्हि माधव नाना स्वरूप ।
जे छथि परेश, ई तनिक तनुज, तोहर वधमे जनकानुरूप ।।६१।।
कत गाल बजाबह अबला बुझि, हमरा लग वृथा वीरमानी[4] ।
भल पएबह सकल कलुष कर्मक, ठानत रण जखन नृपति मानी ।।६२।।
जे रह नृशंस[5] अत्याचारी, नहि उचित रहस्य कहब तकरा ।
नहि वितथ कथा बाजए जानी, तें होइत छी अपलापपरा[6] ।।६३।।
नहि करितहुँ तोहर सङ्ग पतित ! सम्भाषण पातकजनक जानि ।
केओ दोसर नहि कहनिहार, तें सहए पड़ल किछु धर्महानि ।।६४।।

---

1 अर्थापत्ति । 2 आक्षेप । 3 काव्यलिङ्ग । 4 अपनाकें वीर माननिहार । 5 क्रूर (घातक) । 6 लाथ करबामे तत्पर ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



चलि गेलि कतहु सहचरी, जकर, विरहेँ व्याकुल निसिदिन कानी ।
के आएल छथि ई नृप ससैन्य, से दैत्यराज! हम नहि जानी" ।।६५।।

ई वचन महीसम्मुख मुख कए, अवनीशसुतासँ उचारल ।
अभिमतविरुद्ध भेनहु दनुजक, श्रुतिमध्य सुधाधारे ढारल ।।६६।।

कामीक प्रीतिमय हृदयमध्य, प्राथमिक[1] अमूल्य-रसायनसम ।
मुग्धाक निषेधवचन होइछ, की नहि विधिवाच्यहुसँ प्रियतम ? ।।६७।।

ओ निज-आदेशक जनु सङ्गहि[2], उपवन-प्राकारक[3] द्वारदेश ।
सेनापतिकेँ सन्नद्ध सैन्य, लए देखि उपस्थित दानवेश ।।६८।।

एकावलीक विरहेँ कातर-मनकेँ कोनहुना झट सम्हारि ।
अतनुक वाणेँ जर्जर तनुसँ, कम्पहुकेँ कथमपि तथा टारि ।।६९।।

अनुरागेँ जे छल किसलयरुचि, लोचन, तकरा कए रुधिररक्त ।
प्रत्येक अङ्गकेँ दनुज विरचि, कवचादि-आवरण-समासक्त ।।७०।।

गहि अस्त्रशस्त्र स्यन्दनपर चढ़ि, दानव उत्साहेँ चपलचित्त ।
तृणतुच्छ मानि मानवबलकेँ, भए गेल विदा सङ्गरनिमित्त ।।७१।।

वाहनमे अगणित दैत्यगणक, छल हाथी तुरग ऊँट गदहा ।
कूकुर बिलाड़ गीदर हुड़ाड़, अज[4] भालु कुरङ्ग[5] गवय[6] बसहा ।।७२।।

शार्दूल[7] सिंह सूगर गएँड़ा, घड़िआड़ सोँस महिसा साम्हर[8] ।
कुक्कुट मयूर वक काक गृध्र, सारस उलूक तित्तिर वानर ।।७३।।

फड़कल दनुजक भुजनयन वाम, भेटल सन्न्यासी छूछ घैल ।
नाङटि विधवा नाङर कनाह, तेलक टाड़ा ओ वसन मैल ।।७४।।

1 पहिले बेरुक। 2 अतिशयोक्ति। 3 दिबारक। 4 बत्तू। 5 हरिण। 6 गोसदृश नीलगाए। 7 बाघ। 8 हरिणसन जन्तु।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



यात्राक अशुभसूचक अओरो, दनुजाधिराज देखल कतेक।
विधिवश परन्तु विक्रममदान्ध, मानल सभ निष्फल निर्विवेक॥७५॥

असुरेश चलल रणभूमि भीम-अनुचर-रजनीचर-सैन्य साजि।
पथ करइत दर्शकमन सशङ्क, जनु भूतनाथ[1] लए प्रमथराजि[2]॥७६॥

छल भट केओ शृङ्गी[3] भृङ्गी-रुचि शूकरमुख विकटाक्ष जटी[4]।
केओ वारणरद[5] ऊर्ध्वकेश, पुच्छी[6] लम्बोदर कृत्तिपटी[7]॥७७॥

ककरो स्वर रासभ-मद-मर्दक, गरदनि ककरो ऊँटक समान।
बाघहुसँ ककरो नख विशाल, हय लज्जित ककरो देखि कान॥७८॥

पुरसँ बाहर सङ्ग्रामयोग्य-चत्वर[8]से पहुँचि असुरसेना।
गरजल सन्नद्ध गगनमे घन-पटली वर्षा ऋतुमे जेना॥७९॥

सुनि तुमुल नाद, अवलोकि दनुज-बलराजी विपुल भीरुभीसा[9]।
हैहय-नरेशदलसे न रहल, ककरहु मन आनन्दक सीमा॥८०॥

क्षत्रियबल दानवसेनापर, गजततिसे सिंहजकाँ झपटल।
रिपु-शुष्क-तृणावलिकेँ सहसा, प्रज्वलित हुताशसदृश लपटल॥८१॥

दुहु दलसे चटुल-पदाति-भटक, रण प्रथम परस्पर भेल घोर।
कत शूर कटल, महि मुण्ड पटल[10], झट रुधिरधार नहि बहल थोर॥८२॥

जयकार रटल नहि रोस घटल, उपटल न डेग भेनहु विक्षत।
रज पङ्क सटल नहि पाछु हटल, भट-पटल निबाहल वीरव्रत॥८३॥

पुनि जन्य[11]-धीर राजन्य[12]-वीर-गण वाजि-मतङ्गज-रथारूढ़।
नाना वाहनपर चढ़ल दनुज-सङ्गहिँ सङ्गर कत कएल गूढ़॥८४॥

---

1 महादेव। 2 गणसमूह। 3 शृङ्गवाला। 4 जटाधारी। 5 हाथीकसन दाँतवाला। 6 नाङरि वाला। 7 बाघक चाम पहिरनिहार। 8 चट्टान। 9 भीरुक भयङ्कर। 10 पटिगेल : 11 युद्ध। 12 क्षत्रिय।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अविरल-शरधारा बरसि, दैत्य-मण्डलक हृदयकाँ जयहुताश ।
क्षत कए पुन तनुकाँ विरचि देल, नृप-सैनिकसभ पुष्पित-पलाश ।।८५।।

आश्चर्यित मानवशौर्य देखि, दानवपटली किछु शिथिल भेल ।
सेनाधिपतिक ललकार सूनि, पुनि आगाँ पद साहसें देल ।।८६।।

मारल केओ लए भिन्दिपाल[1], केओ भाला तोमर[2]कृपाण[3] ।
केओ पुनि परशु[4] त्रिशूल पाश, असिधेनु[5]भुशुण्डी[6]परिघ[7]वाण ।।८७।।

अस्त्रप्रहारसँ भए आहत, क्षत्रिय फेँकल रिसिआए साङि ।
वैरीसँ जे बदला लेलक, विजयाशासहित कपाड़ भाङि ।।८८।।

दानवो बहुत विकरालरूप, निज-गगनगामि-गरदीन लिवाए ।
मानव-भटकाँ मुखमध्य राखि, कुसिआर जकाँ लेलक चिवाए ।।८९।।

कालहुसँ निर्भय वीर जाति, नहि दबल ततए क्षत्रिय तथापि ।
शस्त्रास्त्रजाल सत्वर पसारि, देलक सब दानवचमू छापि ।।९०।।

बुझि अपन सैन्यकें विपद्ग्रस्त, आएल आगू असुरेश वीर ।
बाजल दर्पान्ध खरस्वरसँ, अश्वारोही लखि एकवीर ।।९१।।

"रे मूढ़ मनुष्य ! वृथा एतए, अएलाह बनए दानवक भक्ष्य ।
कथमपि न कालकेतुक समक्ष, सुरपतिहुक होइछ सिद्ध लक्ष्य ।।९२।।

की कीटनिकर गजराजसङ्ग, लड़बाक करए साहस कदापि ? ।
आबहुँ पड़ाह, नहि तँ सभकाँ, चरणहिसँ केवल देब चापि ।।९३।।

ई दनुजभुवन[8], नहि मर्त्यलोक, क्षणमे देबहु रणरस चखाए ।
घर जाह घूड़ि, लड़ने कनतहु, विधवा वनिता ओ वृद्ध माए" ।।९४।।

---

1 ढेलमासुसन गुलेलीफेँकवाक अस्त्र । 2 मन्थनदण्डसन अस्त्र । 3 तरुआरि । 4 फरुसा । 5 खाँड़ । छूड़ा । 6 अग्निप्रधान अस्त्र । 7 हथौड़ी । 8 पाताल ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



सुनि असुरवाक्य सामर्ष भेल, देलन्हि उत्तर हैहयनृपाल ।
"रे दनुजाधम! तोहर प्रलाप, ई की न उचित थिक अन्तकाल? ॥९८॥

राजाकेँ अपराधिक निग्रह, आवश्यक कृत्य हृदय धएलहुँ ।
कन्यापहार-पापक तोहर, तेँ दण्ड प्रचण्ड करए अएलहुँ ॥९६॥

अस्त्र-प्रहारसँ वीर समर, कातर पुनि बातहिसँ जीतए ।
यदि छहु किछु पौरुष, तँ सत्वर, देखाबह, वृथा समय बीतए ॥९७॥

नहि तँ, निज-कुत्सित-कर्मक तोँ, परिणाम प्राणविरहे पावह ।
विषलता अमृतफल जनु कदापि, सुख फड़ए क्रिया नहि दोषावह" ॥९८॥

ई कहि श्री-हरि -गुरुकाँ मनाए, देवीक सुमिरि पदपद्म धीर ।
आरम्भ द्वन्द्वयुद्धक कएलन्हि, दनुजेशक सङ्गहिँ एकवीर ॥९९॥

जे किछु रचलक रणमे दानव, नानाप्रकार आसुर-माया ।
नृप धनुर्वेद-कोविद तकरा, झट देल बनाए जलद-छाया[1] ॥१००॥

रिसिआए दनुज जे जे अमोघ-बुझि अस्त्र शस्त्र छोड़इत गेल ।
बाटहिँ तकरासभकेँ नरेन्द्र, तृणकेँ बालक जनु काटि देल ॥१०१॥

निष्फल सभ अपन प्रहार पेखि, असुरेश रोषवेगेँ बौड़ल ।
सम मृत्युशक्ति-उत्क्रान्तिदा[2]क, निज गदा उठाए जखन दौड़ल ॥१०२॥

रणपण्डित धरणीपति तकरा, कौशलेँ बचाए तखन सत्वर ।
लए गदा पदाहत सर्पजकाँ, खिसिआए चलाओल दानवपर ॥१०३॥

गिरिकेँ जनि अशनि, राक्षसक ओ, वक्षस्थलकेँ झट चूड़ि गदा ।
कए देलक वृन्दारक-वृन्दक[3], मन दनुजभीति-निर्मुक्त सदा ॥१०४॥

निजचमू[4]समुत्साहक सङ्गहिँ, दानवक प्राण नभ ऊड़ि गेल ।
झट छिन्न-विकच-किंशुकतरुसम, विक्षत-तनु रणथल पतित भेल ॥१०५॥

---

1 मेघक छाहरि; तत्सदृश अस्थिर । 2 मृत्युकेँ 'उत्क्रान्तिदा' नामक शक्ति छैन्हि जाहिसँ जीवोत्क्रमण करैत छथि । 3 देवसमूहक । 4 सेना । सहोक्ति ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



जयकारक ओ हाहाकारक, ध्वनि नृप-दानव-बलसँ विशाल।
उठि असुरजनक मनकेँ कँपबए, जनु पहुँचि गेल सातो पताल[1] ॥१०६॥

पुनि रैभ्यनरेश्वरकेँ हर्षक, सन्देश[2] दैत दैतक नाशेँ।
सुरवृन्दक आनन्दन कएलक, त्रिदिवहुँ[3] पहुँचल विवराकाशेँ ॥१०७॥

कालक करालमुखसँ रणसे, जे किछु बाँचल दानवसेना—
से कतहु पड़ाए नुकाए गेल, प्रत्यूष[4] उलूकावलि जेना ॥१०८॥

युद्ध-धरातल कानलि दानव-भोगिनी[5],
हर्षित भूतक सङ्गहिँ नाचलि योगिनी।
गिद्ध सकाक, शृगाल शिवा, नृप-ओजसँ,
पीबि अघाएल शोणित-मांसक भोजसँ ॥१०९॥

इति द्वादश सर्ग

1 अतल, वितल, सुतल, तलातल, महातल, रसातल, ओ पाताल।
2 संवाद (समाद)। 3 स्वर्गहुँ। 4 प्रातःकाल। 5 राजाक सामान्य-स्त्री।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# त्रयोदश सर्ग

लखि दनुजान्त यशोमती भेलि मुदित गलिताधि ।
यतिततति जनु अभ्यास[1]कए क्लेश[2]रहित सुसमाधि ॥१॥

स्निग्ध सजल विकसित रुचिर तनिक विलोचन भेल ।
प्राभातिक–अरविन्द–रुचि अनायास हँसि देल ॥२॥

भूपक उपर कृतज्ञता—पूर्ण तनिक पड़ि दृष्टि ।
बिनु शब्दहुँ कएलक बहुत शौर्य–प्रशंसा–सृष्टि ॥३॥

कठिन–प्रतिज्ञा–पूर्त्तिसँ पृथिवीपति सन्तुष्ट ।
सकल सहायकके कएल पारितोषिके पुष्ट ॥४॥

विजिगीषासँ जे स्थगित छल, से भेल विशाल ।
एकावलि–दर्शन–तृषा अवनीशक तत्काल ॥५॥

एको पल युग बुझि पड़ल बिनु दर्शने प्रियाक ।
से लखि चतुर यशोमती अवसर गतिक्रियाक ॥६॥

कहल विनत भए भूपसँ "यदि हो प्रभो! निदेश ।
तँ एकावलिके दनुज–घातक दए सन्देश[3] ॥७॥

त्वरित आनि शिविरहिँ करी तनिक नयनके नाथ! ।
प्रभु–पद–कमलक दर्शनें जनि[4]–साफल्यसनाथ" ॥८॥

शीतातुर जनु अनल लहि, सखीवचन सुनि भूप ।
त्वरित देल अनुमति तनिक अभिलाषक अनुरूप ॥९॥

उत्सुक चित्तक वृत्ति–सम वेगवती ओ भेलि ।
पूर्वहिँ प्रायः स्पृहहुसँ उपवन–मन्दिर गेलि ॥१०॥

---

1 योगाभ्यास । 2 अविद्या-अस्मिता-राग-द्वेष ओ अभिनिवेश ।
3 संवाद । 4 जन्म ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



देखि सखीकेँ स्मितमुखी अवइत राजकुमारि ।
विविध-अशुभ सन्देहकेँ देल हृदयसँ टारि ॥११॥

बिछुड़ि मिलित मणिमालिका-जकाँ सखीकाँ पाबि ।
कण्ठ लगाओल नृपसुता बाहुयुगलसँ दाबि ॥१२॥

आली-वदन-सुधांशु लखि उदित-असम-आमोद ।
भेल उमड़ि वारिधि हृदय लोचन बरिसि पयोद[1] ॥१३॥

उष्ण-अश्रुधारेँ शिशिर सखीहृदय कए देल[2] ।
तदपि अवनिपतिनन्दिनी-रोदन-विरति न भेल ॥१४॥

आँचरसँ झट सहचरी पोँछि नयन-जलविन्दु ।
तनिक बनाओल वदनकेँ हिमविरहित शरदिन्दु ॥१५॥

तखन सखी सस्मितमुखी कालकेतु-मरणान्त ।
कहल उक्तिचतुरा रुचिर-क्रमेँ सकल वृत्तान्त ॥१६॥

नृपक कृपा अनुराग बल विक्रम ओ सौन्दर्य ।
भेलि अनिर्वचनीय सुनि एकावलि साश्चर्य ॥१७॥

मुदित भूप-तनया मलिन-वदन-चन्द्रकेँ भास ।
मुकुलित-नयन-सरोजकेँ देलन्हि प्रचुर विकास ॥१८॥

तकनहु नहि भेटल उचित वस्तु सखीकेँ देय ।
प्रत्युपकृति तेँ नृपसुता वचनहिँ बुझल विधेय ॥१९॥

कहल आलि-पद-पतित भए "सखि! अहाँक ऋणभार ।
ई रहि जएते जनम भरि, नहि सधबाक प्रकार ॥२०॥

सकब न जन्मान्तरहुँ हम दान-प्रतिज्ञा पालि ।
प्राणाधिक-प्रियतम-चरण शरण देल जेँ आलि!" ॥२१॥

---

1 अतिशयोक्ति । 2 विषम ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



भेलि पदग्रह-सङ्कुचित करइत प्रति-प्रणाम ।
वचन उचारल सहचरी रुचिशुचि नर्मललाम ॥२२॥

"सखि ! कृतार्थ ई अनुचरी अनुकम्पहिसँ भेलि ।
प्रत्युपकार-कथा वृथा, लजबिश्र जनु कए खेलि ॥२३॥

स्वामिनीक दुखसूचना दए हम अपने कृत्य ।
कएल, न पुनि किछु अधिक, ई करए न के जग भृत्य[1] ? ॥२४॥

प्रत्युपकारक जँ स्पृहा तदपि अहाकाँ आलि ! ।
तँ करु तनिके, मुक्त जे कएल दनुजकेँ घालि ॥२५॥

दानवकाँ जीतल रणहिँ वीर अहाँक निमित्त ।
किन्तु अतनुसँ हारि छथि वैसल कातरचित्त ॥२६॥

अनुपमेय-वीर्यें जनिक 'एकवीर' थिक नाम ।
प्रणयपाशसँ बान्हि झट तनिकहु जीतल काम ॥२७॥

सम्प्रति सखि ! भए गेल अछि अस्त्रशस्त्र सभ व्यर्थ ।
स्मर-प्रहार-परिहारमे किछु नहि हुनक समर्थ ॥२८॥

स्वयं सदा रहितहुँ सभक शरण वियोग-विपन्न ।
एखन भेल अहींक छथि सखि ! ओ शरणापन्न ॥२९॥

रुचिकर तनिक न भोगभू[2] भुजगभुवन[3] वा नाक[4] ।
केवल ओ सान्निध्य नृप चाहथि सुमुखि ! अहाँक ॥३०॥

तेँ द्रुत बनि अभिसारिका दूती हमरहि जानि ।
चलू कटक सङ्केतथल करु पिश्र-हिश्र-दुखहानि ॥३१॥

दलित दनुज-जलधर-पटल उदित मुदित-नृप-चान ।
सखि ! चकोर ! स्वच्छन्द भए करिश्र अमिश्र-रस-पान[5]" ॥३२॥

---

1 अर्थान्तरन्यास । 2 भोगस्थान वा भूमि । 3 पाताल ।
4 स्वर्ग । 5 साङ्गरूपक ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



सहस्रार[1]-सखिमुख-गलित वाणी-सुधा अमन्द ।
पिबि वियोगिनी-योगिनी पाओल परमानन्द ॥३३॥

विरह-तपेँ तापित तनिक प्रीति-लताक तुरन्त ।
सखि-घनमाला वचन-जल बरिसि कएल दुख-अन्त ॥३४॥

चन्द्रकला एकावलिक पावए उपमा युक्त ।
तत्कालहिँ होइअ जखन राहुदशनसँ मुक्त[2] ॥३५॥

सखीसङ्ग नरयान चढ़ि चललि कटक सुकुमारि ।
भय कुलीन-कन्या-सहज पाओल राजकुमारि ॥३६॥

तनिक पराभव सोचइत काँपल हृदय नितान्त ।
"सम्प्रति छथि उन्मद-मदन युवक मेदिनीकान्त ॥३७॥

धीरहुकाँ जनिकाँ स्मरक लागए सायक एक ।
मयहिजकाँ तनिकाँ त्वरित तेजए लाजविवेक ॥३८॥

यदि कदाच अवलोकि ओ होथि शिथिल-मर्याद ।
तँ बाँचब कोना, हटत तातक वा अवसाद ॥३९॥

क्षत्रिय-कुल-कन्या स्वयं वरकेँ वरथि, परन्तु ।
बन्धुवर्ग-अनुमत शुभद हो विवाह निर्मन्तु[3] ॥४०॥

एक-सन्ततिक जे हमर छथि जननी ओ तात ।
होएत तनिक मनोरथक की न उपेक्षेँ घात ॥४१॥

किन्तु एखनहि जे नृपति दनुज-दुःख-उद्धार ।
कएने छथि, तनिको रुचिक राखब उचित विचार ॥४२॥

सुमति यशोमति अछि सकल-जनइत हमर सहाय ।
अवसर पड़लापर उचित रचति अवश्य उपाय ॥४३॥

---

1 शिरस्थित सहस्रदल-कमलाकार चक्र । 2 अतिशयोक्ति ।
3 निरपराध ( निर्दोष ) ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



करुणाकण कएलक जनिक विपति-जलधिसँ पार ।
ताहि शिवाकेँ छन्हि सभक गौरव-रक्षा-भार ॥४४॥

मलिनवसन भूषणरहित हमरा लखि नरनाह ।
फेरि[1] वदन नहि फेरि[2] ओ अपन योग्य बुझताह ॥४६॥

किन्तु तनिक कोमल हृदय दीनदशामे देखि ।
द्रवत दयासँ ध्रुव, न पुनि हमरा सकत उपेखि ॥४६॥

पङ्कमलिन लखि कुमुदिनी होथि विमुख नहि चान ।
काँट परखि की केतकी त्यागए मधुप सुजान[3] ? ॥३७॥

प्रियक दर्शनेँ किन्तु अछि अन्तराय[4] तत लाज ।
सफलमनोरथ हमर ई होएत लोचन आज" ॥४८॥

नानाविध एकावली याचकपटलीकल्प[5] ।
करइत पथसे गेलि कत मन सङ्कल्प-विकल्प ॥४९॥

मन पहुँचल पहिनहि तनिक पओने वेग महान ।
एकवीर-नरपति-शिविर पाछाँ पुनि नरयान ॥५०॥

नृपतिसुता थिर कए हृदय लज्जित तरल सभीक ।
कथमपि उतरलि यानसँ कर धए यशोमतीक ॥५१॥

उत्कण्ठा प्रियदर्शनक देल अधिक गतिवेग ।
लज्जासँ मिलि भय तनिक पुनि पुनि रोकल डेग ॥५२॥

दैव–मनोज–कृतज्ञता–सहचरीक वश भेलि ।
नृप-पटमण्डप[6]द्वार धरि जावत वाला गेलि ॥५३॥

तावत पथ तकितहिँ नृपति अनुचरसूचित भेल ।
सादर दुहु जनिकेँ गृहक अभ्यन्तर लए गेल ॥५४॥

---

1 घुमाए। 2 पुनि। 3 प्रतिवस्तूपमा। 4 विघ्न।
5 याचकसमूहजकाँ। 6 तम्बू।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



आनन्दित नरपाल भए प्रियतमाक [1]आसन्न ।
सन्निधान सिद्धिक यथा तापस पाबि प्रसन्न ॥५५॥

सुकविवर्णनातीत ओ प्रियातिथिक सत्कार ।
कायिक वाचिक मानसिक कएलन्हि भूप उदार ॥५६॥

घनमलिनाम्बर नृपसुता–चन्द्रकला अवलोकि ।
हैहय-नयन-चकोर नहि सकल अश्रुकेँ रोकि ॥५७॥

अनको दुस्थिति देखि जे हृदय दयापरिपाक ।
पावए, से पुनि दुर्दशा की न विलोकि प्रियाक ?[2] ॥५८॥

तखनहि पुनि मनमे तनिक मन्मथ परखि सुयोग ।
जागि कराओल त्वरिततर अविरल-शर-सम्प्रयोग ॥५६॥

प्रबल-मनोभव-शौर्यवश भेल निरखि भूपाल ।
एकावलिहुक छल[1] दशा अकथनीय तत्काल ॥६०॥

प्रियदर्शन पाओल नयन, हर्ष रोमकेँ भेल[3] ।
सुषमा मूसल नृपक धृति, कम्प कलेवर लेल ॥६१॥

भङ्ग स्वरक, पुनि मलिनता तनिकर वर्णक भेल ।
पीबि अमृत लोचन, तृषा मनक शान्त कए देल ॥६२॥

चलल चित्त वेगेँ मगहिँ थाकि बनल जड़ देह ।
आह्लादेँ उमड़ल हृदय, बरिसल लोचन-मेह ॥६३॥

प्रिया–प्रियतमक सम्मिलन ओ छल पहिले भेल ।
दुहुकेँ लखइत दुहुक दृग निमिषलोप कए देल ॥६४॥

उल्लासक लहरी उछलि प्रथम हृदय भरि देल ।
दुहुक तदुत्तर अश्रुतनु दृक्पथ बाहर भेल[3] ॥६५॥

---

1 एतएसँ सात्त्विकभावोदय-वर्णन । 2 एतएसँ असङ्गति अलङ्कार ।
3 अपह्नुति ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



सभ विषयान्तरबोधकेँ करइत मिथुनक[1] लुप्त।
जागल झट, जे छल मनहि केलिवासना सुप्त ॥६६॥

दुहुक विवशता सखि परखि विस्मित अवसर जानि।
सस्मित वचन उचारि कए-देल समाधिक हानि ॥६७॥

"महाराज! किछु मुखरता कहबए कृपानिधान!।
से कुतुकहुँ सुनि करिअ पुनि उचित विचारि विधान ॥६८॥

अछि सामर्थ्य त्रिलोकमे एहन कोन युवाक।
जे अहाँक अंशक करए सपनहु मन हरबाक? ॥६९॥

कालकेतु दानव बली कए उत्पात कनेक।
जानल जाए कृतान्तघर बाहुवीर्य अपनेक ॥७०॥

कएल जाए तेँ सोचिकेँ पहिनहि काज पुनीत।
चिरकालहुँ नहि हो जकर कथमपि फल विपरीत ॥७१॥

प्रीतिक भूप! विचित्र अछि सहृदय-विदित स्वभाव।
प्रतिबन्धक पड़ने द्विगुण-भेल गाढ़ता पाब ॥७२॥

प्रेमक महिमा विरहमे विज्ञ! रसिकजन जान।
हेमक की नहि वह्निमे होइछ गुणविज्ञान[2]? ॥७३॥

कतए चन्द्र कत कुमुदिनी, होए कदापि न योग।
तदपि दिवस भरि दुहु विकल करए विरहदुख-भोग ॥७४॥

अगणित-तारा-कुमुदिनी-दयितो शशिकेँ जानि।
राका प्रणयक नहि विभो! करए कनेको हानि ॥७५॥

विमलहृदयमे धीर! जँ उपजि जाए अनुराग।
यतनहुसँ मेटए न तँ दिनदिन दोगुन जाग ॥७६॥

---

1 युग्मक। 2 प्रतिवस्तूपमा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



प्रणयजालमें पड़ि सहथि विपति कतेको वीर।
तदपि होथि नहि भूरमण! सत्पथ तेजि अधीर ॥७७॥

उपजए जे बिनु कारणहिँ मनकेँ दुहुक मिलाए।
से प्रशस्त पुनि हो प्रणय जे कालहुँ न विलाए ॥७८॥

त्रण ऋण अयशक लोपहो कालेँ निस्सन्देह।
प्रबले पुनि होइछ अछल अवनीनायक! नेह ॥७९॥

सुनि अहाँक गुण भूप! ई पहिनहि राजकुमारि।
भए विमुग्ध कएलन्हि वरण वर अनुरूप विचारि ॥८०॥

सम्प्रति हति दनुजेशकेँ कएलहुँ जीवनदान।
तेँ हिनकर कर गहि सकत युवा जगत नहि आन ॥८१॥

दासी बनि गेलीह ई गुणविक्रमसँ क्रीत।
नृप! हिनका शुभ समयमे सविधि करिअ परिणीत ॥८२॥

समाचार ई ज्ञात कए प्रमुदित कन्यादान।
अपनहि ध्रुव करताह नृपरैभ्य विभो! सविधान ॥८३॥

नहि तँ वृद्ध अनन्यप्रज नृपतिदम्पतिक देव!।
सकल मनोरथभङ्ग कए की अपने यश लेव? ॥८४॥

गुरुजन–अनुमत परिणयेँ निश्चय हो कल्याण।
दुहु लोकहुँ सुखभोग ओ कुलमर्यादा-त्राण" ॥८५॥

हित हृदयङ्गम मित विशद यशोमतीक सयुक्ति।
एकवीरनृप सुनि सकल सावधान–मन उक्ति ॥८६॥

सकुचि रहस्योद्भेदसँ[1] हृष्ट गुणेँ पुनि भेल।
यशोमतिक मतपालनक भूपति आज्ञा देल ॥८७॥

1 गुरुप्रीतिक प्रकाशसँ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



आदेशाहिक विलम्ब छल, से पबितहिँ नृपसैन्य।
सुमिरल हरखि गणेश गिरि–सुता भरत नल वैन्य ॥८८॥

रैभ्यराजधानी चलल हैहयसैन्य समस्त।
धूलिपटलसँ भानुकेँ पहुँचबइत जनु अस्त ॥८९॥

सखीसहित एकावली पाबि महीपनिदेश
हर्षित पुनि नरयान चढ़ि बिदा भेलि निज देश ॥९०॥

सूचनार्थ नृपरैभ्यकाँ पहिनहि सभ वृत्तान्त।
दूत पठाओल ततहिसँ त्वरित मेदिनीकान्त ॥९१॥

सूत वन्दि चारणगणक सुनइत मङ्गल–गान।
नागलोकसँ लोकपति[1] कएल महीप्रस्थान ॥९२॥

आनल मध्यमलोकमे[2] एकावलि नरनाह।
दानव हनि पातालसँ जेना धरा वराह ॥९३॥

रमणीमणिकेँ पाबि पुनि वसुधा वसुधा भेल।
अधोभुवन[3] पुनि विमद भए अधोभुवन बनि गेल ॥९४॥

समाचार विस्तारसँ जनु वैतालिक सूत।
रैभ्य-रुक्मरेखा-निकट जाए सुनाओल दूत ॥९५॥

वृद्ध नृपतिदम्पतिक मुद तखनुक सकथि बखानि।
जँ विधि कविकेँ जीह सभ देथि शेषसँ आनि[4] ॥९६॥

हर्ष–शिथिल तनु तरल मन बिदा भेल महिपाल।
तुर्वसुनन्दनकेँ सबल अरिआतए तत्काल ॥९७॥

सबहुँ नागरिक नगरकाँ सुनितहिँ कए नररिक्त[5]।
चलल प्रमोदक नोरसँ पथकेँ करइत सिक्त ॥९८॥

---

1 नरेश। 2 मर्त्यभुवनमे। 3 पाताल। 4 आक्षेप।
5 मनुष्यसँ रहित।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



नगरोपान्त-प्रयागमे चञ्चलमोद-तरङ्ग ।
मिलल रैभ्य-हैहय-चमू गङ्गा-यमुना सङ्ग[1] ॥९९॥

उतरि यानसँ दुहु नृपति मिलल परस्पर तूर्ण[2] ।
एक भरल वात्सल्यसँ अपर भक्तिसँ पूर्ण ॥१००॥

करइत निज गोत्र प्रवर ओ नामक उद्देश[3] ।
वृद्ध महीपक चरण शिर राखल युवा नरेश ॥१०१॥

तनिकाँ दए आशिष मुदित व्यवहारक अनुरूप ।
त्वरित लगाओल हृदयमे विनयचकित भए भूप ॥१०२॥

तदनन्तर पदयुगलमे पड़ल रुक्मरेखाक ।
प्रभा पसारल युवकनृप-मुकुट रुक्मरेखाक ॥१०३॥

रैभ्यमहीपतिकेँ सुता सोपल पुनि मनुजेन्द्र ।
सहस्राक्षकेँ त्रिभुवनक लक्ष्मी यथा उपेन्द्र[4] ॥१०४॥

पाबि सुता नृपरैभ्य मुदाकुल,
कुमुद-वृन्द जनु चन्द्रकला ।
हैहयकेँ गृहमे लए आएल,
कए सत्कृति शुचिसूक्तिकला ॥१०५॥

इति त्रयोदश सर्ग ।

1 रूपक । 2 शीघ्र । 3 उच्चारण । 4 वामन भगवान् ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# चतुर्दश सर्ग

छल रैभ्यक छलरहित कुशल सब, सेवक अचल रमा पुन ।
बृहत-वाहिनीसहित महीपति, महित भेल रहि पाहुन[1] ॥१॥

अपनहु घरसँ पावि अधिक सुख, अशन-वसन-आवासक ।
हैहयदलमे भेल न ककरहु, अनुभव ततए प्रवासक ॥२॥

वृद्धो नृपति तरुणसम अनुखन, जे ँ अपनहि छल तत्पर ।
तेँ सत्कार भेल सभलोकक, अतुल, होअए नहि यत्पर ॥३॥

वचनशक्ति यदि देने रहितथि, पशुहुक मुखमे धाता ।
तँ अवश्य होइत गजतुरगो, तत आदर-व्याख्याता[2] ॥४॥

एकवीर अपनहु महिमा लखि, चकित जतए सम्मानक ।
रैभ्यराजधानीमे छल पुनि, कथा कोन तत आनक ॥५॥

देखि विभव आचारविचारक, ओ सत्कारप्रबन्धक ।
स्पृहा न ककरा होइत छल तत, नृपविवाह-सम्बन्धक ॥६॥

कुल-कलङ्क ओ तनया-प्राणक, रक्षा, घाते ँ दैतक ।
कएनिहार-पाहुनमे आदर, निरवधि छल अङ्नैतक ॥७॥

यशोमतीसँ विषय बूझि सब, कएलन्हि निश्चय स्थिरमति ।
हैहयकेँ कन्यादानक ओ, मुदित रूक्मरेखा-पति ॥८॥

रानी-बन्धुवर्ग- अनुचरहुक, भूपति लखि अनुमोदन ।
अपनहि एकवीरसँ कएलन्हि, नव प्रस्तावनिवेदन ॥९॥

"कुमुदबन्धुकुलकमलदिवाकर ! त्रुटि सब छमब बूढ़-बधि ।
गुरु उपकार अहाँक सकत नहि, कथमपि हमरासँ सधि ॥१०॥

---

1 काव्यलिङ्ग । 2 अर्थापत्ति । वस्तुध्वनि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तेँ धनजीवन-सारसुताकेँ, शरणमध्य हम सोपिअ।
अङ्गीकार तनिक कए हमरा, सुकृतपथहिँ आरोपिअ ॥११॥

जँ ययाति कूपहुसँ ऊपर, कए कन्याक[1] भेल पति।
तँ उबारि अपने पतालसँ, होइ, सएह लह सङ्गति ॥१२॥

याचककल्पद्रुम अपने छी, विदित विश्वमे सबथल।
तेँ निश्चय अछि हमर याचना, ई नहि होएत निष्फल" ॥१३॥

हृदयङ्गमतम नृपक अर्थना[2], शील-विनिन्दित-चन्दन।
सुनि आनन्दित विनय-विनत भए, कहलन्हि तुर्वसुनन्दन ॥१४॥

"देव! तनय अपनेक थिकहुँ हम, अनुखन आज्ञाकारक।
एहि विषयमे किछु न प्रयोजन, अछि तेँ हमर विचारक ॥१५॥

यदि जीवनहुक परित्यागसँ, हो अपनेक प्रभो! हित।
क्षत्रिय भए नहि सकब तदपि कए, अस्वीकार कदाचित ॥१६॥

नहि पुनि एहन रुचिर विषयमे, आदेशहुक प्रयोजन।
की चिन्तामणि याचकजनमे, करथि निदेश-नियोजन[3]?" ॥१७॥

सुनि अनुकूल वचन अवनीपति, पुलकित जाए निजालय।
द्रुत बजाए गुरु गणक पुरोहित, दिनक कराओल निर्णय ॥१८॥

एकवीर-आवास सुदिनमे, पहुँचि नरेश सपरिकर[4]।
वस्तु विविध पूजा कए देलन्हि, वरकेँ तिलक समयपर ॥१९॥

सपरिवार-बान्धव-सम्बन्धिक, लेआओन भूपतिघर।
भेल गीतनृत्यादि कुतूहल, अनुपल रसिक-मनोहर ॥२०॥

परिणयसँ पूर्वहि दिन रानी, आनन्देँ लहि सम्भ्रम।
जाए तड़ाग सुताक कराओल, नारि-निकरसँ कुमरम ॥२१॥

---

1 शुक्रक पुत्री देवयानीक। 2 याचना। 3 प्रतिवस्तूपमा।
4 परिवार परिजन सहित।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



अनुगत-पति भए कुलक सुवासिनि, साँझहिँ लाबा भूजल।
सीउँथि न्योति भूप गिरिजापद, सङ्कल्पहिँ पुनि पूजल ॥२२॥

प्रातहिँ नृपति मातृकापूजा–प्रभृतिक अङ्ग विवाहक।
स्वयं कएल सम्पन्न सविधि, निधि-बनल प्रमोद-उछाहक ॥२३॥

शिल्पनिपुण तरुणीगणमे, केओ कन्याक पसाहनि।
कएलन्हि, माड़व वेदीपर, अरि-पन देलन्हि केओ जनि ॥२४॥

लए उपकरण अनेक प्रकारक, केओ पान लगाओल।
केओ पुनि भोजनसामग्री, अमृतकल्प निरमाओल ॥२५॥

कोबरघर केओ साजल, केओ गाँथल मणिमाला।
केओ सङ्गहिँ विधिकरीक पुनि, साँठल परिछनिडाला ॥२६॥

एको करइत गान सकलि भए, सहृदय हृदयक ग्राहक।
की पुनि सभ जनि मिलि कए गबइत, मङ्गलगीत विवाहक[2] ॥२७॥

सारक लेआबए गेलापर, आएल वर-बरिआती।
कएल सभक सत्कार विविधविधि, तत्पर रहि सरिआती ॥२८॥

वरकेँ परिछि गेलि लए अन्तः-पुर सादर रमणीगण।
भेल कनकमुद्राक सङ्ग तत, गूआ-जनउ-समर्पण ॥२९॥

ठक-बकप्रभृति-प्रदर्शन नाना–वशीकरण निरमओलन्हि।
नाक पकड़ि मण्डपक प्रदक्षिण, वरकेँ सासु घुमओलन्हि ॥३०॥

पुरुषसूक्त[3] द्विजगणक सङ्ग पढ़ि, वर पुनि कूटि अठोङर।
श्वशुरनिकट सङ्कुचित भेल किछु, गेल तखन माड़बपर ॥३१॥

पाबि अर्हणा अनलस्थापन, जाए कएल वेदीतर।
कन्या धरए गेल तुर्वसुसुत, कौतुकमय कोबरघर ॥३२॥

---

1 मानसिक-व्यापारहिमे। 2 अर्थापत्ति। 3 'ओँसहस्रशीर्षा' इत्यादि सोड़ह ऋचा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कन्यासँ छीटल दल पानक, बीछि गेल पुनि भीतर।
नयनायोगिनि बनलि सुनयना–सङ्ग कोन घूमल वर ॥३३॥

पहिल बेरि जे कन्याकेँ नहि, चीन्हि सकल हैहय तत।
से लखि करताली दए सभ जनि, हँसिकए गाड़ि पढ़ल कत ॥३४॥

"उचिते देलन्हि अछि 'ई' सम्प्रति, निज दुहू[1] बापक परिचय।"
सुनि से स्मित लज्जित अवहित भए, कन्या धएलन्हि हैहय ॥३५॥

कोबरमे कन्याक प्राप्तिसँ, पाओल ओ मुद जेहन।
रणहिँ विजयलक्ष्मीक लाभसँ, भेल कदापि न तेहन ॥३६॥

कन्यासहित फेरि वर माड़व-ऊपर तखनहि पहुँचल।
विशद-कौमुदीयुत हिमदीधिति, साँझहिँ जनु उदयाचल ॥३७॥

जनिक सतत दानक व्यासङ्गेँ, अपने कर भीजल रह।
से कन्यादातासँ लेलन्हि, प्रथमहिँ सँकुचि प्रतिग्रह[2] ॥३८॥

वधूवरक सौन्दर्य अलौकिक, निरखि निखिल जन जानल।
भए प्रसन्न विधि रति-कन्दर्पक, प्रतिमा भूतल आनल ॥३९॥

स्पर्श परस्पर पावि दुहुक कर, जे आमोदेँ जड़ छल।
जन-समाजलाजक साम्राज्येँ, से चतुरो नहि बूझल[3] ॥४०॥

एकावलिसँ एकवीरकेँ, कएलन्हि रैभ्य विनोदित।
क्षीरोदधि पुण्डरीकाक्षकेँ, जनु लक्ष्मीसँ मोदित ॥४१॥

ककर नयन नहि निरखि जुड़ाएल, विधिकेँ के न सराहल।
समसौन्दर्य दम्पतिक दर्शन, प्रतिपल के नहि चाहल ? ॥४२॥

कन्यादानक भूमिदक्षिणा, पबइत नृपति विचारल।
की प्रियाक सोड़हमा अंशक, तुलना लहए धरातल ? ॥४३॥

---

1 नारायण ओ तुर्वसु। 2 दान लेब। 3 मीलितालङ्कार।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



असन्तोष ब्राह्मणक दोष हो, भूपालक पुनि भूषण।
ई विचारि दनुजारिक तकरा, बुध जनु बूझथु दूषण ॥४४॥

पत्नी पाबि भूप मण्डपसँ, मुदित गेल वेदीपर।
विद्या लहि गुरुकुलसँ जेना, आएल छल अपना घर ॥४५॥

कालकेतु-वध-हर्षित हुतवह, पहिनहिसँ छल पजरल।
तेँ फुकबाक परिश्रम नहि किछु, पुरोहितक शिर बजरल ॥४६॥

होमधूम लगनहि एकावलि-नयन नोर भरि आएल।
जनु लावण्य अङ्गमे नहि अँटि, डगमग दए बहराएल ॥४७॥

बाला विरहानलमे पहिनहि, लाजहोम[1] छलि सिखनहि।
तेँ वेदीतर लाजहोममे[2], भेल विलम्ब-लवो नहि ॥४८॥

पाथर उपर चढ़ाए वधूपद-पङ्कज पकड़ि महीपति।
राखल सीखि प्रणयकोपक[3] जनु, पहिनहि अपसारण-गति[4] ॥४९॥

मन परमाणु[5] दुहुक मिलि मन्त्रेँ, द्व्यणुक[6] गेल बनि जखनहि।
अतनुतनुक रचनाक उपक्रम, जनु कएलन्हि विधि तखनहि ॥५०॥

वधू-ललित-सीमन्त-रजनि-नभ-सरणि नृपाल-अरुण-कर।
दए सिन्दूर-प्रभा निरमाओल, शुकचञ्चुक रुचि सुन्दर[7] ॥५१॥

सोहागी दुहुपक्षक सभ जन, विविध वधूकाँ देलन्हि।
पनबट्टा भरि भरि पूगीफल[8], दलयुगलहुसँ लेलन्हि ॥५२॥

तीनि बेरि डाला शिर-ऊपर, गबइत गीत घुमाओल।
वनिताजन बेटीजमाएकेँ, आशिष दैत चुमाओल ॥५३॥

---

1 लज्जाक हवन। 2 लाबासँ हवनमे। 3 मानक। 4 हटएबाक उपाय। 5 सूर्यक प्रभामे दृश्य रेणुक छठमभाग। 6 दू परमाणु। 7 साङ्गरूपक उपमा। 8 सुपारी।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कुलदेवीक प्रणामी सादर, दए, मुद्रेँ भरि शिरहर।
मौहग करए चलल कोबरघर, सखिजनसङ्ग वधूवर ॥५४॥

मधुर गाड़ि सरहोजि सारि दए, आगाँ देहड़ि छेँकल।
छाड़ल बाट पाबि पाटक पट, झट हाटक-मणि-हेँकल ॥५४॥

रैभ्यनृपति बरिआतीसभकेँ, करबए लागल भोजन।
स्वजन जानि ताहूमे आदर, कए विशेष पुनि सोजन ॥५६॥

बरिआतीकेँ व्यङ्ग्यवचन[1]मय, गाओल जे युवतीजन।
भोजनसामग्रिहुसँ रुचिकर, भेल अधिक से डहकन ॥५७॥

भोज्यक छल सर्वांशपूर्णता, रैभ्य तथापि विनयनिधि।
आगाँ ठाढ़ जोड़ि कर कहलन्हि, उचिती ततए विविधविधि ॥५८॥

सभ बरिआती परम तुष्ट भए, गेल अपन आवासहिँ।
अन्तःपुरसँ हैहय आएल, निज-विश्राम-निवासहिँ ॥५९॥

गौरीपूजा प्रतिदिन कएलन्हि, एकावलि पतिसङ्गेँ।
कोबर भेल तरङ्गित रमणी–निकरक कौतुकरङ्गेँ ॥६०॥

तुर्वसुनृपसुत प्रातहिँ प्रतिदिन, सङ्गहिँ साड़समाजक।
कएल चोरपनिआँ उपवनमे, जाए रैभ्यवरराजक ॥६१॥

ब्रह्मचर्यपालनहिँ दम्पतिक, बीतल दिवसचतुष्टय[2]।
कएल चतुर्थीकर्म यथाविधि, जावत हो अरुणोदय ॥६२॥

जाए बेरखन मणिद्वीपसन, रमणीमय कौतुकघर।
पीकपिसाओन प्रभृति[3] सकल विधि, दिन दिन कएल क्रमहिँ वर॥६३॥

दुल्लह निपुण जानि ललनाजन, गानचातुरी–विवरण[4]।
कएलन्हि गाबि, पाबि यश, आनक, कान-सुधारस–वितरण[5] ॥६४॥

---

1 व्यङ्ग्यार्थ-बोधक वचन। 2 चारि। 3 लड़ुबेची-दसौत-आदि विवाहक विधि। 4 प्रकाशन। 5 दान।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



सार सारि सरहोजि सबहुँ मिलि, तनिकाँ ठक'क अहर्निश।
कत परिहासचतुर चारिमशुचि[1], रचल प्रपञ्च चतुर्दिश ॥६४॥

स्वरसय्येँग पिकक दए गबइत, योग भोजनक कालहिँ।
युवतीजन नृपमन विहङ्गसन, बान्हल प्रणयक जालहिँ ॥६६॥

पचमा राति कुसुमदल-कोमल, शय्या रचि पलङ्गपर।
एकावलिकेँ कत कौशलसँ, आनल आलि केलिघर ॥६७॥

क्रीड़ागृह-देहड़िधरि पहुँचलि, सखि-समुदाय-प्रयासेँ।
बूझल ततए रहस्य, परस्पर—लोचन—भ्रुकुटि—विलासेँ ॥६८॥

जनिक हृदय घर, सएह यदपि वर, छल, तथापि बड़ अविचल।
भीति, प्रीति-रत-रीति-अपरिचित-नृपतिसुताकेँ उपजल ॥६९॥

आलिङ्गनक तरासेँ जनु तनि—कर कोमल तनु काँपल[2]।
चुम्बन अविलम्बित विचारि, रोमाञ्च गण्डयुग झाँपल ॥७०॥

मर्दन शोचि उरोज—सरोजक, सदय हृदय जनु धड़कल।
निष्पीड़न अधरक परेखि, मृदु—पद—पल्लव मग अड़कल ॥७१॥

कातरता छल तनिक चित्तथल, धैर्यसमरमे सज्जा।
कामसङ्ग सङ्गर ठानल पुनि, बलवत्तर भए लज्जा ॥७२॥

अनुभव कएल दशाक नवोढ़ा, तखन भीतिवश, जेना।
प्रबल-विपक्ष-समक्ष समर-थल, करए भीरु-भट-सेना ॥७३॥

तखनुक विषय बखानि सकथि भल, सहृदय-तरुण-विलासी।
बुद्धिगोचरो करथि न पुनि, नीरस तापस सन्न्यासी ॥७४॥

सखि-निकरक आश्वासन ओ, उत्तेजनाक आश्रय बनि।
लाँघल ओ कोनहुना देहड़ि, सज्जन धर्मसरणि जनि ॥७५॥

---

1 चारुतासँ भूषित। 2 एतएसँ उत्प्रेक्षा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



हुटलि कबाड़ लगाए सहचरी, सबहुँ द्वारसँ सत्वर ।
सटलि कुतूहलवश पुनि साहस-कए गवाक्षराजीपर ॥७६॥

मन-सारथि, लालसा-कशासँ, यदपि करण-हय हाँकल ।
तदपि शिथिल-सकलाङ्ग-देहरथ, तनिक ततहि छल पाँकल[1] ॥७७॥

भीतिक भार लाजपाँकहिमे, चरणचक्रकेँ चाँपल ।
वृथा परिश्रम भेल मनक सभ, मनसिजहुक उर काँपल ॥७८॥

हारि मनोभवसहित तनिक मन,वारि दर्प उच्छृङ्खल ।
साहाय्यक आशासँ केवल, एकवीरलग पहुँचल ॥७९॥

लज्जासँ हारनहु नपुंसक, मन नहि भेल निमीलित[2] ।
वीर मनोज परन्तु कतेको-छन छल शोचेँ कीलित[3] ॥८०॥

ताबत उपगत निरखि महीपति[4], मदन-रुजा[5]ऽमृतवल्ली ।
विरह-ताप-निर्वाप[6]-कुशल तनु-कुसुमित-कोमल-मल्ली ॥८१॥

शरद-सुधाकर-पूर्णकला, तृष्णाकुल-नयनचकोरक ।
अतुल अमूल्य विवर्जित-दूषण, नवभूषा निजकोरक ॥८२॥

प्रेमक मूर्त्ति विभूति विभ्रमक, घनसुषमा शृङ्गारक ।
रैभ्यभूमिपतिसुता प्रेयसी, बिसरल सुधि संसारक ॥८३॥

बीतल छन कतोक सम्मोहेँ, फेरि चेतना जागल ।
सङ्गहिँ उठि उत्कण्ठा कुण्ठित, करए धैर्यकाँ लागल ॥८४॥

अचल पुतड़ि सनि ठाढ़ि परखि धनि, पुरुष-परसमनि अपनहि ।
आनल तलपहिँ भुज-पञ्जर गहि, विरहि-हृदय-महि थपनहि ॥८५॥

मदनकदन सहि कृशतनु, उदरहिँ, पुनि मुष्टिहुसँ नापलि ।
वल्लभबाहुवलयसँ बान्हलि, विवश नवोढ़ा काँपलि ॥८६॥

---

1 पाँकमे लागल । 2 सङ्कुचित । काव्यलिङ्ग । 3 बद्ध, (पीड़ित) ।
4 विशेषक । 5 रोग । 6 शान्ति करब ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



एकावलिसम एकावलिकेँ, एकवीर–उर-राजित ।
जालेँ निरखि सखी-कदम्ब-दृग, भेल मुदम्बु-सभाजित[1] ॥८७॥

स्वागत-सत्कारहिक प्रसङ्गेँ, शुभ-अवसर पिअ पाओल ।
अनायास आश्लेष-मनोरथ, अपन अशङ्क पुराओल ॥८८॥

स्वेद लेल उद्भेद[2] हृदय चलदल[3]–पल्लवसम काँपल ।
नववधूक प्रिय-प्रथम-समागम-भीति प्रीतिकेँ झाँपल ॥८९॥

सेजहिँ पड़लि विमुखि धनि निस्सह, मूनि नयन-युग लाजेँ ।
निरखि कृतार्थ भेल भूपति पुनि, परसि कतेको व्याजेँ ॥९०॥

कए विदग्धभावक अवलम्बन, उत्सुक मनकाँ रोकल ।
कर-किसलय-परसहुँ सँकुचलि लखि, शङ्कित होइत टोकल ॥९१॥

"प्राणेश्वरि ! करु दया दासपर, परिहरि भीति अकारण ।
दारुण मदन करए विरही बुझि, शर लए हृदयविदारण ॥९२॥

लोचन-कोनहुसँ हेरिअ धनि ! फेरिअ सम्मुख आनन ।
हास-विकास छनहु कए सुन्दरि ! दिङ्मुख लेपिअ चानन ॥९३॥

तृषित कानमे मधुरवाणि ! कए, वचन-सुधारस-वर्षण ।
शुष्क अङ्गकेँ परसि सरस करु, परिहरि मन्मथ-धर्षण[4] ॥९४॥

विरहानल-सन्तप्त हृदयकाँ, करिअ कलावति ! शीतल ।
प्रत्याशहिँ कत कल्पकल्प[5] दिन–रजनी प्रेयसि ! बीतल ॥९५॥

उचित न आब विलम्ब नितम्बिनि ! पूरिअ दीनक आशा ।
प्राणत्राण कए यशोराशिसँ, सुमुखि ! प्रकाशिअ आशा[6]" ॥९६॥

ई प्रियतम वाणी–रसधारा, प्रियाहृदय-रय जोड़ल ।
भयसङ्कोच-विशाल-बालुका-सेतु छनहिमे तोड़ल ॥९७॥

---

1 पूजित । 2 विकास । 3 पीपड़ । 4 प्रगल्भता वा कदर्थन ।
5 कल्प-सदृश । 6 दिशा ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



विरह-विदग्ध[1]-विदग्ध[2]हृदय युव-युगल मीलि तदनन्तर ।
प्रथमहिँ सुरतवितान[3] वितानल[4], रति-मदनहुसँ दुष्कर ॥९८॥

केलि-कलाप सकथि कवि कहि नहि, तरुण-मिथुनसँ निर्मित ।
सम्भोग[5]क महिमाकाँ बढ़बए, विप्रलम्भ[6] जेँ निश्चित ॥९९॥

ताबत चरमाचल-चूड़ापर, चन्द्र चकित जनु पहुँचल ।
अवसित[7] रजनी भेल, किन्तु नहि, मिथुनक केलिकुतूहल ॥१००॥

कुक्कुट-कलापधुनि पथिक-विलाप सुनि प्रिय-विरह-ताप गुनि
मूक भृङ्गमालाकेँ,
कैरव-तति दीन ग्रह-पटली विलीन लखि छीन-रुचि तिमिरसङ्ग
मालतीमालाकेँ ।
लाली प्राचीक रति-शाली चक्रवाक-युग दीपक-विधु-विधुर[8]
विलोकि नभशालाकेँ,
आली-कदम्ब अविलम्ब द्वारदेश आवि गेलि लए,
भेलि नत लाजेँ नृपबालाकेँ ॥१०१॥

इति चतुर्दश सर्ग

1 विशेष दग्ध (विकल) । 2 रसिक । 3 क्रीड़ा—कलाप । 4 विस्तीर्ण कएल । 5 शृङ्गारक पूर्वाङ्ग, वा केलि । 6 शृङ्गारक उत्तराङ्ग, वा विरह । 7 समाप्त । 8 विरहित ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

# पञ्चदश सर्ग

अनवम[1] नवम दिवस गुनि हैहय, कहल श्वसुरसँ सादर ।
"यदि आदेश तात ! हो, तँ हम, जाइ आइ अपना घर ।।१।।

छथि प्रधान-मन्त्री उत्कण्ठित, राजकाज-सञ्चालक ।
तथा समस्त प्रजा बान्धवजन, पावि विरह चिरकालक" ।।२।।

वचन जमाइक ई सुनि अवनीपाल ।
कातर सुता-विरह गुनि छल किछु काल ।।३।।

पाओल आनन्दक पुनि मन उद्गार ।
अहाक करइत जनि मुनि तत्त्व-विचार ।।४।।

प्रस्थान-सूचना त्वरितहिँ, अन्तःपुरमे नृप देलन्हि ।
रानीक हृदयमे सुनितहिँ, करुणा-प्रवाह बहि गेलन्हि ।।५।।

बुझि जननी-जनक-सखीजन-नैहरक वियोग विकल-मन ।
एकावलीक दुहु लोचन, साओन-भादवक बनल घन ।।६।।

सहचरी-निकुरम्ब यशोमती-प्रभृति रैभ्यसुताक वियोगसँ ।
प्रथम सोचल पावि हताशता, विरस[2] दैव सदैव सुयोगसँ ।।७।।

बन्धुवर्ग परिजन पुरजन खग-मृग–गण कानल,
एकावलिक वियोग अचिरभावी जे जानल ।
पहिल वेरिसँ भेद एहिमे किन्तु एक छल,
सन्तापक नहि भेल दुःख आनन्दे भीजल ।।८।।

आनन्दलहरी गङ्गा, यमुना पुनि वेदना ।
सभको चित्तमे कैल, तीर्थराजक योजना ।।९।।

---

1 निर्दोष । 2 निःस्पृह (विमुख) ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



कनइत समदाउनि तत गबइत नारि ।
पूरुषहुक धैरजकें देलन्हि टारि ॥१०॥

एकवीर आह्वान पावि सादर अन्तःपुर,
जाए, वधू लए विदा भेल सानन्द अपन पुर ।
वनिताजनक निदेश मानि शुभ जानि अचञ्चल,
कएल यथाविधि कृत्य सकल, जे ततए उचित छल ॥११॥

स्वामिसहित एकावली कएल पिताक प्रणाम ।
दम्पतिकें देलन्हि नृपति आशिष मङ्गलकाम ॥१२॥

कानलि तनया बापक पद लपटाए ।
महिमा धैर्यप्रतापक देल घटाए ॥१३॥

भेल अश्रुएँ भूपक तनु-अभिषेक ।
दृढ़ता राखल हृदयक किन्तु विवेक ॥१४॥

देल नृपति उपदेश चरणपर-पड़लि सुताकाँ,
"पुत्रि ! अपन गृह जाए सम्हारब पति-प्रभुताकाँ ।
करब सदा अनुसरण हुनक सुखदुख सहि तत्पर,
धर्म कुलीनवधूक शास्त्रमे अछि नहि यत्पर ॥१५॥

अछि गृहस्थकें जाहिसँ अधिक न किछु कर्तव्य ।
पञ्चयज्ञ[1] से पतिक नित पुत्रि ! बनाएब भव्य ॥१६॥

सेवा गुरुवर्गक करब सविधि निबाहब पर्व[2] ।
प्रभुता गृहमे पावि नहि कखनहु राखब गर्व" ॥१७॥

---

1 १ ब्रह्मयज्ञ (वेदक अध्यापन वा अध्ययन) २ पितृयज्ञ (पितरक तर्पण ओ नित्यश्राद्ध) ३ देवयज्ञ (हवन) ४ भूतयज्ञ (वैश्वदेवबलि) ५ नृयज्ञ (अतिथिसत्कार)। 2 पार्बनि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



रुद्धकण्ठ भए गेल, रोदन-धुनि तनुजाक सुनि ।
तेँ किछु नहि कहि भेल, नरपतिकेँ उपदेश पुनि ॥१८॥

रानी छलि कनइत तत आगहिँ ठाढ़ि ।
पाबि हृदयमे अविरत करुणा-बाढ़ि ॥१९॥

पदयुगल धिअ माइक अनन्तर गहल अति-उद्वेगसँ,
बहि गेल जनु धैरज कतहु करुणा-प्रवाहक वेगसँ ।
ककरा हृदयमे रहल साहस, करओ के परिबोधकेँ
अतिपात कालक लखि सुलझक वा बुझओ अनुरोधकेँ ॥२०॥

धैरज बान्हि जगाए, किछु विवेककेँ सुमतिबल ।
तनयहिँ हृदय लगाए, माए प्रीतिपूर्वक कहल ॥२१॥

"मर्यादा दुहु कुलक जाहिसँ वत्से ! निरबह,
दोषान्वेषी जनक जतए पुनि मुख मुद्रित रह ।
धरब सएह पद्धति सौजन्यक धैरज राखब,
प्रभुता पओनहु मदेँ कदाचित कटु नहि भाखब ॥२२॥

सुप्रबन्ध कए घरक, रचि, मतिबल रुचिर उपाय ।
कठिन परिस्थितिमे सदा, स्वामिक रहब सहाय ॥२३॥

आन्तरिक[1] रिपु अवधारि धिअ ! मारब असूया रोषकाँ,
त्यागब हलाहल लोभ बुझि, सेवब सुधा सन्तोषकाँ ।
आनक छमब अपराध, अपने करब नहि ककरो अहाँ,
मानब परम आराध्य पतिकेँ, रहब ओ चाहथि जहाँ" ॥२४॥

रानी कहल जमाइकेँ कनइत तनया सोपि ।
"तात ! देल अछि किङ्करी चरण-कमल आरोपि ॥२५॥

1 अन्तःकरणक ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



हिनकासँ जे किछु पड़ए, वत्स ! अहाँकाँ दोष ।
अपन अनुचरी जानि सब, छमब करिअ जनु रोष ॥२६॥

करथि सहस अपराध नारि सहज अज्ञान रहि ।
सुपुरुष हृदय-अगाध क्षमासिन्धु सभ लेथि सहि" ॥२७॥

तनया-वत्सल देल भूप भरि भरि मञ्जूषा[1],
अगणित-मणिगण-जटित रजत-हाटकमय भूषा ।
नानारङ्गक वसन विविध सम्भृति शृङ्गारक,
नव उपकरण समस्त गृहस्थाश्रम परिवारक ॥२८॥

गाए-बड़द-हय-गज-रथ-दासी-प्रभृति अमित दए यौतुक ।
सोपल राज्य समेत वदान्य–शिरोमणि रैभ्य सकौतुक ॥२९॥

दर्शक जनक दहेज देखितहिँ, वीझ लोचनक छूटल ।
कामधेनु-सुरतरु-चिन्तामणिहुक मदनिद्रा टूटल ॥३०॥

श्वसुरभवनसँ करइत शुभ प्रस्थान ।
चढ़ल वधू लए सत्वर वर नरयान ॥३१॥

शिविका त्वरित उठओलक हुलसि कहार ।
चलल टाङि सभ सङ्गहिँ भरिआ भार ॥३२॥

गृह-प्रस्थान-सूचना करइत, अरि-उर धरइत शङ्का ।
एकवीर नरपतिक शिविरमे, तखनहि बाजल डङ्का ॥३३॥

चलल उछाहेँ उछलल सैन्य अशेष ।
किछु नहि पथकेँ बूझल दूर विशेष ॥३४॥

पहुँचल नहि बरिआती जावत दूरि ।
आएल नहि सरिआती तावत घूरि ॥३५॥

---

1 पेटी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



नृपति-नन्दिनिक गेनहु दूरि। दृश्य रहल जाबत धरि धूरि ॥
ताबत सभ सीमहि पर ठाढ़। छल उत्कण्ठित भए अतिगाढ़ ॥३६॥

प्रभा–शून्या शाला स्वजन–पटली मोद–विकला,
सखी–श्रेणी चिन्ता–नमित-मुख निष्कौतुक कला।
पिता माता शोचें हतहृदय खिन्ना सहचरी;
हतश्री ओ एकावलिक विरहें भेल नगरी ॥३७॥

कएल तदुत्तर रैभ्यनरेश। परिजन सङ्गहिँ नगर प्रवेश ॥
तनया बिनु लखि भवन उदास। गेल सदार करए वनवास ॥३८॥

०००○◯○०००

रैभ्यक आदरवर्णनहिँ लीन, मन भेल न ककरो[1] श्रमें दीन।
किछु बुझल न पथ चललो अपार, निमिषहिमे पहुँचल नगरद्वार ॥३६

नववधू-विजयलक्ष्मीसमेत, अबइत छथि नरपति निजनिकेत।
ई सुनि पुरवासी सबहुँ हृष्ट, मगलग आएल; कौतुकाकृष्ट ॥४०॥

प्रबल दनुज मारि बाहुवीर्यें, सुयश पतालहुमे प्रकाशि जेता।
गृह अबइत दर्शनें प्रजाकाँ, कएल कृतार्थ यथार्थ भूमिनेता[2] ॥४१॥

कोठाक शृङ्ग चढ़ि कौतुकसँ कतोक,
वृक्षाधिरूढ़ भए वा पुरवासिलोक।
ज्योत्स्नासमेत शशिवत् वनितासनाथ,
सानन्द देखल नवागत भूमिनाथ ॥४२॥

दैवज्ञ निपुण शुभ-लग्न देखि, रहि सावधान लहि नृप-निदेश।
मङ्गल-विधिपूर्वक नववधूक, करबाओल राजगृह-प्रवेश ॥४३॥

प्रमदें करइत डगमग प्रमदा-राजि।
ठाढ़ि भेलि जे मगलग नगहर साजि ॥४४॥

---

1 ककरोक। 2 पृथ्वीपति।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



तनिक गीत सुनि नृपभट हर्षित भेल ।
कनक-रजत-मुद्रें घट भट भरि देल ॥४५॥

छापि मलाह जालसँ शिविका, मनवाञ्छित धन पाओल ।
पारितोषिकें मुदित भूमिपर, त्वरित कहार नराओल ॥४६॥

जरती[1] युवती बान्धव-वनिता, अनुचरीनिकर सादरसनेह ।
चिन्तामणि-कल्पलतासमान, वरवधू परिछि लए गेलि गेह ॥४७॥

पुर-नरनारि निरखितहिँ अद्भुत भार ।
रैभ्यक सुयश गावि नहि पाओल पार ॥४८॥

भूतलक समस्त वस्तुसँ जे, नहि भरए एकवीरक आलय ।
अँटि सकल सकल नहि ततए रैभ्य-नृपसँ प्रेषित सभ भारनिचय[2] ॥४६

पाताक गमनदिनसँ उदास, जे छल हैहय-नृपतिक निवास ;
से भेल बधूसँ नवविलास, मधुलक्ष्मीसँ जनु वन सभास ॥५०॥

एकावलिसय्युत भवन, नृपक निरखि मदकुण्ठ ।
ध्रुव परितेजल अवनितल, रमा सहित वैकुण्ठ ॥५१॥

हँसि देलक शैलसुता-समेत-कैलाशक सुषमा नृपनिकेत ।
पौलोमी-मण्डित-वैजयन्त[3]-गर्वक कएलक अत्यन्त अन्त ॥५२॥

वधूचरण पड़ितहिँ भवन पुनि प्रसन्न भए गेल ।
जे प्रवाससँ भूपतिक अति उदास छल भेल ॥५३॥

पतिक मतिक अनुकूल-उचित-हित-विहित-विचारें,
परिजनमन परितोषि रैभ्यदुहिता व्यवहारें ।
जननी-शिक्षा सुमिरि सनातन मेधा[4]भासुर,
सासु-रहित गृह-सुप्रबन्ध कएलन्हि बसि सासुर ॥५४॥

---

1 वृद्धा । 2 अधिकालङ्कार । 3 इन्द्राणीसँ भूषित इन्द्रप्रासादक ।
4 धारणावती बुद्धि ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



चित्तक अनुपल रहनहु पति-पद-लग्न।
एकावलिक भेल नहि काज अलग्न ॥५५॥

विरचि अनेक-प्रकारक नव उपचार।
अपनहि हाथ निवाहल पति-परिचार[1] ॥५६॥

जनइत बाला सभ राजतन्त्र, दए समय समयपर उचित मन्त्र[2]।
प्रिय भेलि महीपालक नितान्त, उपकारक हो नहि ककर कान्त[3] ॥५७॥

परिहासहुसे नहि कहल फूसि, खेलहुमे नहि जेँ रहलि रूसि।
निद्रहुमे नहि छलि अनवधान, तेँ भेलि पतिक प्राणक|समान ॥५८॥

वाह्यसदृश आभ्यन्तरिक निरखि तनिक सौन्दर्य।
के नहि नृपपरिवारमे पाओल परमाश्चर्य ॥५९॥

एकावलीक अवलोकि समस्तकृत्य-
प्राशस्त्यसँ भवनमध्य रमाक नृत्य।
श्लाघापरायण[4] कुतूहलवश्य भेल,
आनन्द-वारिनिधिमे नृप डूबि गेल ॥६०॥

तीव्र-धीर-धी-बलेँ राजकाज-कौशलेँ।
एकवीर-भामिनी भेलि गेह-स्वामिनी ॥६१॥

ooooOOoooo

तावत दैवसुयोगवश भेल सुरभिसञ्चार।
मुनिहुक मानसपर मदन कएल अपन अधिकार ॥६२॥

अवलोकि विकच पलाश चम्पक वकुल वञ्जुल मल्लिका,
कचनार सीमर कर्णिकार रसाल धव[5] नवमल्लिका।
सुनि काकलीधुनि कोकिलक पुनि परसि मलयसमीरकेँ,
भए मानिनीजन विकल सोपल दयित-कोर शरीरकेँ ॥६३॥

---

1 स्वामीक सेवा। 2 विचार। 3 प्रिय। अर्थान्तरन्यास।
4 प्रशंसामे तत्पर। 5 धावा।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



पावि मनोभव-पावनि युवति वसन्त ।
पाओल नहि मधुपा[1] बनि केलिक अन्त ॥६४॥

ऋतुराज समय नवीन वय पल्लवित-यौवन वल्लभा,
अलिपुञ्ज-गुञ्जित कुञ्जगृह शय्या कुसुम-दल-सौरभा।
क्षितिभार-धारणचतुर मन्त्री पावि ओ नृप भागसँ,
दिनराति घनमद-माति उपवन-केलि कएलन्हि रागसँ ॥६५॥

पावए जतए अचेतनो तरुवर लता विकास ।
रसिक तरुण नृपदम्पतिक उचिते ततए विलास[2] ॥६६॥

नागरहृदय विलोल विहङ्गम, केलिकला-गुण-आगरि ।
अनायास दृढ़-प्रणय-पाशमे, मधुवल बान्हल नागरि ॥६७॥

विरचि केलि मधुमातल नव नव भूरि[3] ।
सरहुक देल मनोरथ युवयुग पूरि ॥६८॥

अभिनवयौवन नागरनागरि, उपवन पवन-उमङ्ग ।
रसमय समय सुरभि लहि सिरजल, अविकल केलितरङ्ग ॥६९॥

निरखि रसालमुकुल अलिधुनि सुनि, दिवस रइनि नहि जानल ।
मदन-समर समरस समरथ बहु, दुहु मधुमातल ठानल ॥७०॥

अति रहस्यमय मन्मथतन्त्रक कएने प्रचुर समीक्षा ।
देल परस्पर दुहु समक्ष जनु रति-पाण्डित्य-परीक्षा ॥७१॥

सगर वसन्त वियोगी, खेपल कानि ।
विविधकेलि सय्योँगी, पुनि नव ठानि ॥७२॥

प्रतिदिन दीनवियोगिजन-पीड़न-अत्याचार ।
ऋतुपति-साम्राज्यक त्वरित कएलक जनु संहार ॥७३॥

---

1 मद्यपायिनी । यमक । 2 अर्थापत्ति । 3 बहुत ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



निदाघ आएल प्रतापशाली, प्रचण्ड भेलाह मरीचिमाली।
विशालता गेल निशाक दूर, रविप्रभा सोखल वारिपूर ।।७४।।

तप–आतप–सन्ताप कहाँ धरि आनक वर्णाव,
सर्वंसहासमेत[1] तप्त छल यदि सब अर्णाव।
दावानलसँ दलित भेल विचलित जनु कानन,
खगमृगनिकर निराश पड़ाएल भयदीनानन ।।७५।।

सुखी जेठ-दुपहरिआ मुनहर पैसि।
दुखी गमाओल भरिआ छाहरि बैसि ।।७६।।

शीतल तरु-छाया हृदयङ्गम, भेल द्विगुण जनु वासर।
महिषी-वृन्द-सङ्ग पल्वलबिच, केलि पसारल कासर[2] ।।७७।।

उपवनमे विकसित भए पाँड़ड़ि, पवन सुवास बनाओल।
विश्वविजय जनु जानि सुकर रति—पति आनन्द मनाओल ।।७८।।

भए तीव्र तरुण-तरणि-प्रताप, कए सगर चराचर विश्व-ताप।
उपजाओल सभको मन विराग, अत्याचारेँ नहि जाग राग[3] ।।७९।।

सन्ताप प्रेयसी-सहित पावि, हैहय उद्यान-तड़ाग आबि।
कएलैन्हि सलिल-लीला-प्रसङ्ग, जनु उन्मद करि करिणीक सङ्ग।।८०।।

करइत मूक-मयूरवृन्दसे मदकेकागम,
हरइत मूसलधार-वृष्टिसँ ग्रीष्मपराक्रम।
पावि कृषक-आह्वान त्वरित-गति सम्भृत-हर्षा,
आबि तुलाएल अवनीतल तदनन्तर वर्षा ।।८१।।

कएलन्हि राग पराग पवन लए, दश दिसि विकच-कदम्बक।
सौरभ रभसेँ लूटि जुटाओल, मालति-कुटज-कदम्बक ।।८२।।

---

1 सभ (दुःख)केँ सहनिहारि पृथ्वी सहित। 2 महिसा। 3 अर्थान्तरन्यास।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



रिमि झिमि बरिसल पनिआँ कए घन सोर ।
हिडुला झूललि धनिआँ चढ़ि पिअकोर ॥८३॥

गगन-उन्नत मेघ-महाघटा, पथिकराजि विलोकि तड़िच्छटा¹।
सुमिरि गेह सनेहमयी-प्रिया, बुझल दुर्घट मृत्यु-प्रतिक्रिया ॥८४॥

जलधर-मलिन गगन-तल दिवस निहारि ।
मान सनातन त्यागल मानिनि हारि ॥८५॥

मेघ यदपि बरिसल गरजि पुरपथ छल अन्हार ।
कएल एकसरि तदपि धनि वल्लभगृह-अभिसार ॥८६॥

उपवन–घनसुषमा लती, अलिकुलसेवित मालती ।
वन–विकसित लखि केतकी, चलल न पथिक निकेत की ? ॥८७॥

गबइत राग मलार तारधुनि गान-उजागरि,
कतहु अगोरल आम काम-ललना-सनि नागरि ।
करइत हृदयोद्गार दार–सहचर नरनाथक,
कतहु अलापल देश क्लेश दए पथिकहिँ गाथक ॥८८॥

वसन्तश्रीकेँ की नहि बुझल शैलूष-कुहना²,
घनोल्लासी वर्षा–विभव लखि हर्षाकुलमना ।
पिकाली-वाणीकेँ रुचिर किछुओ मानल कहाँ,
शिखिश्रेणी-केकाधुनि सुनल एकावलि जहाँ ॥८९॥

आराम-आमक डाढ़ि लागल कनकमय हिण्डोर³मे,
एकावली झूललि घनहि जनु तड़ित वल्लभ-कोरमे ।
गाबि चहुमासा लगाओल आस दुहु दिसि सहचरी,
वर्षा-विहार निहारि कौतुक अतुल पाओल नभचरी ॥९०॥

---

1 गवैआ । 2 नटक माया । 3 मचकी ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



विशद-वसन-शोभा पावि उत्फुल्लकाशेँ
विरचि रुचिर-हास-श्री सुधांशु-प्रकाशेँ ।
मृदुल-वचन-लीला साजि हंसीनिनादेँ,
कएल शरद रागोत्पत्ति पङ्कावसादेँ ॥६१॥

शैल-शिखरसँ भूपर आएल, जनमनरञ्जन खञ्जन ।
पाओल एकावलिक निरञ्जन-नयनहुसँ बहु गञ्जन ॥६२॥

हेमन्त आबि तदनन्तर ऊष्महारी[1],
सीमा बढ़ाओल तमीक युवोपकारी[2] ।
एकान्त गेह बसि पाबि उमङ्ग भारी,
भेलीह केलिरत कान्तक सङ्ग नारी ॥६३॥

तरुणगणक उल्लासक सङ्गहिँ, बाढ़ल रजनी क्रमसँ ।
क्षीण भेल पुनि नलिन सहित दिन, हिमऋतु-वर-विक्रमसँ[3] ॥६४॥

हृदयङ्गम हेमन्त भेल नृप-रैभ्यसुताकेँ,
जतए खेत सौवर्णवर्ण सस्यक परिपाकेँ ।
वितत-सुरत-आयास-तूर्णनाशक मारुत बह,
हिमसहिमेँ पुन सुधासदृश सुखकर हो हुतवह ॥६५॥

भेल समागम शिशिरक धरणीतलमे ।
गेल तीव्रता मिहिरक छाया-जलमे ॥६६॥

जे आन ऋतुमे पूर्ण नहि भए सकल रातिक लाघवेँ,
सम्पन्न सेहओ भेल निधुवन[4] जेँ तकर तत गौरवेँ ।
आनन्ददायक चन्द्रिकासम प्रभा उपजल मिहिरमे,
तेँ रैभ्यदुहिता हैहयक रति गाढ़ बाढ़ल शिशिरमे ॥६७॥

---

1 गर्मीक नाशक । 2 युवा ओ युवतीक उपकारक । 3 सहोक्ति ।
4 सुरत ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri



रूप मदन-अनुरूप, सकल-ऋतु-सेवित उपवन,
वशीभूत-उर्वशीसदृश रमणी, नव यौवन।
शौर्य वैरि-धृति-चौर्य-चतुर, सेना रण-जित्वर,
प्रजा भक्त, आसक्त पावि परिचर्यहिँ परिकर॥
धर्म्म कर्म्ममे निरत रहि, पाखण्डक पथसँ विमुख,
एकवीर सौभाग्य लहि, भोगल सब मानवक सुख॥९८॥

तनिक तनय कृतवीर्य कार्तवीर्यक उत्पादक,
आर्त-विपतिहर-वीर्य शिवातुल-रति-प्रतिपादक।
नगरी माहिष्मती नर्मदा-तटहिँ वसाओल,
वीर दशानन हारि जतए निज नाम हँसाओल॥९९॥

सज्जन-सुख-मज्जन-कुशल, विदलित-खल-दल-दंश।
क्षितितलमे बाढ़ल विमल, अक्षय-हैहय-वंश॥१००॥

कविनाथ-'बदरीनाथ'-विरचित काव्य-नव 'एकावली-
परिणय' सदय अवलोकि होथु प्रसन्न रसिक-जनावली।
सादर समर्पित भेल राधा-माधवक पदपद्ममे,
ई जाओ गाओल मैथिलीभाषीक सबतरि सद्ममे॥१०१॥

इति पञ्चदश सर्ग

तेरह सए सएँतालिसम, बितइत यावन[1]वर्ष।
चैत्र कृष्ण रवि प्रतिपदहिँ, पूरल काव्य सहर्ष॥

इति एकावलीपरिणय मैथिलीमहाकाव्य सम्पूर्ण।

शुभं भूयात्

1 मुहम्मदक समयसँ चलल साल।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi